

TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180720

UNIVERSAL
LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83
V31L

Accession No. P. G.
H 744

Author वसु, जगन्मोहन .

Title लोकवृत्ति.

This book should be returned on or before the date
last marked below.

लोकवृत्ति



Hindi Sec.

OSMANI

Library

10 3 6 4

जगन्मोहन वर्मा

संजीवन-ग्रन्थमाला—रत्न ४

सम्पादक—प्रेमचन्द

लोकवृत्ति

लेखक—

स्व० जगन्मोहन वर्मा

प्रकाशक—

भार्गव-पुस्तकालय,

गायघाट, काशी

भूमिका

आज तीन वर्ष से अधिक हुए कि मित्रवर बाबू जगन्मोहन वर्माजी ने यही “लोकवृत्ति” मुझे दिखाई थी। मुझे उनकी यह कीर्ति देखकर आश्चर्य सा हो गया था। किसे आशा हो सकती थी कि जिसने अपना जीवन इतिहास, खोज और कोष संग्रह जैसे गम्भीर कार्यों में व्यतीत किया हो वह उपन्यास लिखने का साहस कर सकता है। पर जब उपन्यास पढ़ा तो मालूम हो गया कि इस उपन्यास में अपने जीवन के अनुभव जितनी सफलता से उन्होंने दिखाए और किसी रूप में न दिखा सकते थे। इस उपन्यास में आपको रंगीन बातें बहुत न मिलेंगी, सरसता का प्रायः अभाव दिखाई देगा; पर इसमें सन्देह नहीं कि यह एक ऐसे जीवन का साररूप है जिसने समाज के भिन्न-भिन्न अङ्गों से हिलने-मिलने का अवसर पाया और उस अवसर से यथेष्ट लाभ उठाया। मिशनरी लेडियो के हथकण्डे, जमींदारों की चालबाज़ियाँ और अमलों की कुलता के सजीव चित्र यहाँ दिखाई देंगे। भिन्नकूलाल, दुर्गा-प्रसाद, पंडित गंगाधर आदि चरित्र कोरी कल्पनाएँ नहीं हैं। दूषित शिक्षा से कन्याओं की क्या दशा हो जाती है इसे आप भिन्नकूलाल की पुत्री के जीवन में देख सकते हैं। विलियम ग्रीव अध्यवसाय और सदुद्योग का बहुत ही जीता-जागता

चित्र है। एक दरिद्र, अनाथ बालक, अपमान पूर्ण ताड़ना पाकर अपने जीवन को कितना उन्नत बना सकता है इसका यह उज्ज्वल उदाहरण है। भाषा आदि से अन्त तक बहुत ही साफ, सुबोध और सरल है। स्वार्थ के बश होकर पिता तक अपनी दुधमुँही बालिकाओं के साथ कैसा पैशाचिक अत्याचार करते हैं इसका आपको यहाँ बहुत ही करुणा-जनक वर्णन मिलेगा। दुख यही है कि यह पुस्तक उस समय प्रकाशित हो रही है जब वर्माजी इस संसार में नहीं हैं। हमें आशा है कि हिन्दी के प्रेमी पाठक इस रचना का समुचित आदर करके वर्माजी की आत्मा को प्रसन्न करेंगे।

प्रेमचन्द

लेखक की स्मृति में

स्वर्गीय बाबू जगन्मोहनवर्माजी का जन्म, विक्रम-संवत् १९१७में, आश्विन-कृष्ण चतुर्दशी को, बस्ती-जिले की डुमरिया-गंज-तहसील के अंतर्गत देवीपार-गाँव में, हुआ था। देवीपार में कायस्थों की पुरानी बस्ती है। वर्माजी के पूर्वजों ने प्रायः दो-ढाई सौ वर्ष पहले इसे बसाया था। प्राचीन समय में यहाँ एक छोटा-सा क़िला था, जिसके खंडहर अभी तक वर्तमान हैं।

आपके पिता श्रीयुक्त ठाकुर ब्रजराजसिंह घर ही पर रहकर अपनी ज़मींदारी की देख-रेख करते थे। आपकी माता नेपाल राज्य के एक उच्च पदाधिकारी का कन्या थीं। आपके पिता बड़े विद्या-व्यसनी और अरबी फ़ारसी के अच्छे ज्ञाता थे। जिस युग में आपका जन्म हुआ, उस समय आपके कुटुम्ब में अंगरेज़ी पढ़ने की प्रथा न थी; फ़ारसी और अरबी तक शिक्षा समाप्त हो जाती थी। आप पाँच वर्ष की अवस्था में फ़ारसी और उर्दू पढ़ने के लिए मदरसे में बिठाए गए। १६ वर्ष की अवस्था तक आपको घर ही पर फ़ारसी और उर्दू की शिक्षा मिली। उसी अवस्था में आपका विवाह बस्ती-निवासी लाला अयोध्याप्रसादजी की पुत्री से हुआ। अयोध्याप्रसादजी

डिपुटी इंस्पेक्टर आफ् स्कूल थे। आपने वर्माजी का विद्या-
नुराग देख उन्हें अपने साथ रखकर पढ़ाना निश्चय किया।
वर्माजी बस्ती में उन्हा के साथ रहकर अँगरेज़ी, गणित तथा
हिंदी की शिक्षा पाने लगे। परिश्रम और प्रतिभा के बल से
आपने चार ही वर्ष में एंट्रेंस पास कर लिया। फिर फैज़ाबाद
के कालेज में भरती हुए। यहीं आपको संस्कृत पढ़ने की चाट
लगी। पहले आपने वहाँ के पांडितों से वाल्मीकीय रामायण
और अष्टाध्यायी पढ़ी। इसके बाद आपको संस्कृत-साहित्य
के अध्ययन में ऐसा आनन्द आने लगा कि आपने अँगरेज़ी
पढ़ना छोड़ दिया, और स्वतन्त्र रूप से संस्कृत पढ़ना शुरू
किया। वर्माजी को अपने पिता और श्वशुर से विद्याध्ययन
में बराबर सहायता मिलती रही।

कालेज छोड़ने के बाद आपने उत्तर-भारत के भिन्न-भिन्न
स्थानों में भ्रमण किया। इस यात्रा में आप व्याकरण, निरुक्त,
न्यायदर्शन, वेदांत, उपनिषद्, संहिता, प्राकृत, पाली, बौद्ध-
साहित्य तथा भिन्न-भिन्न प्रांतीय भाषाओं का अध्ययन करते
रहे। बीच-बीच में आप कई जगह सरकारी और गैर सरकारी
नौकरियाँ भी करते रहे। आप ऐसे स्वतंत्र विचार के थे कि
कहीं अधिक दिनों तक नौकरी न कर सके।

१९०९ में काशी की नागरी प्रचारिणी-सभा ने कोष का
कार्यारंभ किया। तब आप भी उसके संपादन-विभाग में
सम्मिलित हुए। कोष का दफ़्तर जब काश्मीर चला गया,

तब आप वहाँ न गए । जब सभा ने काशी में कोष का काम फिर शुरू किया, तब आप अपनी पहली जगह पर काम करने लगे, और सन् १९१७ तक करते रहे । इसके बाद एक वर्ष तक प्रयाग के इंडियन-प्रेस में रहकर आपने तुलसीदास के ग्रन्थों की खोज की । अंत को आपने, स्वतंत्र रूप से जीविका-निर्वाह करते हुए, काशी में रहना निश्चित किया । इसी विचार से काशी में एक मकान भी बनवा लिया था ।

सन् १९२२ में आपके पिता का देहांत हुआ । उनकी मृत्यु से आप बड़े दुखी हुए । परिवार का सारा भार आप ही पर आ पड़ा । चिंताओं के कारण आप बीमार रहने लगे । पहले आप कभी बीमार नहीं पड़ते थे । धीरे-धीरे स्वास्थ्य बिगड़ने लगा । आप जीवन से हताश होने लगे । इस वर्ष, गत मार्च में अपने चाचा की मृत्यु का समाचार सुनकर आपने पढ़ने के खड्ग-विलास प्रेस से अपने शोक-पूर्ण पत्र में लिखा था—“चाचा भी चल बसे, अब मेरी पारी है । मैं भी अपने अंतिम दिन गिन रहा हूँ ।” मंदारिण के कारण क्रमशः आपका शरीर क्षीण होने लगा । सब दवाएँ व्यर्थ हुईं । ज्वर भी आने लगा । एकाएक आँतों में फोड़ा भी हो गया । अवस्था विशेष शोचनीय हो गई । आप बस्ती के अस्पताल में पहुँचाए गए । डाक्टर ने कोरा जवाब दे दिया । गत ११ अक्टोबर को आप बहुत कमजोर ही गए । करबट बदलना भी कठिन था ! पर आपका चित्त प्रसन्न था, स्मरण-शक्ति भी ठीक थी । उसी दिन,

लगभग १ बजे दिन को आपके चेहरे की आकृति बदलने लगी । आधे ही घंटे के बाद आप इस लोक से बिदा हो गए ।

वर्माजी का स्वभाव नड़ा ही सरल था । अहंकार का लेश भी आप में न था । पर थे बड़े आत्माभिमानी और स्वतंत्रता-प्रेमी । साधारण से साधारण मनुष्य से भी मित्रों का-सा व्यवहार रखते थे । आत्मगौरव की रक्षा के लिए बड़े से बड़े लोगों को भी फटकार दिया करते थे । जब वस्ती की कलेक्टर की कचहरी में काम करते थे, तब एक दिन कलेक्टर ने आपको ऐसे समय बुला भेजा, जो दफ्तर का समय न था । आपने उस समय जाने से साफ़ इनकार कर दिया । दूसरे दिन दफ्तर में पहुँचने पर कलेक्टर ने उस दिन न आने का कारण पूछा । आप ने निर्भीकता से उत्तर दिया—“मैं १० बजे से ४ बजे तक का नाँकर हूँ, चौबासों घंटे का नहीं ।” इतना कहकर आपने नाँकरा छोड़ दी ।

बनावटीपन आपमें छू नहीं गया था । सादगी आपको बहुत पसंद थी । आप बड़े स्पष्टवक्ता थे । मुँह-देखी बातें करना आपने सीखा ही न था । इसीलिये कुछ लोग आपसे चिढ़े रहते थे ! धार्मिक विचार आपके बड़े स्वतंत्र थे । वेदों को आप अगौरेय नहीं, एक ऐतिहासिक ग्रंथ मानते थे । पर स्वतंत्र विचार के होने पर भी आप कहा करते थे—मनुष्य के विचार चाहे जितने स्वतंत्र हों, पर वह जिस समाज में रहना

चाहता है, उसकी सभी बातें उसे माननी चाहिए । आचार-विचार में आप एक कट्टर हिंदू थे ।

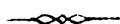
साहित्य-संवा में तो आपने अपना सारा जीवन ही बिता दिया । आप बड़े उद्भट अध्ययनशील भी थे । मृत्यु के कुछ दिनों पहले आपने तंत्रों के अध्ययन का निश्चय किया था । भिन्न-भिन्न भाषाओं से आपको बड़ा प्रेम था । बंगला, गुजराती, मराठी आदि तो आप जानते ही थे, पर योरुपियन भाषाओं के भी अनुरागी थे । अभी कुछ ही दिन हुए, डाक्टर गणेशप्रसाद एम० ए०, डी० एस्-सी० से आप जर्मन-भाषा सीख रहे थे । कुछ दिनों तक एक चीनी साधु को अपने यहाँ रखकर आपने चीनी-भाषा सीखी थी । ज़न्द-भाषा में भी आप अच्छी योग्यता रखते थे । आप वैज्ञानिक दृष्टि से भाषाओं का अध्ययन करते थे । भाषा-विज्ञान पर आपने एक पुस्तक लिखना भी शुरू किया था । उसका कुछ अंश पूर्ण हो चुका है; पर पुस्तक अभी अप्रकाशित ही है ।

आपकी पुस्तकें अधिकतर काशी की नागरीप्रचारिणीसभा ने छपाई हैं । समय समय पर पत्र-पत्रिकाओं में आपके अनेक लेख निकला करते थे । लेख अधिकतर स्वतंत्र, मौलिक और खोज-संबंधी होते थे । इधर कुछ दिनों से आप काव्य-साहित्य पर भी लिखने लगे थे । आपकी प्रवृत्ति शुष्क विषयों की ओर से हटकर धीरे-धीरे काव्य इत्यादि सरस विषयों की ओर मुकने लगी थी । १९२३ में आपने यह उपन्यास लिख डाला । मरते समय

तक आप चारपाई पर लेटे-लेटे तुकबंदियाँ किया करते थे । इधर आप भारत का इतिहास लिख रहे थे । ईश्वरेच्छा बली-यसी; वास्तव में वर्माजी ने हिन्दी-साहित्य की प्रशंसनीय सेवा की है । उनके देहावसान से हिन्दी-संसार की एक बहुमूल्य वस्तु नष्ट हो गई । आप-जैसे सुयोग्य सुलेखक की मृत्यु से हिन्दी-साहित्य की जो हानि हुई है, वह शीघ्र पूरी न हो सकेगी । हमें आशा है कि हिन्दी के प्रेमी पाठक वर्माजी की इस अन्तिम कीर्ति का समुचित आदर करेंगे । यह भी विचारणीय है कि यावज्जीवन ऐतिहासिक विषयों पर लिखने के बाद जीवन के अन्तिम दिनों में वर्माजी ने यह उपन्यास क्यों लिखा । इसका मुख्य कारण यही जान पड़ता है कि वर्माजी का व्यक्तित्व—उनके सामाजिक, आर्थिक और नैतिक अनुभव—और किसी रीति से इतनी उत्तमता से व्यक्त नहीं किए जा सकते थे ।



लोकवृत्ति



पहला परिच्छेद



तीसवीं शताब्दी के अंत की बात है कि गोरखपुर में मुंशी दुर्गाप्रसाद जजी के पेशकार थे। आपका नगर-भर में मान था। बड़े सज्जन थे। बाप-दादों की पुश्तैनी ज़मींदारी की आमदनी तो थी ही पर आपने नौकरी में भी हजारों रुपया पैदा किया था। विद्या तो उतनी न थी पर हिंदू-धर्म के कट्टर पक्षपाती और बड़े ही आचारवान थे। बाजार की चीजें कभी न खाने और नित्य अपने हाथ से पार्थिव बनाकर खाने। थे तो जानि के कायस्थ, पर कभी मदिरा-मांस को हाथ से भी न छूने, और न लहसुन-प्याज को घर में आने देने। इतने कट्टर होने पर भी आपके विचार बड़े उदार थे। बाल-विवाह के घोर विरोधी थे और सन् १८९६ ई० के

कायस्थ-कानफरेंस में जब आप सभापति हुए थे तो कायस्थों की अन्य जातियों में सहभोज और विवाह के प्रस्ताव को उपस्थित करते हुए आपने कहा था कि सहभोज और विवाह का बारहों कायस्थों में होना निहायत जरूरी है। पर हमें अपना दायरा इतने ही पर महदूद न कर देना चाहिए; वक्त और मौका आने पर हमें बंगाल, उड़ीसा, मद्रास और बंबई सूबों के कायस्थों, यहाँ तक कि प्रभु कायस्थों तक के साथ सहभोज करने, और शादी-व्याह का नाता जोड़कर अपनी जाति में मिलाने के लिए तैयार रहना चाहिए। आपने यह भी कहा था कि मुख्तलिफ मुल्कों में जाकर आबाद होने और आपस में मिलने-जुलने का मौका न मिलने और आमदोरफ्त का माकूल ज़रिया न होने के बाविस मुख्तलिफ फिरके हो गये, उनके रहन-सहन, रस्मोरिवाज आचार-व्यवहार में अन्तर पड़ गया है, पर इससे क्या हम अपने भाई को गले न लगायें? हम सब एक कौम के लोग हैं। अब जमाना पलट गया। दो दिन में इंसान हिन्दुस्तान के इस किनारे से उस किनारे तक जा सकता है। फिर कोई वजह नहीं कि हम सब बिछुड़े भाई आपस में न मिलें और गैर कौम की तरह एक दूसरे से बरताव करें। इससे मुंशीजी की उदार हृदयता का पता चलता है। आप आर्यसमाजी तो नहीं थे पर आपने अपनी लड़की का विवाह सोलह वर्ष की उम्र में किया था और सनातनधर्मी पंडितों के कई बार कहने पर स्पष्ट कह दिया था

कि महाराज पराशर-स्मृति का यह वाक्य कि “अष्टवर्षा भवे-
द्रौगो....” उस समय के लिए था जब हिंदुओं की अविवाहित
ललनाओं पर मुसलमान अत्याचार करते थे। इस समय के
लिए नहीं है। धर्म देश के अनुसार हुआ करता है। उस
समय के लिए वही धर्म था, इस समय के लिए यही धर्म है कि
कन्याओं का विवाह पंद्रह-सोलह वर्ष की अवस्था में और
बालकों का चौबीस-पच्चीस वर्ष की अवस्था में किया जाय।

यद्यपि आपका घर गोरखपुर से तेरह-चौदह कोस पर एक
गाँव में था, पर बीस वरस तक गोरखपुर में रहने से आपने
अपना निज का घर बना लिया था। मकान पक्का था और
कई तले का, सामने एक सुहावना बाग था जिसमें भाँति भाँति
के फल, फूल और मेवों के वृक्ष थे—इतना बड़ा कि पंद्रह माली
बाग में काम करते, शाक-तरकारी तो इतनी अनोखी और
अधिक उपजती कि रोज रईसों और सरकारी मुलाजिमों के यहाँ
डालियाँ जातीं और मुहल्ले-भर में बाँटी जाती थीं। बाग के बीच
में एक मनोहर तालाब था, जिसके चारों ओर पक्का पत्थर
का घाट बँधा था। तालाब के पश्चिम तरफ दो जुड़वाँ मंदिर
बने थे जिनके सामने सुंदर ‘जगमोहन’ थे और एक विशाल
चबूतरा कोई सौ गज लंबा-चौड़ा बना था। दायें ओर के
मंदिर में शिवजी की और बायें में लक्ष्मीनारायण की प्रतिमा
स्थापित थी। दोनों मंदिर के पीछे उन दोनों से लगा हुआ
एक और मंदिर था जिसमें से होकर दोनों में जाने का रास्ता

था । यह उत्तर-दक्षिण अधिक लंबा था । पूर्व में इसके दो द्वार थे जिनसे शिव और लक्ष्मीनारायण के मंदिर में आ-जा सकते थे और पश्चिम में एक द्वार था । उत्तर-दक्षिण की दीवार में पत्थर के सुन्दर जाल की टट्टियाँ लगी थीं जिनसे होकर उजाला और हवा दोनों आते थे । मंदिर के बीच में एक कुण्ड दो-ढाई हाथ लंबा-चौड़ा और इतना ही गहरा था जिसमें वेद-विधि से अग्नि की संस्थापना की गई थी । मंदिर के दक्षिण और उत्तर बीस बीस गज पर दो पक्की बारहदरियाँ बनी थीं जिनमें दक्षिण की बारहदरी में तो नित्य पुराणादि की कथा होती थी और उत्तरवाली में आये-गये साधु-अभ्यागत ठहरते थे । यों तो मंदिरों में पूजा करने के लिए कई परिणित नियत थे पर मुंशीजी सायं-प्रातः स्वयं स्नानकर मंदिर में जाते और मध्योपासन, अग्निहात्र कर अपने हाथों से पूजा करते थे; फिर ब्राह्मणों का चरणोदक लेकर तब अन्न ग्रहण करते थे ।

मुंशीजी का कुटुम्ब संयुक्त परिवार था और इनके चचा, चचेरे भाई आदि सब एक ही घर में रहते थे पर गोरखपुर में मुंशीजीकी गृहिणी रहती थी और मुंशीजी के लड़के और कुटुम्ब के अन्य लड़के जो गोरखपुर के स्कूलों में अँगरेजी शिक्षा ग्रहण करते थे मुंशीजी के साथ रहते थे । सब छोटे-बड़े मिल-कर स्कूल में पढ़नेवाले बालकों की संख्या कोई डेढ़ दर्जन से ऊपर थी । इतने लोगों के लिए यदि कोई और होता तो रसो-इयाँ रखता पर मुंशीजी की स्त्री सबके लिए अपने हाथ से

खाना पकातीं और सब गृह-कार्य करती थीं । शहर में अन्य अमलों के घर जो छोटे छोटे थे, मिसिराइनें भोजन बनाने के लिए नौकर थीं पर मुंशियाइन को दूसरे के हाथ का खाना पसंद नहीं था । वह प्रकृति से ही बड़ी सफाई-पसंद थीं और नौकर के माँजे बरतन को सुई से खोदतीं और अपने हाथ से फिर साफ करके पकाती थीं । अधिक काम करने से उनका स्वभाव बड़ा चिड़चिड़ा हो गया था और बात बात पर खुचुर निकालतीं और आसमान सिर पर उठाती थीं । यद्यपि वह नौकरों को खाने-कपड़े आदि से संतुष्ट रखती थीं पर उनके चिड़चिड़ाने और खुचुर निकालने के कारण कोई नौकर सालछः महीने से अधिक नहीं ठहरता था और महीनों क्या बरसों मुंशियाइन को अपने हाथ से सब काम करने पड़ते थे । पर अन्य रे साहस ! सब काम अपने हाथ से करते हुए कभी रोटी में एक मिनट की देरी नहीं होने देती थीं । झुझकती थीं, पटकती थीं, पर क्या मजाल कि गृह-कार्य में तनिक भी असावधानी या कसर रह जाय ।

मुंशीजी का ज्येष्ठ पुत्र सदानंद इंद्रौंस पास हो गया था । उस समय गोरखपुर में एफ० ए० की पढ़ाई नहीं होती थी । इस लिए इलाहाबाद के म्योर सेंट्रल कालिज में पढ़ता था और सेंट्रल-इयर में था । वहाँ वह वांडिङ्गहाउस में ठहरा था पर मेस में नहीं था, अपने हाथ से भोजन बनाता था । बोर्डिङ्गवालों ने उसके इस आचार को देखकर 'आचारीजी'

इसका नाम रख लिया था और अनेक प्रकार से उसे चिढ़ाया करते । कोई स्लीपर पहने उसके चौके को काँड़ आता, कोई किसी वहाने से उसे खाना बनाते समय छू आता, कोई चौके में कागज़ उड़ा देता । अस्तु, नित्य कुछ न कुछ उपद्रव मचाते रहते थे । पर धन्य रे आचारप्रियता ! वह बिना जीभ हिलाये अपना आचार निभाता और अपने पाठ पढ़ता था । धारणा-शक्ति ऐसी थी कि स्वयं-पाक के आचार को निभाते, छुआछूत में बहुत-सा समय खोते हुए भी वह अपने क्लास में सबसे अच्छा रहता और फर्स्ट-इयर की परीक्षा में सारे कालिज में अव्वल हुआ था । लड़के कहा करते थे, भाई सदानंद की तरह हमारी भी धारणा होती तो हम भी न अपने हाथ से पकाकर खाते, मेस में खाने पर तो यथेच्छ पढ़ने के लिए समय ही नहीं मिलता, इतना पढ़ने पर तो मुश्किल से पास हो जाते हैं । अपने हाथ से भोजन पकायें तो एक एक वर्ष के लिए चार चार वर्ष लगे और बुढ़ापे तक भी बी० ए० न हो पायेंगे ।

सदानंद की धारणा-शक्ति और सुशीलता की प्रशंसा सब करते थे । इंटर की परीक्षा में वह प्रांत-भर में पहला हुआ था और सरकार की ओर से उसे स्कालरशिप मिला था । पर सदानंद अपने साथ एक गरीब ब्राह्मण सहपाठी को इलाहाबाद पढ़ने के लिए ले गया था और अपना स्कालरशिप लेकर उसे दे देता था । इतना ही नहीं; जब मंशीजी उसे खरचा भेजते तो उसमें से बचा-खुचाकर अपने साथियों की सहायता किया

करता था । एक बार उसके एक साथी के घर से रुपया नहीं पहुँचा और फीस दाखिल करने का अंतिम दिन आ गया, बेचारे ने अपने कई साथियों से उधार माँगा पर किसी से न मिला । उसने प्रिंसिपल को मुहलत के लिए दरखास्त दी और बड़ी कठिनाई से प्रिंसिपल ने एक सप्ताह की मुहलत दी; पर फिर भी रुपया न आया तो सदानंद अंतिम दिन चुपके से गया और हेडक्लर्क को उसकी फीस दे आया । लोगों ने समझा कि उसका नाम कट गया पर दूसरे मास में उसकी हाजिरी पुकारी गई तो सबको और स्वयं उसे बड़ा अचंभा हुआ । समझा कि नाम कट गया है, पर हाजिरी के रजिस्टर में क्लर्क की भूल से पड़ा रह गया है । कई दिन बाद जब रुपया आया तो वह नाम-लिखाई और फीस लेकर हेडक्लर्क के पास गया और अपना नाम फिर लिखने के लिए कहा । हेडक्लर्क ने उससे कहा, क्या पागल हो गया है ? फीस एक बार दाखिल करके दुबारा देना चाहता है । याद नहीं है कि तुमने अपनी फीस दाखिल कर दी है । बेचारा भौंचक होकर रह गया और कहने लगा—नहीं, मैंने मुहलत ली थी पर मुहलत के भीतर रुपया नहीं आया, फीस अदा न करने से नाम कट गया होगा, कृपा कर नाम-लिखाई और फीस लेकर नाम दर्ज कर लीजिए । इस पर हेडक्लर्क ने रसीद-वही उठाकर दिखलाई और कहा—यह देखो तुम्हारी फीस फलाँ तारीख को दाखिल हो गई है और रसीद भी कटकर रुपया लानेवाले को दे दी गई है । वह बेचारा बार बार यही

कहता था कि मैंने फीस नहीं अदा की है, आपने दूसरे की फीस मेरे नाम दाखिल कर ली है पर हेडक्लर्क उसे पागल बताता था और कहता था कि होश की दवा करो। अंत को उसने कहा कि अच्छा यह तो बताइए कि आपने रसीद किसे दिया ? तब हेडक्लर्क ने रसीद की पीठ पर का हस्ताक्षर देखकर कहा—सदानंद को। वह वहाँ से अपने क्लास में आया और कालिज बंद होने पर सदानंद को रुपया देने लगा पर सदानंद ने यह कहकर अस्वीकार किया कि भाई, जब मुझे काम होगा ले लूँगा और जब जब वह देने लगा यही कहकर टालता रहा कि आफत क्या पड़ी है, रखिए, जब मुझे आवश्यकता पड़ेगी मैं आप माँग लूँगा।

संक्षेपतः भगवान् ने दुर्गाप्रसाद को दूध-पूत धन-लक्ष्मी सब कुछ दे रखी थी और किसी बात की उनको कमी न थी।

दूसरा परिच्छेद



नकुलाल एक काइयाँ, छुटा हुआ शोहदा। बाप वचपन ही में मर गया था। पढ़ने को तो वह लखनऊ के मिशन स्कूल के दर्जा तीन में जिसमें अब दर्जा ७ कहते हैं पढ़ता था पर आता-जाता खाक-पत्थर भी न था। इसके दो और भाई थे जिनमें एक ग्रेजुएट हो गया था और दूसरा बी० ए० में पढ़ता था।

बाप की इच्छा थी कि भिनकू भी अच्छी शिक्षा पावे पर भिनकू का साथ लखनऊ के आवागार्द लड़कों का पड़ गया और कम-उम्र में ही सिगरेट पीना, पान खाना, दिन के दिन गोमती के किनारे मछली के शिकार या बटेरवाजी और बुलबुल लड़ाने में बिताना उसका काम था। घर से तो चलता स्कूल को, पर राह में यारों के साथ सैर-तमाशे में बिताता। बाप ने कई बार डाँट-डपट की पर कुछ असर न हुआ। निदान एक आदमी तैनात कर दिया कि उसे अपने साथ स्कूल ले जाया करे। फिर भी जब कभी नवाबजादों से आँखें चार हो जातीं तो वह उसे भाँसे देकर गली काटकर निकल जाता और बटेरवाजी करता या मछली के शिकार के लिए निकल जाता। बाप के डर से अपनी बुलबुलों और बटेरों और बंसी को भिनकू अपने मित्रों ही के घर पर रखता था और उनके खाने-पीने के लिए अपने एक खिदमतगार को चुपके से वह दोनों समय भेजा करता था। बाप का मरना था कि भिनकू खुले खजाने आवागार्दी करने लगा। सवरे का निकला बारह बारह बजे रात तक चक्कर लगाकर घर लौटता। स्कूल से भी गैरहाजिरी में नाम कट गया। भाइयों ने डाँट-डपटकर उसे स्कूल भेजना चाहा पर उसने उनका मुकाबिला किया और तुर्की-ब-तुर्की जवाब देना शुरू किया। जब तक माँ जीती रही वह उसके छिद्रों को ढाँपती रही पर दो-चार बरस में वह भी दुलक गई। इस बीच में भिनकू ने घर का बहुत कुछ माल-असबाब चुपके चुपके बेच-

लोकवृत्ति

गर बटेरवाजी में उड़ाया । माँ के सारे गहने एक एक करके बुराकर बेच उड़ाया । मरते समय बेचारी बुढ़िया के शरीर पर लाख का एक छल्ला भी न बचा था ।

भिनकू के दोनों भाइयों में बड़ा तो वकालत करता था और भिला कलकटरी में क्लर्क था । उन दोनों ने जब देखा कि भिनकू किसी तरह सुधर नहीं सकता तो माँ के मरने पर उसे अलग कर दिया । समझे, कुटुम्ब का भार पड़ने से कुछ आटे-दाल आभाव मालूम होगा और सुधर जायगा । भिनकू का ब्याह पेटा के समय में हो गया था, और दो सन्तान भी थी । एक लड़की, दूसरा लड़का । अब भिनकू के सिर तीनों के पालन-पोषण का भार पड़ा, पर उसकी दशा सुधरने की जगह और बिगड़ती गई । उसने अपनी लत न छोड़ी, न छोड़ी । घर में उपवास हो या कोई मरे पर भिनकू को अपने यारों के साथ सैर-तमाशे से काम । बीबी रात रात खाना रक्खे प्रगोरा करती, कभी भिनकू तीन बजे आता, कभी चार बजे । बीबी के सारे गहने बेचकर बटेरवाजी, बुलबुलवाजी, शराब-हवाव में उड़ा गया । दो दो किता घर बेचकर दो ही बरस में नाफ कर गया । उपवास की नौबत आई । कई दिन विना पन्न-पानी के बीत गया । यार-दोस्त सबों ने साथ छोड़ दिया । जाने दाने को मुहताज हो गया । भाई की मामता बड़ी होती है । यह दशा देख दोनों भाइयोंने दस दस रुपये उसकी बीबी के पास भेज दिये और कहला दी कि बीस रुपये में

महीने-भर का प्रबंध कर ले । उस बेचारी ने उसी बीस रुपये से खाने-पीने का सामान मँगवाया, तब व्रत-पारण किया । तब से दोनों भाई स्त्री के पास दस दस रुपया प्रति मास भेजते और किसी न किसी प्रकार से वह बेचारी निर्वाह करती । पर इतने पर भी भिनकू का मिजाज ठिकाने न हुआ । खाने के समय रोज थाली पटकता और यह नहीं, वह नहीं कहकर बीबी पर गुस्सा उतारता । बीबी बेचारी चुप रह जाती । बहुत तंग होती तो कहती कि लाओ, मुझे बनाने में क्या पड़ी है, कमा लाओ ।

भिनकू की शिक्षा जैसी थी, वैसी थी ही । दो सतर भी किसी भाषा में शुद्ध नहीं लिख सकता था । बोलता तो एक वाक्य में एक शब्द अँगरेजी और एक फारसी अवश्य लाता था । हाँ, अँगरेजी की लिखाई सुन्दर थी, नकल कर सकता था, पर मल्लिका स्थाने मल्लिका । उसके बड़े भाई ने बड़ी कोशिश करके उसे कलकटरी में टेम्पोररी कापिस्ट का पद दिला दिया । काम अधिक होने के कारण वह उस पद पर पहले तो तीन मास के लिए नियत हुआ था पर रहते रहते दो बरस तक रह गया । वेतन तो उसे पन्द्रह ही मिलते थे पर भिनकू दस-बारह गंडे रोज बना लेता था । जितना दूसरे दो घंटे में लिखते भिनकू एक ही घंटे में लिख डालता था । भिनकू को अफसरों की खुशामद भी खूब आती थी । दो-तीन घंटे में रोजाना का काम कर, बैठा उनकी हाँ में हाँ मिलाया करता था । एक बार

किसी ने एक मुकद्दमे के फैसले की नकल की दरखास्त दी। फैसला था '१० सफ़े का। सायल ने डवल फीस दाखिल की और भिनकूलाल की मुट्ठी गरम कर दी। भिनकूलाल ने उससे कहा—यों तो तुमको नकल तीसरे दिन मिलेगी पर यदि तुम डिण्टी साहब से उज्र कर आओ तो आज ही दे दूँगा। सायल नकल के डिण्टी के इजलास में गया और उज्र किया कि काम जरूरी है, नकल आज ही दिला दी जाय। डिण्टी कलक्टर ने सब नकलनवीसों को बुलाकर कहा कि नकल आज ही तैयार कर दो, पर सबों ने यही कहा कि तीनदिन का काम है, कैसे एक दिन में हो सकेगा; और कुछ यही थोड़ा ही है, एरियर काम भी तो करना है। पर भिनकूलाल ने कहा कि काम तो बहुत है पर मैं इसे साढ़े पाँच बजे तक तैयार कर दूँगा। और ऐसा ही किया भी। इस पर सब लोगों ने दाँतों तले उँगलियाँ दबाई और भिनकूलाल का वेतन २०) कर दिया गया। फिर रिपोर्ट कर उसे टाइपराइटरी सीखने के लिए भेज दिया गया।

भिनकूलाल टाइपराइटरी सीखकर अपने काम पर लौटा। कुछ ही दिन हुए थे कि वही डिण्टी साहब जिन्होंने उसे टाइपराइटरी सीखने के लिए भेजवाया था, बदलकर गोरखपुर आये। गोरखपुर की कमिश्नरी मुकद्दमेवाजी के लिए मशहूर है। वहाँ के अमले बिना भेंट लिये बात नहीं करते। कचहरी क्या है, कलश की पूजा है, कि जगह जगह अक्षत पूँगी-फल का चढ़ावा। कोई ऐसा मुहकमा नहीं जहाँ रिशवत का

बाजार गरम न हो। वहाँ नकल के मुहकमे में काम इतना बढ़ गया था कि पचास पचास नकलनवीस काम नहीं संभाल सकते थे। दोचंद फ़ीसवाले भी हफ़्तों भेलते थे और बड़ी पूजा की तो सातवें दिन नकल मिल गई। वहाँ काम की अधिकता देख एक बार डिप्टी साहब ने नकल के डिप्टी से कहा कि जब काम इतना अधिक है तो आप टाइपराइटर और टाइपिस्ट के लिए रिपोर्ट क्यों नहीं करते? नकल के डिप्टी को डिप्टी साहब की बात बहुत पसंद आई, तुरंत एक टाइपराइटर और ५० के टाइपिस्ट के लिए रिपोर्ट कर दी। मंजूरी आ जाने पर आपने टाइपराइटर तो मँगा लिया पर टाइप करना वहाँ कोई नकलनवीस जानता ही न था। निदान आपने अपने डिप्टी साहब से कहा कि जनाब आपके कहने से टाइपराइटर तो मँगा लिया पर टाइपिस्ट नहीं मिलते। कोई नकल के मुहकमे में टाइप नहीं जानना है। इस पर डिप्टी साहब ने भिनकूलाल की तक़्करी का परवाना लिखवाकर भेजवा दिया और भिनकूलाल को एक निज की चिट्ठी लिखी कि छः महीने की छुट्टी लेकर चले आओ, मन पड़े तो फिर इस्तीफ़ा भेज देना। भिनकू ने डिप्टी साहब की चिट्ठी पाते ही छः महीने की छुट्टी के लिए दरखास्त दे दी और बोरिया-वधना बाँध गोरखपुर पहुँचा।

गोरखपुर में आकर दो-एक दिन तो डिप्टी साहब के बँगले ही पर ठहरा रहा पर फिर उनके अरदली की मारफत

शहर में एक साफ़-सुथरा मकान देखकर १०) किराये पर लिया और उसमें आकर रहने लगा। गोरखपुर में उन दिनों नकल को दरखास्तों की भरमार थी। भिनकूलाल चार-पाँच घंटे नित्य काम करता और नकल चाहनेवालों से दस-पाँच रुपये रोज बना लेता। लड़कों को तो भिनकूलाल अपने भाइयों के मत्थे छोड़ आया था, यहाँ आकर उनको बिलकुल भूल गया और सारी आमदनी अपने ऐशोआराम में उड़ाने लगा। दो दो नौकर, एक मिसरानी, इस पर दो-एक बोतल शराब, ऊपर से मछली-गोश्त। कभी यार लोग आ गये तो तबला ठनक रहा है, वस इसी में सारी आमदनी खाहा! घर की फिक्र नहीं। इस तरह दो-चार महीने बीत गये। पहले तो घर चिट्ठी भी कभी कभी भेजता था पर अब पत्र भी भेजना बंद कर दिया। जब बड़े दिन की लुट्टियों में वह घर न गया तो भाइयों ने लाचार होकर उसके बीबी-बच्चों को मँझले के साथ गोरखपुर भेज दिया।

बीबी क्या आई, भिनकू के सिर बला आई। सात-आठ दिन तक जब तक भाई रहे, भिनकू सबकी खानिर करता रहा; पर भाई का जाना था किफिर वैताल उसी डार। घर के खर्च में तो कुछ कमी न की हाँ बीबी के बहुत कहने-सुनने पर मिसरानी को अलग कर दिया। बीबी से कहा कि लो यही ५०) मेरा वेतन है, इसी में सब निबाहो, मैं घर का भाड़ा और खिदमत-गारों की तनखाह अपनी वालाई आमदनी से दे लूँगा।

थोड़े ही दिना में भिनकूलाल अपने मिलनसारी से गोरख-पुर भर के लोगों से परिचित हो गया और सब लोगों से उसका आना-जाना, खाना-पीना हो गया । संध्या के समय उसके यहाँ यारों की भीड़ लगती । आज द्विस्की छन रही है तो कल बरांडी, परसों एक एक्स शाहजहाँ पुरी ।

तीसरा परिच्छेद



वन का महीना, भूले का बहार । आज मुंशी दुर्गाप्रसाद के ठाकुरद्वारे में बड़ी बहार है । ठाकुरजी की भाँकी अजब मनोहर और अपूर्व बनी है । सफेद जूही के फूलों की टट्टियों से भूला बनाया गया है । सारे मंदिर में दीवार से लेकर द्वार तक, भूले से लेकर डोंग तक, जूही के फूल ही फूल नज़र आते हैं । सुगंधि से बीसों हाथ तक घर से आने-जाने-वालों का दिमाग बसा जा रहा है । इस पर रोशनी भी गजब की है । बाहर पूर्णिमा की स्वच्छ चाँदनी चारों ओर छिटक रही है और भीतर पचीसों मोमबत्तियाँ जल रही हैं । ठाकुरजी के दोनों ओर घी के चिराग के बड़े बड़े दो शमादान हैं, जिनमें पचीसों दीपक जल रहे हैं । सामने उत्तम सुगंधित अगर की बत्तियाँ जल रही हैं और धूपदान में पाँच पाँच मिनट पर पुजारी धूप डालता जा रहा है । मुंशीजी बड़ी श्रद्धा-भक्ति से भूले के सामने बैठे अपने हाथ से ठाकुरजी के पालने को

मंद मंद भुला रहे हैं। चारों ओर दर्शकों की भीड़ लग गई है। फर्श पर शहर के बड़े बड़े रईस और सरकार अमले बैठे भूले का आनंद देख रहे हैं। एक गानेवाला सितार लिये सूरदास के पद गा रहा है। बड़ा ही आनंद हो रहा है।

इसी बीच में भिनकूलाल हाथ में सफेद फूलों की डाल लिये आया और बड़े आदर-भाव से ले जाकर ठाकुरजी के आगे रख दिया और साष्टांग दंडवत् कर द्वार की बाईं ओर बड़ी शान्त मुद्रा धारण कर बैठ गया। उसका बैठना था विसवकी आँख उस पर पड़ी। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने अपने एक साथी से पूछा कि आपकी तारीफ ? उसने कहा कि आप कलकटरी में नकल के मुहकमे में टाइपिस्ट हैं और दो-ढाई महीने हुए, लखनऊ से आये हैं। आप बड़े सज्जन और मिलनसार हैं। मुंशीजी ने कहा— ठाकुरजी की कृपा से आज मुझे भी घर बैठे आपके दर्शन मिल गये, नहीं तो भाग्य कहाँ !

घरह बज गये, ठाकुरजी की शयन-आरती का सामान होने लगा। सब लोग उठकर खड़े हो गये। पुजारी ने परदे खसकाये और घड़ी, घंटे, शंख बजने लगे। पुजारी ने आरती की, पट खुला और सबको आरती दी। फिर चरणा मृत और प्रसाद देकर, ठाकुरजी को शयन कराया। सब लोग विदा हुए और अपने अपने स्थान सिधारे। मुंशीजी अपने अपने मित्रों-सहित वहाँ से उठकर अपने कमरे की ओर

चले और भिनकूलाल का हाथ पकड़कर अपने साथ ले आये । बैठक में पहुँचने पर सब लोग बैठ गये । खिदमतगार हुक्का भरकर लाया, मुंशीजी आप तो हुक्का पीते न थे, अन्य कायस्थों के आगे बढ़ा दिया । थोड़ी देर में खिदमद्गार फिर आया और कहा—आसन तैयार है । सब लोग उठकर बरामदे में गये और हाथ-पैर धोकर आसन पर बैठे । ब्राह्मण ने आगे पत्तल रक्खे और पूरी-कचौरी तरकारी मिठाई आदि ला लाकर सबके आगे परोसना आरंभ किया । मुंशी दुर्गा प्रसाद ने भिनकू को अपने किनारे बैठाया । भिनकू सबकी देखा देखी कपड़े उतारकर गया था और समझा था कि रोटी दाल मिलेगी पर वहाँ सब को कपड़े उतारकर हाथ-पैर धोकर पूरी-कचौरी खाते देख उसे बड़ा ही अचंभा हुआ ।

भिनकू—क्या इस देश में यही चाल है कि लोग पक्की भी हाथ-पैर धो कपड़े उतारकर चौके में खाते हैं ?

मुंशी—हाँ, था तो यही, पर अब समय के प्रभाव से मिटता जा रहा है। कच्चा बाज़ारकीचीजें तक जूता पहने खाने लगे हैं ।

भिनकू—क्या बाज़ार की मिठाई तक लोग नहीं खाते थे ?

मुंशी—हाँ, मेरे बाप चने का साग भी पैर धोकर खाते थे ।

भिनकू—तो क्या यह मिठाइयाँ बाज़ार की नहीं हैं ?

मुंशी—कभी नहीं, यह सब मेरे घर की और आज ही की बनी हैं ।

भिनकू—तो यह कहिए कि आप कायस्थ नहीं ब्राह्मण हैं ?

मुंशी—कभी नहीं, इस देश में ब्राह्मण क्षत्रिय और कायस्थों का आचार एकसा चला आता है। पर अब धीरे धीरे कम होता जा रहा है।

भिनकू—क्या आप कायस्थों के बारहों फिरकों का एक होना नहीं मानते हैं ?

मुंशी—नहीं, देशाचार से और इससे क्या तअल्लुक ? यह तो देश देश में बदलता गया है, इससे कोई और थोड़ा ही हो जायगा।

भिनकू—फिर सबमें सहभोज कैसे हो सकेगा ?

मुंशी—शुद्धाचार से भोजन पकाया जावे तो मैं किसी भी कायस्थ के हाथ का पकाया हुआ खा सकता हूँ पर आचार-विरुद्ध होने पर ब्राह्मण की पकाई पूरी भी खाने को तैयार नहीं हूँ। मैंने सकसेने और माथुर कायस्थों के यहाँ कच्चा खाना खाया है पर आचार से पकाया हुआ था।

भिनकू—क्या आप इस देशाचार को धर्म मानते हैं ?

मुंशी—हाँ, मुख्य धर्म, भगवान् मनु कहते हैं—आचार प्रथमो धर्मः।

भिनकू—तो क्या आपके यहाँ जो लोग अब बाजार की चीजें खाने लगे हैं वह अधर्म है ?

मुंशी—नहीं, धर्म सदा एक रस नहीं रहता, वह देश, काल और परिणाम के अधीन है। उसमें परिवर्तन होता आया है

और होता रहेगा। उसके प्राकृति परिवर्तन को रोकना उसकी उन्नति में बाधा डालना और उसे हानि पहुँचाना है। क्या आपका एक वृत्त की बढ़क रोकना और उसे सदा एक ही अवस्था में रखना (यद्यपि यह असंभव है) उचित होगा अथवा उसको सींचना और बढ़ाना। आप किस वृत्त से फल खाने की आशा कर सकते हैं, बढ़नेवाले और हरे भरे से अथवा सदा ठूँठ रहनेवाले से ? ठीक ऐसे ही धर्म भी एक वृत्त की तरह है। आचार और व्यवहार उसके दो स्कंध हैं, यदि आप उसे विवेक के जल से सींचेंगे और वह दिन प्रति दिन ये नये नये कल्ले और अंकुर फँकता जायगा तो धर्म की वृद्धि और आपका कल्याण होगा, नहीं तो जैसे ठूँठा वृत्त जल नपाकर बढ़ता नहीं और दिन दिन सूखता जाता है आपको धर्म भी छोड़ा जायगा और आपका भी नाश हो जायगा। इसी विवेक जल से सींचे जाने के कारण हिंदू-धर्म अब तक जीवित है और हिंदू जाति और उनकी सभ्यता का संसार में चिह्न बना है।

इसी बीच में एक आर्यसमाजी बोल उठे कि तब तो आपका सनातनधर्म सनातन वा नित्य नहीं ठहरता।

मुंशी—हमारा सनातन धर्म नित्य है। नित्य का अर्थ नहीं है कि त्रिकालाबाध्य। नित्य उसे कहते हैं जो सदा रहे, विश्व में कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है जो त्रिकालाबाध्य हो। मनुष्य नित्य है पर व्यक्तिः नही समष्टिः। वशिष्ठ या याज्ञ

वल्क्य अज्ञ नहीं हैं और न देवदत्त यज्ञदत्त भविष्य में रहेंगे पर 'मनुष्य' जिसके वसिष्ठादि अंग हैं वह सृष्टि के आरंभ से था और बना रहेगा। ऐसे ही धर्म का मनुष्य के साथ संबंध है जब तक मनुष्य जाति है तब तक धर्म है। यही धर्म का सनातनत्व है। सनातनधर्म अन्य धर्मों के समान विश्वास मूलक नहीं है, यह कर्ममूलक है। यही कारण है कि हिंदूधर्म में वेद की सहस्रों शाखाएँ और कोड़ियाँ स्मृतियाँ हैं जो यह सिद्ध कर रही हैं कि अमुक काल में इस प्रकार का आचार व्यवहार था।

आर्यसमाजी—तो क्या आप वेद को भी अनित्य मानते हैं ?

मुंशी—नहीं, मैं वेद को सनातन मानता हूँ पर प्रवाह से जैसा कि ऊपर के उदाहरण में बतला चुका हूँ। वेद की शाखाएँ देश और काल का परिणाम हैं। पर वेद ज्ञान रूप से नित्य हैं।

आर्यसमाजी—तो क्या वेद ईश्वरीय नहीं हैं ?

मुंशी—ज्ञान से ईश्वरीय हैं पर पद वाक्य रूप से मानुषीय हैं।

एक और सज्जन—तब तो आपके मत से अनेक धर्म हैं ?

मुंशी—हाँ, अवश्य हैं, देशधर्म, जातिधर्म, युगधर्म, ग्रामधर्म, कुलधर्म, इत्यादि उसके भेद स्पष्ट हैं।

वही—फिर तो आपके विचार में सभी धर्म ठीक हैं ?

मुंशी—हाँ, अवश्य। मुसलमानों और ईसाइयों का धर्म उनके लिए वैसे ही ठीक और माननीय है जैसे हमारा धर्म

हमारे लिए । इसका क्या प्रमाण है कि कोई एक ही धर्म ठीक हो दूसरे मिथ्या हों । दूसरे को आपने धर्म के करने का उतना ही हक है जितना कि आपको ।

वही—मुसलमान क्यामत मानते हैं, ईसाई भी क्यामत में न्याय होना मानते हैं, हिंदू पुनर्जन्म और कर्मानुसार स्वर्ग नरक का भोग मानते हैं, तो क्या सब ठीक है ?

मुंशी—हाँ, जब तक उनकी उसमें प्रतीति है ठीक है । हिन्दुधर्म किसी धर्म को मिथ्या नहीं कहता । यही कारण है कि हिन्दुओं में नौ सौ निजानवे पंथ हों तो सब हिंदू हैं । इसमें अग्रोरी से लेकर जो साँप छुछूँदर तक खा जाते हैं वैष्णव, बौद्ध, और जैन तकहैं । किसी का किसी से विरोध नहीं । यह बड़ा उदार धर्म है । चार्वाक और नास्तिक तकदेशानुसार आचार-व्यवहार, वर्णाश्रम का पालन करते हुए हिंदू या सनातनधर्म ही कहलाते हैं । आपका विश्वास कुछ भी हो पर यदि आप आचार-संग्रह हैं तो हिंदू हैं । आचार से च्युत होने पर साक्षान् ईश्वर को भी कोई हिंदू नहीं मान सकता ।

सब लोग भोजनकर चुके थे, चौक पर से उठे और हाथ-मुँह धोकर बैठक में आये । नौकर पान-इलायची लाया । मुंशीजी ने अपने हाथ से सबको दिया । रात अधिक बीत गई थी सब उकता रहे थे और मुंशीजी से आज्ञा माँग अपने अपने घर को पधारे । मुंशीजी ने चलते समय भिनकूलाल से बड़ी नम्रता से कहा—अब तो आप यहाँ आ गये हैं । कृपाकर कभी कभी

दर्शन देते रहिएगा । मैं तो विवश हूँ, मुझे कचहरी के बाद पूजा-पाठ और कथा वार्ता से अवकाश नहीं मिलता कि अपने इष्ट-मित्रों के यहाँ हाजिरी दे सकूँ । बुरा न मानिएगा ।

भिनकू ने कहा—आप महात्मा पुरुष हैं आप-ऐसे देव-स्वरूप सज्जनों के दर्शन के भाग्य कहाँ, मैं तो आपके चरणरज को सिर पर नित्य चढ़ाना अपने लिए परम कल्याणकर समझता हूँ ।

यह कह भिनकूलाल मुंशीजी के यहाँ से बिदा हुए और मुंशीजी अपने सोने के कमरे में आकर शयन करने लगे ।

चौथा परिच्छेद



ज सारे नगर में सनसनी छाई हुई है । जिधर देखो उधर यही बातें सबके मुँह पर है कि जनाना-मिशन की मिस एलिस पं० गंगाधर की स्त्री को घर से बहकाकर निकाल ले गई । पं० गंगाधर कान्यकुब्ज ब्राह्मण और खास शाहजहाँपुर के रहनेवाले थे । म्यूंसेंट्रल कालिज से आपने बी० ए० पास किया था और थोड़े दिन फतेहपुर में सरकारी हाईस्कूल में सेकंडमास्टर रहकर वहाँ से डिप्टी-इंसपेक्टर होकर गोरखपुर आये थे । आपकी पहली बीवी पहले ही मर चुकी थी । गोरखपुर पहुँचकर आपने अपना दूसरा विवाह किया । स्त्री

रूप-यौवन-सम्पन्न थी पर पढ़ी-लिखी न थी। ग्रामीण भाषा को छोड़ सीधी भाषा में बोल भी नहीं सकती थी। पंडितजी को इसका बड़ा दुख था। इसी विचार से वह माता-पिता के रोकने पर भी उसे इस बहाने से कि मुझे रोटी बनाने की तकलीफ़ होती है शाहजहाँपुर से अपने साथ गोरखपुर लेकर आये थे कि वहाँ ले जाकर इसकी शिक्षा का प्रबंध करेंगे।

गोरखपुर में आप मियाँबाजार में सड़क के किनारे किराये के घर में रहते थे। आपके तीन नौकर थे, एक साईस, एक कहार, और एक मजदूरिन जो चौका-बरतन करके चली जाती थी। जब पंडितजी दौरे पर जाते तो कहार और साईस उनके साथ चले जाते। घर में बेचारी उनकी बीबी अकेली रहती थी। पंडितजी ने बहुत चाहा कि कोई नौकरानी ऐसी मिले जो दिन-रात रहा करे; पर न मिली न मिली।

नौकरी का मामला था, डिप्टी साहब को अपनी बीबी को अकेली छोड़कर दौरे पर जाना पड़ता था। अशिक्षिता बीबी की शिक्षा के लिए आपने जनाना-मिशन के मिस ऐलिस से कहा कि कृपाकर आप मेरे यहाँ आकर मेरी बीबी को पढ़ा जाया कीजिए। मिस साहब ने बड़ी खुशी से इसे स्वीकार किया। वह नित्य अपनी गाड़ी पर आतीं और पंडितजी की बीबी को पढ़ाती थीं। थोड़े ही दिनों में मिस साहब ने पंडितानीजी को हिन्दी पढ़ा दी और वह नागरी की साधारण पुस्तकों को पढ़ लेने लगीं। उनसे देर तक बातचीत

करने से पंडिताइनजी की ज़वान भी साफ़ हो चली और वह अच्छी भाषा बोलने लगीं। पंडितजी ने थोड़े ही दिनों में इतनी उन्नति देखकर मिस साहब का बहुत शुक्रिया अदा किया और बहुतसी मिठाई का उपहार उनकी कोठी पर भेजा।

मिस एलिस ने देखा कि अब तो रंग जम गया। वह पंडितजी के यहाँ नित्य आती और घंटों बैठकर गप करती रहतीं। इस बीच में पंडितानीजी का उन्होंने रोमन पढ़ाना और कुछ दस्तकारी सिखाना आरंभ किया। कभी कभी प्रातःकाल ही पहुँचतीं, कुरसी रखाकर रसोई के द्वार पर बैठतीं और पंडिताइन के बनाये भोजन को चखतीं और उसे नये नये ढंग के भोजन बनाने की रीतियाँ बतानी। पंडितजी के न रहने पर तो उनका राज्य था। दिन में दो दो बार आती और घंटो बैठी ईसाई-धर्म की प्रशंसा का गीत गाया करतीं। थोड़े दिनों में पंडिताइनजी को शीशे में उतार लिया। एक दिन बहुतसा मेवा ले आई और पंडितानीजी को देकर कहा कि आज हम और आप एक ही मेज पर बैठकर साथ खायें। पंडिताइनजी पहले तो बहुत झिझकी पर अंत को मिस एलिस ने उसे पकड़ ले जाकर एक कमरे में जहाँ एक मेज पड़ा था कुरसी पर बैठाया और फल खाने के लिए मजबूर किया। घर में उस समय मजदूरिन भी न थी। असहाय पंडिताइन लज्जा के मारे चिल्ला भी न सकी और मिस एलिस के साथ मेज पर बैठकर उसको फल खाना पड़ा।

सालाना इमतिहान का दिन आ गया। डिप्टी साहब को अब पाठशालाओं की परीक्षा लेने के लिए कम से कम महीने-दो महीने के लिए दौरे पर बाहर जाना पड़ा। बेंचारी पंडिता इनजी अकेली घर में रह गई। मिस एलिस को अच्छा मौका हाथ आया। एक दिन आपने पंडिताइनजी से हँसकर कहा—मिस—बेल ! पंडिताइनजी, मैं आपके यहाँ द्वारों से नित्य आती हूँ। कई बार आपकी दावत को भी मंजूर किया। क्या आप कभी मेरे घर पर नहीं चल सकतीं। हमें आपके लिए सवारी लेकर आऊँगी। आपके जल-पान का हिंदू नौकर से इन्नजाम कराया जायगा। वहाँ जनाना-मिशन की सब स्त्रियाँ हैं। वह आपसे मिलकर बड़ी खुश होंगी।

पंडित—मिस साहब ! हम हिंदू हैं, ब्राह्मण; आप ईसाई; भला आपके यहाँ कैसे जा सकती हैं। फिर पंडितजी भी घर पर नहीं हैं। वह हाँते और उनकी आज्ञा मिल जाती तो मुझे चलने में कोई इनकार न था।

एलिस—आप पंडितजी के पूछने की कुछ परवा न करें। वह ना आज कभी न होंगे। वह होते तो मैं आपसे पंछती तक नहीं। आप चलना चाहें तो चलिए। मैं पंडितजी को समझा लूँगी।

पंडिता०—अच्छा यदि इसको आप अपने जिम्मे लें तो मुझे आपके यहाँ चलने में कोई अपत्ति नहीं है।

यह कह पंडिताइनजी चुप हो रहीं और मिस एलिस यह

कहकर कि आप तैयार हो रहें मैं दूसरे वक्त गाड़ी लेकर आऊँगी, बिदा हुई और आपनी गाड़ी पर सवार होकर अपने कोठी पर गई।

सायंकाल के ४ बजे थे कि मिस एलिस गाड़ी लेकर पंडितजी के घर पर आधमकी और खटखट करती घर में पहुँची। पंडिताइनजी चिंता में अपनी चारपाई पर पड़ी यह सोच रही थी कि बड़ी आपत्ति है। मैंने जान-बूझकर यह विपत्ति मोल ली। मेरी बुद्धि मारी गई। मैंने मुलाहिजे में पड़कर हामी भर ली। मैंने कलेजा कड़ाकर के इनकार क्यों न कर दिया...इत्यादि। वह इसी उधेड़-बुन में पड़ी थी कि मिस एलिस के पाँव के खटखट से चौंक पड़ी, देखा तो द्वार से मिस साहब पास आकर खाट पर बैठ गई और बोलीं— वेल पंडिताइन आप किस सोच में पड़ी हैं। उठिए गाड़ी हाजिर है।

निदान पंडिताइनजी को उठना पड़ा। उसने उठकर कपड़ा बदला और दरवाजे में ताली लगाकर मिस साहब के साथ गाड़ी में बैठकर चली।

चली तो, पर कलेजा धक्क-धक्क करता था। मिशन में पहुँची तो देखा कि वहाँ दस-बीस ईसाई मिसों साफ-सुथरे कपड़े पहने इन्तज़ार कर रही हैं। गाड़ी ठीक सामने ठहरी। पंडिताइनजी को हाथ का सहारा देकर मिस एलिस ने उतारा और सब लोग कोठी में जाकर बैठीं। ध्यानां वजने लगा।

कितनी लड़कियों ने मिलकर कुछ अंगरेजी स्वर में हिन्दुस्तानी गीत मिलकर गाया। फिर सब दूसरे कमरे में गई वहाँ मेज पर जलपान के लिए चीजें चुनी हुई रखी थीं। मिस साहब पंडिताइन का हाथ पकड़कर उस कमरे में ले गई और एक मेज के पास कुर्सी पर बैठा दिया। पंडिताइनजी आगे डबलरोटी के टुकड़े देखकर घबराई और कहा कि मैं तो इसे हाथ से भी न छुऊँगा। मिस साहब ने एक आया को पुकारा और उसे बहुत डाटकर कहा कि तुझसे ताकीद कर दी थी कि एक मेज पर खाली कुछ मेवे मिठाई और दूध रखना पर तूने कुछ ध्यान नहीं दिया। आया तो सधी हुई थी, वस चट माफो माँगी और मेज पर की चीजों को हटाकर एक तश्तरी में थोड़े से मेवे, अंगूर और सेब लाकर रख दिये। पंडिताइनजी फिर भी भिभिकाँ पर मिस साहब ने समझाया कि फल खाने में क्या लगा है। इसमें क्या दोष है? अभी दूकान से आया है। आप इसे अपने हाथ से काट के खायें। आज पंडिताइनजी ने दवाव में आकर थोड़ासा फल खाया और साड़ी में सुखा मुँह पोंछने लगी। मिससाहब ने कहा कि अभी ठहरिए दूध भी पीना होगा। मैंने आपके लिए अहीर के बरतन में दूध मँगाया है और वह उसी में रखवा है। आया लाओ। आया लोटे में दूध लाई और पंडिताइनजी ने जहर की माँति थोड़ासा दूध भी पिया। फिर सब उठकर बैठने के कमरे में आई मिस साहब के आगे शराब का बोतल आया और वह

प्याले में ढालकर सबको देने लगीं। पंडिताइनजी को जब देने लगीं तो पंडिताइनजी ने हाथ जोड़कर कहा कि आप मुझे बे धरम मत कीजिए। मिस साहिब ने कहा-इसमें धर्म कहाँ जाता है, यदि आप नहीं पीना चाहतीं तो मत पीजिए। फिर थोड़ी देर तक गाना हुआ, पंडिताइनजी बार बार घबराती थीं पर मिस साहिब उन्हें उठने नहीं देती थीं। ८ बजने को हो गये, बड़े कहने सुनने पर मिस साहिब उठीं और पंडिताइनजी को गाड़ी पर सार कर अपने साथ उनके घर पहुँचा गई।

इस प्रकार कई बार पंडिताइनजी मिस साहिब के साथ उनके मिशन में गईं और उनका भय जाता रहा। मिस एलिस जब चाहती, उनको अपनी गाड़ी पर बैठाकर ले जाती और वह वहाँ दस दस बारह बारह घंटे रहतीं और फिर गाड़ी पर बैठ अपने घर पर चली आतीं। एक बार तो सबेरे की गई बारह बजे रात को लौटी थी। मिस एलिस ने जब देखा कि रंग गहरा जम गया तो एक दिन मौका पाकर वह उनके घर गई और उन्हें अपनी गाड़ी पर बैठाकर अपने बगले पर ले आई। फिर बँगले पर उनको कई मिसों के साथ लखनऊ दिखलाने के बहाने लेकर लखनऊ ले गई और वहाँ उन्हें छोड़कर दूसरे दिन गोरखपुर पहुँच गई।

पड़ोस की स्त्रियाँ पहले से ही चचाव करती थीं। जब एक रात बीत गया और पंडिताइनजी न लौटीं और घर का ताला न खुला तो जितने मँह उतनी बानें होने लगीं।

एक स्त्री—सखी, सुना नहीं, प० गंगाधरजी के घर ताला कल से बंद है ।

दूसरी—पंडिताइनजी तो थीं । अभी परसों मैं गई थी । कहाँ गई । कोई देश से भी तो नहीं आया था ?

पहली—गजब हो गया । पंडितजी दौरे पर हैं और स्त्री जाति का यह साहस ?

तीसरी—(बात काटकर) अरे गई कहाँ होंगी । जनाना-मिशन में होंगी । कल मैंने अपनी आँखों देखा, ४ बजे मिस एलिस गाड़ी पर आई थीं और उसे साथ लेकर गई थीं ।

दूसरी—क्या मजदूरिन नहीं थी ?

पहली—नहीं, मजदूरिन दिन-भर थोड़े ही रहती है । फिर जिसकी आँख के पानी गिर गये उसे क्या मजदूरिन रोक लेती ?

तीसरी—अरे वह कई बार उसके साथ जनाना-मिशन गई थीं और रात रात को लौटी थीं ।

दूसरी—भला यह दावा । क्या पंडितजी इसे नहीं जानते ?

पहली—जानते हैं या न जानते हैं पर वह जाती थी और तब जब पंडितजी दौरे पर रहते थे । एक बार तो सबेरे की गई गई आधी रात को लौटी थी । रात को क्या खाया सो भगवान् जानें । उस दिन मजदूरिन भी दरवाजा पीट कर लौट गई थी ।

दूसरी—बाप रे ! औरत का यह ढाटा । मेरे तो कलेजे में हँस रहे हैं ।

चौथी—अरे ! यह किया किसका है । पंडितजी ने तो मिस को पढ़ाने के लिए बुनाया था । अच्छा पढ़ाया !

इस प्रकार शहर में जहाँ चार स्त्रियाँ इकट्ठी होतीं सबके मुँह पर पंडिताइनजी ही का चरचा था ।

जब यह खबर मुंशी दुर्गाप्रसाद को मिली तो वह पूजा पर से उठकर जल-पान करने जा रहे थे । उन्हें तमाचा-सा लगा और नौकर को आज्ञा दी कि गाड़ी तैयार करो । गाड़ी तैयार होकर आई और मुंशीजी गाड़ी में बैठकर आर्यसमाज के मंत्री पंडित विद्या धरजी के घर पहुँचे । पं० विद्याधरजी अपने कमरे में बैठे थे । मुंशीजी को देखते ही कहा -मुंशीजी खैरियत तो है किधर चले ?

मुंशीजी—खैरियत तो नहीं है । सुनते हैं कि पं० गंगाधरजी डिप्टी इंस्पेक्टर स्कूट की बीबी को जनाना-मिशन की मिस एलिस उड़ा ले गई । कल से उनके घर का ताला बंद पड़ा है । वह बेचारे दौरे पर हैं ।

विद्याधर—फिर करना क्या चाहिए ? पुलिस में रिपोर्ट करा दीजिए और पता चलाया जाय कि वह कहाँ है । जनाना-मिशन ही में अभी होगी ।

मुंशी—रिपोर्ट करे कौन, पंडितजी दौरे पर हैं । मेरा खयाल है कि वह यहाँ नहीं होगी । मिस एलिस बड़ी चलता-पुर्जा है । वह उसे कहीं दूसरी जगह छोड़ आई होगी । आज सबेरे से वह नहीं है । संभवतः कहीं पहुँचाने गई है । उठिए मिस्टर राम-

चन्द्र की कोठा पर चलें और उनकी भी सलाह लें। देर न कीजिए, अभी मुझे कचहरी जाना है। जजसाहब बारह बजे इजलास पर आ जाते हैं। यह (लीजिए नकद रुपये निकालकर देते हैं।) किसी आदमी को नहीं तो आर्यसमाज के चपरासी को पं० गंगाधर जी के पास भेजिए। वह कसयाके आस-पास किसी मद्रसे पर होंगे। जल्दी कीजिए।

पंडित विद्याधर ने पत्र लिखा और मुंशीजी के साथ गाड़ी पर बैठकर आर्यसमाज पहुँचे। वहाँ चपरासी का पत्र और १५) देकर कहा तुम अभी जाओ और इक्का करके सीधे कसया चले जाओ। वहाँ पंडित गंगाधरजी का पता तुमको मालूम हो जावेगा। जहाँ हों उन्हें ढूँढकर यह चिट्ठी दो और अपने साथ लेकर आओ। आर्यसमाज से गाड़ी चली और पं० रामचंद्रके बँगले पर आकर ठहरी। रामचन्द्र अपनी कोठी में बैठे मक्किलों के मुकदमे के कागजात देख रहे थे उनका क्लर्क सामने बैठा उसे दिखला रहा था। मुंशीजी को देखते ही पं० रामचंद्र उठे और हाथ मिलाकर उनको और पंडित विद्याधरजी को अपने पास आसन दिया। मुंशीजी ने कहा कि मैं आपसे कुछ एकांत में बातें करना चाहता हूँ। किसी दूसरी कोठरी में चलिए। पं० रामचंद्र यह सुनते ही उठे और मुंशी दुर्गाप्रसाद और पं० विद्याधरजी के साथ पास के एक कमरे में गये और वहाँ बैठकर बातें करने लगे।

मुंशी—पंडितजी ग़ज़ब हो गया। पंडित गंगाधरजी की

बीबी को कल मिस एलिस उड़ा ले गई। पं० गंगाधर जी दौरे पर हैं। अकिल नहीं काम करती कि क्या किया जावे ?

रामचंद्र—कौन मिस एलिस, जनाना मिशन की ? बड़ो चालाक औरत है। पचासों भले आदमियों की बहू बेटियों को निकालकर ईसाई बना चुकी है। गंगाधरजी को बुलाइये और उनसे कहिये कि लज्जा न करें और इस्तगासर दायर करें। हम मुफ्त में पैरवी करेंगे और सजा करायेंगे।

मुंशी—आदमी तो बुलाने के लिए भेजा है। पर बीच में क्या किया जाय।

रामचन्द्र—बिना पंडितजी के आये पुलिस में तो रिपोर्ट हो नहीं सकती और हो भी तो पुलिस पादरियों से डरती है। उनके खिलाफ बचाव कर काररवाई करती है।

विद्याधर—जहाँ तक अनुमान होता है मिस एलिस आज सबरे से नहीं है। अवश्य वह उसे लेकर कहीं बाहर मिशन में पहुचाने गई है।

रामचंद्र—तो फिर यह पता चलाने की कोशिश कीजिए कि वह कहाँ गई है। एक आदमी रेलवे स्टेशन पर भेजिये कि वह इसका पता ले कि मिस एलिस कहाँ के टिकट से उतरती है।

मुंश—तो फिर आज्ञा हो तो हम लोग चलें !

पंडित विद्याधर और मुंशीजी रामचंद्रजी से विदा हो उनके बँगले से चले पंडित विद्याधरजी तो अपने स्थान पर उतर गये और मुंशाजी आपने मकान पर आये।

पाँचवाँ परिच्छेद



ज दिवाली है, घर घर आनंद मनाया जा रहा है ।
 कहीं कपड़े रंगे जा रहे हैं, कहीं पकवान बन
 रहे हैं, कहीं रोशनी का सामान हो रहा है,
 दरवाजों पर केले गाड़े जा रहे हैं, चिरागों में
 तेल-बत्ती पड़ रही है । सूर्यास्त हो गया है । दस-
 पाँच मिनट में सारा नगर दीपमालाओं से जगमगाने लगेगा,
 पर मुंशी भिनकूलाल के यहाँ हाहाकार मचा है । न कहीं
 रोशनी का सामान है, न कहीं खाना ही पक रहा है, बीबी अलग
 बैठी अपने भाग्य को भंख रही है । भिनकूलाल मुँह लपेटे
 अपने कमरे में पड़े हैं । मामला क्या है ? जान पड़ता है कि
 आज कहीं गहरी हार हुई है । नहीं भिनकूलाल इस तरह कोने
 में मुँह लपेटकर पड़नेवाले जोब नहीं थे । कितने लोग आते
 हैं, दरवाजे पर पुकारकर चले जाते हैं, पर कोई जवाब तक
 नहीं देता कि भिनकूलाल कहाँ हैं ।

दिवाली की छुट्टी जब से हुई तब से भिनकूलाल के सिर
 दिवाली का भूत चढ़ा, दिन-रात शराब पीना और जुआ
 खेलना । पहले तो सौ-दो सौ की जीत हुई, बाछें खिल गईं,
 शादियाने बजे, फिर जो हारने लगे तो पास की सारी जमा-
 जत्था हार बैठे । लोग सच कहते हैं कि जुआ हारने पर
 मिठाता है । भिनकूलाल घर आये और बीबी के दो-चार गहने

चुपके से उठाकर ले गये और सर्राफ के हाथ बेचकर जुए में आ डटे। थोड़ी देर में वह भी साफ़ हो गया। इस तरह कई वार करके घर की सारी लाई-पूंजी बेचकर जुए में हार गये। जब गहने सब खतम हो गये तब दो-चार बरतन जो थे उन्हें भी इस आसरे से कि अब कुछ जीतेंगे बेचकर दाव पर लगाया, पर वह भी हार गये जब घर कुछ न रहा तो एक महाजन के यहाँ से प्रोनोट लिखकर २००) ले आये और तीसरे पहर तक उसे भी हार बैठे। जब कुछ न रहा तो आकर घर में मुँह लपेट कर सो रहे। बीवी को जब यह हाल मालूम हुआ तो उसने सिर पीटना शुरू किया, पर होता क्या है। जो होना था सो हो गया। इस समय घर की यह दशा है कि सिवा मिट्टी के बड़े केन घर में कोई बरतन बचा है और न एक लोहे का छल्ला।

इसी बीच में मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ से एक महरी और दो कहार आये। महरी के हाथ में थाल था जिसके ऊपर सरपोश पड़ा था, और कहारों के हाथ में कपड़े से ढकी हुई टोकरियाँ थीं। कहारों को दरवाजे पर खड़ा कर महरी भीतर गई और चारों ओर अँधेरा देखकर बहूजी ! बहूजी ! पुकारने लगी। महरी की आवाज सुनकर भिनकूलाल की बीवी घर में से आँसू पोछकर आँख मलती हुई निकली और महरी को देखकर बोली— ऊँह ! गजब पड़े नींद पर, जरा सी आँख लग गई कि सांभ हो गई। आज दिवाली है, अभी तक चिराग नहीं जलाया। (महरी से) महरी, बैठ जाओ, चिराग जला लूँ तब कुछ सुनूँ।

महरी बैठ गई । भिनकूलाल की स्त्री ने दस-पाँच दीये जलाये और दो चार घर में रखकर दो चिराग महरी को दिया कि दरवाजे पर रख आ । फिर महरी ने मिठाई के थाल दिये और बाहर आकर कहारों के हाथ से दोनों टोकरे ले जाकर घर में रखे । भिनकूलाल की बीबी बड़ी चिन्ता में थी कि उन्हें देगी क्या ? वह घर में गई और इधर उधर ताकों पर दूँढ़ने लगी । कई ताकों पर खोजने पर एक ताक पर एक अठनी मिली । वह लेकर बाहर आई और महरी को देकर विदा किया । महरी ने चलते समय कहा कि मालिक ने कहा है कि मंशीजी से कह देना कल मुझे दर्शन देंगे और परसों चित्रगुनजी की पूजा के समय १० बजे सबेरे अवश्य पधारेंगे । भिनकूलाल की बीबी उसे द्वार तक पहुँचाने गई और उसके चले जाने पर चिराग लेकर बैठक में गई तो देखा कि भिनकूलाल मुंह लपेटे खाट पर पड़े हैं । उसने उन्हें जगाया और कहा जो कुछ किया अच्छा किया, अब उठकर भोजन तो कर लो । सबेरे से मुंह में एक दाना नहीं डाला है । पहले तो भिनकूलाल बहुत झुल्लाये पर बहुत कहने सुनने से उठे और हाथ मुंह धोकर हुक्का पनियाया । बीबी ने टिकिया जलाकर तमाकू चढ़ाया और वह बैठकर पीने लगे ।

बीबी—आप तो मर्द हैं, पढ़े-लिखे, भले आदमियों के गं बैठते उठते हैं, अनेक कथा-पुराण सुना है । मैं आपको क्या समझाऊँ । मैंने समझा था कि लखनऊ से यहाँ आकर आप

की लत कुछ छूटेगी और घर को चेतेंगे। पर व्यर्थ, चढ़े न कालीं कामरी ऊपर दूजो रंग।

फिनकूलाल—मैं शपथ कर के कहता हूँ कि अब कभी जुआ न खेलूँगा और आज से सारी कमाई तुम्हें सौंप दूँगा। तुम्हारे जो जी में आये करना। मेरे आगे सूखी रख दोगी तो भी चुपके से खालूँगा।

बीबी—भला सोचिए तो सही कि लड़की दो-चार साल में विवाह के लायक हो जायगी तो क्या होगी। कायस्थों में दायज की बुरी चाल है। तुम्हारी यह दशा है कि जितना पाते हो उड़ा देते हो। मैंने तो यह ठाना था कि दस-पाँच गहने जो मेरे बाप के दिये बच रहे थे, उन्हीं को उसे पहना दूँगी; पर हाय आज तुमने उन्हें भी बेचकर साफ कर दिया। पहले तो सब कुछ बेचकर उड़ा ही चुके थे, बचावचाया आज साफ कर आये। यह कह वह आँखों में आँसू डबडवा लाई। लड़का खेलता हुआ इसी बीच में अपने बहन के साथ पहुँच गया और अपनी माँ की आँखों में आँसू डबडवाये देखकर बोला—अम्माँ ! अम्माँ !! रोती क्यों हो ? उठो खाना बनाओ भूख लगी है।

माँ—लो ! (मिठाई देकर) यह खाओ।

बालक—नहीं ! मुझे पैसा दो, अम खिलौना लेंगे।

माँ—(मिठाई का घोड़ा देकर) यह लो खिलौना लाल !

बालक—नहीं माटी का खिलौना।

फिनकूलाल—(क्रोध कर) खिलौना लेगा ! दिन भर महल्ले

में घर घर डोलता फिरता है। कुछ नहीं। बैठ खाना खा। नहीं तो मार ही डालूँगा।

बालक—वाह आप तो तमाम दिन जुआ खेलते रहे, अब आये हैं और हमको डांटते हैं कि खिलौना लेंगे ! मैं तो खिलौना लूँगा। तुम से थोड़ा ही माँगता हूँ। तुमने कभी कुछ दिया है ? मैं तो अपनी अम्माँ से माँगता हूँ।

माँ—(बच्चे का मुँह चूमकर) चलो मैं तुमको पैसे देती हूँ।

यह कह कर भिनकू की बीबी उठी और घर में से ४ पैसे ले आई और दो दो पैसे दोनों बालकों को देकर कहा—जाओ खिलौना ले आओ। लड़कों के चले जाने पर जब भिनकू हुका पी चुके तो बीबी ने थाल में भोजन लाकर आगे रख दिया। वह खाने लगा।

बीबी—यह कहो खैर हुआ मुंशीजी के यहाँ से परोसा आ गया नहीं तो तुम ने आज मुझे कहीं का न रक्खा था। वरस वरस के दिन उपवास था। खैर आज ही से चेतो।

छठा परिच्छेद



य ! यह गरीब ब्राह्मण कहीं का न रहा” यह कह कर एक बूढ़ा ब्राह्मण मुंशी दुर्गाप्रसाद की बैठक में धड़ाम से गिर पड़ा। दिन घड़ी भर चढ़ा था और मुंशीजी स्नान कर पूजा करने जा रहे थे। ब्राह्मण के गिरते हीलोग इधर-उधर से

दौड़े और मुंह पर पानी के छींटे देकर उसे होश में लाने के यत्न में लगे। मुंशीजी भी शोर-गुल सुनकर वहाँ पहुँच गये। बड़ी कठिनाई से बेचारा ब्राह्मण होश में आया। उसने आँखें खोलीं ! मुंशीजी ने कहा पंखा झलो। पंखा झला जाने लगा और आध घंटे में वह बेचारा स्वस्थ। हुआ तब मुंशीजी ने उससे पूछना आरंभ किया।

मुंशी—देवता आप कौन हैं और कहाँ से आये हैं ?

ब्राह्मण—मैं ब्राह्मण हूँ और शाहजहाँपुर से आता हूँ। गंगाधरजी को आप जानते हैं। उनका मैं ससुर हूँ।

मुंशी—आप कब आये ?

ब्राह्मण—मैं अभी अभी रेल से आ रहा हूँ। परिडतजी के घर पर पहुँचा तो वहाँ मालूम हुआ कि कन्या को कोई मिस भगा ले गई और परिडतजी आपके यहाँ ठहरे हैं।

मुंशी—आप बचरायें नहीं। स्वस्थ हों। परिडतजी को मैं अभी बुलवाये देता हूँ। वह काम से गये हैं। आप स्नान करें।

ब्राह्मण—और मेरी लड़की ?

मुंशी—उसका भी पता लगाया जायगा।

ब्राह्मण—और न मिली ता ?

मुंशी—अवश्य मिलेगी। आप बचरायें नहीं।

ब्राह्मण—मैं इस लिये भंखता हूँ कि मिली तो वह किस काम की ?

मुंशी—क्यों ?

ब्राह्मण—क्या उसे गंगाधर फिर अपनायेगा ।

मुंशी—अपनाने में हानि ही क्या है । उसने अपराध क्या किया है ? धोखे में पड़ मनुष्य से क्या नहीं हो जाता ।

इसी बीच में परिडित गंगाधरजी आ गये और बूढ़े ब्राह्मण का चरण छूकर प्रणाम किया । ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया । मुंशीजी पूजा करने गये । गंगाधर और ब्राह्मण दोनों बैठ कर बातें करने लगे ?

गंगाधर—आप कब आये ?

ब्राह्मण—अभी आया हूँ । चला ही आता हूँ । रेल से तुम्हारे घर गया, वहाँ तुम्हारा यहाँ पता लगा । मैं हँड़ता हुआ यहाँ आया । कहो कुछ पता लगा है ?

गंगाधर—हाँ, पता तो लगा है । अब उसको वरामद करने का उपाय किया जायगा ।

ब्राह्मण—कोन उपाय ? कैसा उपाय ? हाय वह है कहाँ ?

गंगाधर—आप अधीर क्यों हुए जाते हैं । अभी पुलिस में रिपोर्ट की है और कचहरी जाता हूँ । कलक्टर साहब के इजलास में इस्तगासा दायर करना है । मैं कलक्टर से मिलने गया था, उन्होंने कहा कि आप पहले वक्त में इस्तगासा लाइये, हम मुनासिब काररवाई करेगा । आप स्नान कीजिए और धैर्य धारण कीजिए । यह कहकर गंगाधरजी ने नौकरों को पुकारा और ब्राह्मण देवता को अपने डेरे पर भेज दिया और आप

मुंशीजी की गाड़ी पर बैठकर रामचन्द्रजी की कोठी पर पहुंचे । विद्याधरजी वहाँ पहले ही पहुँच चुके थे और रामचन्द्रजी से आराम कमरे में बैठे बात-चीत कर रहे थे ।

राम०—कहिये कुछ पता चला ?

वि०—हाँ ! मिस एलिस लखनऊ चारबाग स्टेशन का टिकट लेकर उतरी थी ।

राम०—आपने टिकटकलक्टर को उसका नंबर नोट करने के लिए कह दिया था ?

वि०—हाँ ! उस समय वा० दीनानाथ फाटक पर थे । उन्होंने टिकट के नंबर आदि सब नाट कर लिये हैं । वह सामाजिक विचार के हैं और मेरा पत्र पाकर वह आप अपनी ड्यूटी कराके फाटक पर पहुँच गये थे ।

राम०—फिर आपने कुछ लखनऊ का पता लिया ?

वि०—हाँ ! वह अमरिकन जनानामिशन में रक्खी गई है और अब तक वहीं है । पर जल्दी करना चाहिए कि हटाने न पावें

राम०—आपको कैसे पता चला ?

वि०—मैंने अपने एक शिष्य को लखनऊ आर्य्यसमाज में पता पाने ही भेजा । वहाँ सदाँर गणेशसिंह सी० आई० डी० आर्य्यसमाज के सभासद हैं । उनकी कृपा से यह पता चला कि मिस एलिस गोरखपुरवाली आई थी और एक ब्राह्मणी को जिसकी अवस्था २०-२१ वर्ष की होगी अपने साथ लाई थी । उसे वह वहाँ छोड़ कर उसी दिन वापस गई । वह वहाँ रक्खी

गई है और आराम से भोजन पका कर खाती है। मिशन की स्त्रियों ने कहा कि हम रोटी बनाने के लिए ब्राह्मण बुलवाये देती हैं पर उसने माना नहीं और मिट्टी के बरतना में अपने हाथ से चौका देकर, पानी लाकर एक जून भोजन बना कर खाती है। सद्गुरुजी ने यह भी कहला दिया कि आप तलाशी के लिए जल्दी कीजिए और सुराग के लिए कोई गोरखपुर से ही डिटेक्टिव तैनात किया जाय तो अच्छा होगा। यदि कोई पाँच-सात दिन में वहाँ पहुँच गया तो सब काम बना-बनाया जानिये। आर्य्यसमाज के लोग भी दूर दूर से उसका पता लेते रहते हैं। आप जल्दी कीजिए।

इसी बीच में गंगाधर भी कमरे में पहुँच गये। रामचन्द्र ने क्लर्क को बुलाने के लिए घंटी बजाई। और उसे फौरन इस्तगासा तैयार करने के लिए कहा। तब आपने बैरे को घंटी देकर बुलाया और कहा तुम साइकिल लेकर अभी मुंशी लक्ष्मणस्वरूप के यहाँ जाकर सलाम दो और कहो कि परिडतजी ने अभी आपको बुलाया है।

थोड़ी देर में क्लर्क इस्तगासा तैयार कर के ले आया। परिडतजी ने उसे देखकर सही किया। इसी बीच में गाड़ी की आवाज आई, मुंशी रामचन्द्र बरामदे में आये और मुंशी लक्ष्मणस्वरूप से हाथ मिलाकर उनका हाथ पकड़े हुए उस कमरे में ले गये जहाँ गंगाधर और विद्याधर बैठे थे। वहाँ उन्हें बैठा कर सब हाल कहा और इस्तगासा दिखला साफ करने

के लिए क्लर्क को आज्ञा दी। क्लर्क इस्तगासा साफ करके ले आया। परिडित गंगाधर ने उस पर हस्ताक्षर किया। फिर क्लर्क से कहा कि एक वकालतनामा मुंशी लक्ष्मणस्वरूप के नाम लिख कर अभी ले आओ। मुंशी लक्ष्मणस्वरूप ने कहा— हम सब हिंदू ही हिंदू हैं, अच्छा होगा कि वकालतनामे में मौ० शौकतअली का भी नाम डाल दिया जाय। वह बड़े सज्जन ह। उनकी कोठी राह ही में है, हम उनसे दस्तखत करा लेंगे और साथ ले चलेंगे।

परिडित रामचन्द्र ने उनकी बात को पसंद किया। क्लर्क वकालतनामा लिखकर ले आया और चारों मनुष्य गाड़ी में मौलवी शौकत अली की कोठी पर पहुँचे। मौलवी साहब इत्तला होते ही बाहर आये और सबको कमरे में ले जाकर बैठाया। परिडित रामचन्द्र ने उनसे सारा समाचार कहा और उनका हस्ताक्षर करा कर उन्हें साथ लेकर कलकटर की कोठी पर पहुँचे। कलकटर साहब ने पहले तो कहा कि आप इस्तगासा कचहरी में पेश कीजिये, पर परिडित रामचन्द्र, लक्ष्मणस्वरूप और मौलवी साहब ने कहा कि कचहरी में इस्तगासा दायर होने पर मुलजिम्ओं को खबर हो जायगी और वे भगाई हुई औरत को लखनऊ मिशन से हटाने का प्रयत्न करेंगे। सारा किया कराया मिट्टी हो जायगा।

कल०—फिर आप क्या चाहते हैं, मुलजिम्ओं की गिर-तारी के लिए वारंट ?

राम०—नहीं। हमारी यही प्रार्थना है कि आप पहले किसी अनुभवी पुलिस कर्मचारी को इसकी सुरागरसानी के लिए तैयार कीजिए। पता चल जाने पर हम मुलजिम्ओं के लिए जैसा उचित होगा काररवाई करने के लिए प्रार्थना करेंगे। पर स्मरण रहे कि पुलिस का कर्मचारी जो नियत हो वह सी० आई० डी० भी हो।

कल०—अच्छा, सरदार गुरुदत्तसिंह को तैयार करता हूँ?

लक्ष्मण—अच्छा होता यदि आप किसी मुसल्मान को नियुक्त करते, नहीं तो आप ही कहेंगे कि सब हिंदुओं ने मिलकर ईसाई मिस को फाँसने के लिए मनमानी काररवाई की है।

कल०—ऐसा हो नहीं सकता। सरदार गुरुदत्तसिंह बूढ़े आदमी बड़े अनुभवी हैं। वह सकार के खैरखाह हैं, सकार ने उनको सोने के मेडेल दिये हैं। सुरागरसानी में उनसे बढ़कर जिले में कोई दूसरा नहीं है। हम उन्हीं को इस काम पर तैनात करते हैं।

यह कहकर कलक्टर ने टेलीफोन के पास जाकर घंटी दी और सुपरिंटेंडेंट पुलिस से कहा कि सरदार गुरुदत्त सिंह को फौरन भेज दीजिये। सुपरिंटेंडेंट ने सरदार गुरुदत्तसिंह को टेलीफोन दिया। वह आज्ञा पाते ही कलक्टर साहब की कोठी पर पहुँचे। कलक्टर साहब ने उनको इस्तग़ासा दिया और सब मामला समझा कर कहा कि आप इस मामले की

सुराग लगाकर जहाँ तक जल्दी हो मेरे पास रिपोर्ट कीजिये ।
सर्दार गुरुदत्तसिंह कलकटर की आज्ञा पाते ही कोठी से बाहर
निकले और साइकिल पर चढ़कर नौ दो ग्यारह हुये । पंडित
रामचन्द्र आदि विदा होकर गाड़ी में बैठ अपने स्थान
पर आये ।

सातवाँ परिच्छेद



ज कलकटर की कचहरी में बड़ी भीड़ लगी है ।
एक राजपूत अपनी पाँचवर्ष की बालिका को
लेकर हरपुर के ठाकुर गुमानसिंह और अमान-
सिंह के ऊपर रोटी कपड़े के लिये दरखास्त
देने आया है । पेशकार ने सब दरखास्तों
के साथ उसे भी पेश किया । कलकटर साहब ने हुकुम दिया
कि मुद्दिया का इजहार लिया जाय । पेशकार ने इजहार
लिखना शुरू किया ।

पेशकार—(लड़की से, तेरा नाम ?

लड़की—दादा जानें !

कलकटर साहब हँस पड़े और अर्दली को दस पाँच
नामी वकीलों और मुख्तारों को बुलाने के लिये भेजा ।
वकीलों के आ जाने पर कलकटर साहब ने उनसे
हँसकर कहा—देखिये एक पाँच वर्ष की लड़की जो अपना

नाम भी नहीं जानती वह रोटी कपड़े के लिये इस्तगासा लेकर आई है। यह सुन सब वकील हँस पड़े। कोई इस्तगासा लेकर देखने लगा, कोई उस ठाकुर से पूछने लगा कि यह कौन है। कलक्टर साहब ने फिर हँसकर कहा—आप लोग बैठ जायें, हम दोनों का इजहार लिखता है, सारा भेद खुल जायगा। तब उन्होंने पेशकार से, कहा—आप अपना काम कीजिए।

पेशकार—(लड़की से) तेरी उमर

लड़की—उमर काव। कौनो मिठाई है?

पेशकार—तू क्या कहना चाहता है?

लड़की—मिठाई। मिठाई। भूख लाग है। दादा मिठाई।

लड़की की बातें सुनकर सब हँस पड़े। फिर कलक्टर साहब ने कहा कि उसके साथ के आदमी का इजहार लिखा जाय। उसके बयान से मालूम हुआ कि उसका नाम गयासिंह है, और चंदौली का रहनेवाला है। लड़की की उम्र पाँच वर्ष की और नाम महरजिया है। तीन साल पहले उसका विवाह रामसिंह से हो गया है।

पेशकार—(रामसिंह से) जब इसका विवाह रामसिंह से हुआ तो अमानसिंह और गुमानसिंह से क्या सरोकार है?

ठाकुर—साहब, ठाकुर रामसिंह अमानसिंह और गुमानसिंह के बाप हैं। उन्हीं से इस लड़की का विवाह हुआ था। अब ठाकुर रामसिंह का इंतकाल हो गया। ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह इसकी परवरिश नहीं करते। मैं इस बच्चे को

लेकर कहाँ जाऊँ । मेरे घर इतना धन नहीं है कि इसका पालन-पोषण करूँ । एक बैल की खेती है दो, बीया दखिलकारी । सो ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह उसे भी निकालने की फिक्र में हैं । तदसोलदार साहब के यहाँ बकाया लगान के लिए सरसरी की और डिगरी हो गई । डिगरी की अदायगी न होने पर खेत से बेदखल किये जाने की दरखास्त की है । दुहाई धर्मावतार, की आपही माँ-बाप हैं, मैं इसे कहाँ लेकर जाऊँ । मेरी छान पर कराइन नहीं ।

उसका बयान सुनकर सब लोग हँस पड़े । फिर कलक्टर साहब ने हँसकर पूछा—भला जब इसका विवाह हुआ था तो इसकी उमर क्या थी और ठाकुर रामसिंह की उमर क्या थी ?

ठा०—दुहाई धर्मावतार की, भूठ न कहूँगा । लड़की की उमर डेढ़ दो बरस की थी और ठाकुर साहब की उमर २२ बरस की ।

सा०—तो फिर लड़की तो उस समय बोल भी न सकती थी?

ठा०—हाँ । सरकार !

सा०—इस विवाह से फायदा ?

ठा०—पेट, मैंने इसी लिये विवाह किया था कि लड़की सुख से रहेगी । अपने पेटा पेटों की खैर सभी मनाते हैं ।

सब लोग यह सुन हँसने लगे और साहब ने कहा कि आप लोग देखें हिन्दू समाज में कैसे कैसे अनर्थ धर्म की आड़ में होते रहते हैं । इसका कितना पतन हो गया है । सैकड़ों

वर्षों से लोग इसको सुधारने में लगे हैं, पर इन अनपढ़ पंडितों और ब्राह्मणों के मारे कुछ हो नहीं पाता । यह इसी देश की मर्दुमशुमारी में देखने में आता है कि एक एक दो दो वर्ष की विधवायें हजारों की तादाद में मिलती हैं । हमारे मुल्क में तो विवाह वर और कन्या की राजामंदी से होता है । इसी मामले को ले लीजिए । देखिये इस लड़की की उम्र ५ वर्ष की है । वह अपना नाम भी सीधा नहीं जानती है, पर विवाह हुए तीन वरस हो गये। उस समय इसकी अवस्था अधिक से अधिक डेढ़ दो वर्ष की रही होगी । दूध भी नहीं छोड़ा था । क्या आप लोग इसे 'विधवा' न कहेंगे ? यह कहकर पेशकार को हुकुम दिया कि ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह के नाम समन जारी कर दो और लड़की के बाप को आज्ञा दी कि तारीख पर विवाह के सबूत के गवाह लेकर आवे ।

आठवाँ परिच्छेद



ज यमद्वितीया है । मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ बड़ी भीड़ है । चित्रगुप्तजी की पूजा होने-वाली है । दक्षिण की बागहदरी में एक ओर फर्श पड़ा है और उस पर कायस्थों की भीड़ लगी है । दूसरी ओर साफ सुथरी जगह पर चार कुशासन बिछे हैं और बीच में थाल में पूजा की सामग्री

और मिट्टी का जलपात्र (कलश) रक्खा है। मुंशीजी अभी मंदिर में पूजा कर रहे हैं। उनके आने की सब लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं ! पंडितजी आ गये हैं पर वह पूजा की जगह न बैठकर फर्श पर सबके साथ मिलकर बैठे हैं। काशी के पंडित हरनाथ तिवारी भी आज चार पाँच दिन से 'वाल-विधवा-विवाह प्रचारिणी' सभा की ओर से उपदेशार्थ गोरखपुर पधारे हैं और मुंशीजी ही के यहाँ ठहरे हुए हैं वह भी सबके साथ वहीं उपस्थित हैं। उस समय लोगों में इस प्रकार बात-चीत हो रही है।

एक—आप लोगों ने उस दिन देखा एक ठाकुर अपनी पाँच वर्ष की लड़की को लेकर कलकत्ता साहब के इजलास में आया था और कहता था कि वह विधवा है ?

दूसरा—हाँ देखा था और इसका विवाह तब हुआ था जब उसकी आयु दो-डेढ़ वर्ष की थी और दूध पीती थी !

तीसरा—और ८२ वर्ष के बुढ़वा से ! ऐसे बाप को तो पकड़ के फाँसी दे दे !

पहला—यही तो हिन्दू धर्म का दोष है। इसी से तो आर्यसमाज इनका खंडन करता है। भला यह तो बताओ नीच जात हो तो नीच जात। ठाकुरों में जो अपने को क्षत्रिय कहते हैं यह बात कितने कलंक की है। अब तो उस बेचारी का जन्म खराब हुआ। या तो कहीं कोठे पर बैठेगी, या ईसाई-मुसलमान हो जायगी। भला इतनी अवस्था में जो विधवा हो

जाय वह अपना इन्द्रियों को कैसे वश में रख सकती है ।
उसका नीचे-ऊँचे पैर अवश्य पड़ेगा ।

हरि०—आप उसे व्यर्थ विधवा का नाम देकर हिंदू धर्म पर कलंक लगाते हैं । हमारे शास्त्रानुसार वह विवाह कोई विवाह ही नहीं है जिसमें वर कन्या, दोनों न समझते हों कि हम दोनों अग्नि देवता के आगे प्रतिज्ञा कर वाग्वद्ध होते हैं । यह समाज का दोष है, हिंदू धर्म का दोष नहीं ।

एक आर्यसमाजी—और 'अष्टवर्षा भवेद्वौरी' वाला पराशर-स्मृति का श्लोक ?

हरि०—वह आपद्धर्म है और उस समय का है जब लोग बलान् मुसलमान बनाये जाते थे । आजकल कौन सी आपत्ति है कि बाल-विवाह किया जाय । यदि वह वाक्य ठीक भी मानिये तो दस वर्ष का विवाह विवाह माना जा सकता है, न कि डेढ़-दो वर्ष की अवस्था का ? अब तो दो ही उपाय हैं, एक तो बाल-विवाह बन्द किया जाय, दूसरे ऐसी विधवाओं का, जिनका विवाह शास्त्र विरुद्ध बाल्यावस्था में हुआ हो विवाह कर दिया जाय ।

एक सनातनधर्मी—क्या आप विधवा-विवाह मानते हैं ?

हरि०—मानने से आपका क्या अभिप्राय है ? कर्तव्य समझना या शास्त्रसम्मत ?

सना०—कर्तव्य ?

हरि०—कदापि नहीं । हिंदुओं में विशेष कर द्विजातियों

में विधवा-विवाह कदापि कर्तव्य नहीं, पर विधवा का, विधवा-भासा का नहीं। जिस प्रकार विधवा-विवाह अधर्म है वैसे ही बाल विधवा या विधवाभासा का विवाह अधर्माभास है।

दूसरे सज्जन—अधर्माभास किसे कहते हैं ?

हरि०—अधर्माभास वह है जो अधर्म न हो पर अधर्म के समान देख पड़े। जैसे वैदिक काल में यज्ञों में पशु हिंसा और आजकल समुद्र-यात्रा।

ये बातें हो ही रही थीं कि मुंशीजी पूजा करके आ गये। पंडितजी फर्श पर से उठ कर जहाँ पूजा की सामग्री रखी थी वहाँ गये। मुंशीजी एक कुशासन पर बैठ गये और पंडितजी दूसरे आसन पर, कलशा में चित्रगुप्तजी का आवाहन किया गया और पूजा होने लगी। पूजा हो जाने के बाद कथा हुई, कथा के अन्त में हवन किया गया, फिर सब कायस्थों ने कागज के एक एक पन्ने लेकर भगवान के नाम लिखना आरंभ किया, अन्त में सबको मिठाई बाँटी गई और लोग विदा होकर अपने अपने स्थान सिधारे। मुंशी भिनकूलाल को मुंशीजी ने रोक लिया और उन्हें अपने साथ लेकर भोजन के लिए गये। वहाँ ब्राह्मणों के लिए अलग पंक्ति लगाई गई। पहले ब्राह्मणों के आगे भोजन परसा गया, फिर मुंशीजी और भिनकूलाल आदि कायस्थों के। सब लोग भोजन करके उठे। नौकर ने हाथ धुलाया फिर सब बैठक में आये। वहाँ नौकर ने पान-इलायची लाकर दी। मुंशीजी ने उठकर सबको अपने हाथों से

बाँटा और ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर विदा किया। सब लोग अपने अपने स्थान पर पधारे और बैठक में मुंशी दुर्गाप्रसाद और भिनकूलाल रह गये। भिनकूलाल ने मौका देखकर छेड़ा— मुंशीजी कौम की बड़ी नाजुक हालत हो रही है, अफलास दिनोदिन बढ़ता जाता है। यों तो सारे हिंदुस्तान को निर्धनता ने अपना घर बना लिया है, पर कायस्थ कौम की हालत सबसे ज्यादा अन्तर है और दिनोदिन खराब होती जा रही है। कुलभास्कर ने इसके सुधारने की बहुतेरी कोशिश की और उनके बाद कायस्थ कानफरेंस लगातार कोशिश कर रही है, पर कुछ हासिल नहीं। पहले जमाने में कायस्थों की इत्तहाद को लोग नजीर में पेश किया करते थे पर आज गैर कौमों में तो इत्तहाद है किन्तु कायस्थों से काफ़ूर हुई जाती है। इस पर दहेज और दीगर फुजूल खर्चियों का बार इतना बढ़ गया है कि ईश्वर बचाये। इस अदवार की भँवर से भगवान रक्षा करें।

मुंशीजी का हृदय इन बातों से भर आया। आँखों में आँसू डबडबा आये। लंबी सांस लेकर बोले—मुंशी भिनकूलाल, आपका फरमाना बिलकुल बजा है पर सोचो तो सही इसमें दोष किसका है। हमी आप तो इसके दोषी हैं। कानफरेंस में लोग बड़ी बड़ी स्पीचें भाड़ते हैं और बुरे रस्मों और रिवाजों को तर्क करने के लिए गिजोल्यूशन पास करते हैं, पर जब घर जाते हैं तो उसे भूल जाते हैं। कहलाने को तो सिपरे

कौम कहलाते हैं पर हजारों की रकम गिनाये बिना विवाह करना मंजूर नहीं करते । भाई सोचो तो सही क्या रिजोल्यूशन तुमको किसी काम के करने या छोड़ने के लिए मजबूर करने आयेगा ?

भिनकू—(बात काट कर) भला मुंशीजी, आपके यहाँ अगर कोई शादी करने आये तो आप करार-दाद करेंगे या नहीं ?

मुंशी—हर्गिज नहीं । मैं तो कभी कुछ करारदाद न करूँगा । उसके जो जी में आवे दे । मांगूंगा तब नहीं ।

भिनकू—फिर तो जो चाहे उसी के यहाँ आप शादी कर लेंगे ?

मुंशी—हर्गिज नहीं, मैं सिर्फ तीन बातें देखूँगा ।

भिनकू—कौन कौन ?

मुंशी—पहले तो हसबनसब, दूसरे उसकी मान-प्रतिष्ठा, तीसरे उसकी हालत ।

भिनकू—आपने अपने बड़े साहबजादे की शादी की या नहीं ?

मुंशी—नहीं, और न किसी से बातचीत तय हुई । मुझे अभी शादी करना मंजूर नहीं । कई साहब कुण्डली के लिए आये मगर मैंने यह कह कर नकल देने से इनकार कर दिया कि जब मुझे अभी शादी करना ही नहीं है तो नकल देना फजूल है ।

भिनकू—आप कब शादी करने का इरादा रखते हैं ?

मुंशी—जब कम से कम बी० ए० पास हो जाय और एम० ए०, एल० एल० बी० में पढ़ने लगे ।

भिनकू—अच्छा अगर कोई इस बात पर राजी हो कि बान-चीत पहले हो जाय और शादी आप उसी वक्त या जब आपके जी में आवे करें तो क्या आप कुण्डली की नकल दे देंगे ?

मुंशी—भाई कौन बेवकूफ इतने दिन का इन्तजार करेगा । नकल मैं क्या धरा है, जो चाहे ले जाय पर शादी तो करना हमारे अख्तियार में है, हम बिला ग्रेजुएट हुए कभी करेंगे नहीं ।

भिनकू—अच्छा मैं आपसे अधिक अभी नहीं कह सकता । पहले आप मुझे कुण्डली की नकल दे दीजिए फिर देखा जायगा ।

इतना कह कर भिनकूलाल मुंशीजी की बैठक से उठे और सनाम कर अपने घर गये ।

नवाँ परिच्छेद



सर्दार गुरुदत्तसिंह कलकटर साहब की कोठी पर से अपने डेरे पर आये और वहाँ से मियाँ बाजार पहुँचे । जहाँ से पं० गंगाधर की बीबी को मिस एलिस उड़ा ले गई थी । सर्दार साहब पंजाबी पोशाक में थे । सिर पर साफ़ा, बदन में ढीला कुर्ता, पैर में पंजाबी जूता ।

वह पंडितजी के मकान के सामने खड़े होकर एक राही से पूछने लगे कि इस मकान में ताला क्यों पड़ा है ? क्या खाली है ? राही ने कहा—मैं यहाँ का रहनेवाला नहीं हूँ । आप किसी मुहल्ले-वाले से पूछें । उसकी बात सुनकर पड़ोस की एक स्त्री बोल उठी—मकान खाली नहीं है, इसमें डिण्टी साहब रहते हैं । अब तो सर्दार साहब को बातें करने का मौका मिला ।

स०—कौन डिण्टी साहब ?

स्त्री—पंडित गंगाधर, मंदरसे के डिण्टी । का आप नहीं जानित ?

स०—नहीं हम परदेशी हैं । मकान की तलाश में हैं ।

स्त्री—इहाँ तो कौनो घर खाली नहीं है ।

स०—भला जब डिण्टी साहब इसमें रहते हैं तो इसमें ताला क्यों बंद है ? क्या अकेले हैं ?

स्त्री—नाहीं । उनके घर में रहीं । डिण्टी साहब दौरा पर गये । यही बीच में एक मिस आवत रहीं उन्हें निकार ले गई ।

स०—कैसी बात करती है, मिस कैसे ले गई ? मिसें क्या औरतों को पकड़ती फिरती हैं ?

स्त्री—नाहीं । ऊ मिसिया बहुत दिन से उनका पढ़ावे आवत रही ।

स०—पढ़ाने आती थी तो क्या इसी से निकाल ले गई ?

स्त्री—नाहीं भैया अब तू मानो वा न मानो । हम तो महीनन से देखित है कि ऊ रोज आवत रही । डिण्टी साहब

रहत रहे तबो आवत रही जब नार्ही रहत रहे तब दिन दिन भर दुआरे पर गाड़ी खड़ी रहत रही और मिस साहब घर में बैठी बतुआवा करत रहीं। कई बेर देखा कि जब पंडितजी नार्ही रहे तब पंडिताइनजी मिस साहब के साथ उनके बंगले पर जात रहीं। उहाँ पहरन रहत रहीं। फिर मिस साहब उन्हें अपने साथ गाड़ी पर लाइकै पहुँचा जात रहीं। मुला अव की बेर ले तो गई पर फिर लौटी नार्हीं। यही से कहित है कि निकार ले गई।

सर्दार—भूठ।

इसी बीच में अड़ोस-पड़ोस की कई और खियाँ आ गई और सब उसी खी की बात का समर्थन करने लगीं—वह बेचारी सैकड़ों कस्में खाती थी कि भला मोका भूठ कहै से का काम।

स०—तुम पंडितानी को पहचानती हो ?

खी—पहिचानित काहे नार्हीं (एक १० वर्ष की लड़की को बताकर) उह तो पंडितानीजी के इहाँ बहुत आवति जाति रही। जब महरिन न रहत थी इहै सौदा सुलुफ ला देत रही। यही से पूछ लेई। ठीक है कि नार्हीं ?

स०—(लड़की से) क्या मिस सचमुच पंडितानीजी को गाड़ी में चढ़ा के ले गई ?

लड़की—हाँ।

स०—तू पंडितानी को पहचानती है ?

ल०—पहचानीला काहे नाहीं ।

स०—तू कौन जात है ?

ल०—हम कहार होई । यहाँ हमार घर बाटे ।

स०—तेरे घर कौन कौन है ?

ल०—हमार बाप, महतारी, भाई सब हैं ।

स०—नौकरी करेगी ?

ल०—काहे नाहीं, बाकी दादा से पूछ लेव । वे कहें तो ?

स०—अपने बाप को बुला ला ?

लड़की दौड़ी हुई घर गई और अपने बाप को बुला लाई ।

उसने सदाँर साहब को देख झुककर सलाम किया और कहा—हुजूर हुकुम ?

स०—यह तेरी लड़की है ?

कहार—हाँ ।

स०—यह नौकरी करने को कहती है । बोल क्या कहता है ?

कहार—करै माँ का कौन उजुर है । मैं तो सरकार लोगन कै गुलाम हूँ । मोर काम कौन ?

स०—(१०) कहार को देकर) तो चल हमारे साथ । डेरा देखता आ और लड़की को भी पहुँचाता आ । चौथे पाँचवें जब चाहेगी हम इसे भेज देंगे । घर की तरह रहेगी ।

कहार—भला हुजूर के साथ कौन तकलीफ ।

स०—एक घोड़ागाड़ी ले आ ।

कहार घोड़ागाड़ी लेने गया और थोड़ी देर में घोड़ा-

गाड़ी लेकर आया । सदर् सहाब लड़की के साथ गाड़ी में बैठे और कहार को पीछे खड़ा कर दिया । गाड़ीवाले से कहा—पहले उर्दू बाजार ले चलो ? गाड़ी चली और उर्दू बाजार में आकर खड़ी हुई । वहाँ सदर् सहाब ने लड़की के लिए दो जोड़ी साड़ियाँ खरीदीं और गाड़ीवान को लैन चलने की आज्ञा दी । गाड़ी लैन का ओर चली और लैन के पास जब एक बंगले के सामने पहुँची तो सदर् सहाब ने कहा—इधर-इधर । गाड़ी बंगले में जाकर बरामदे के सामने खड़ी हुई और सदर् सहाब उस लड़की के साथ उतरे । वहाँ उसे अपने घर में ले गये और अपनी स्त्री से यह कहकर कि इसे खातिर से रखना; बाहर आये । फिर जेब से दो रुपये निकालकर गाड़ीवान को दिये और कहार से कहा कि गाड़ी के भीतर बैठ जा । फिर गाड़ीवान से कहा इसे मियाँ बाजार में जहाँ से लाया है पहुँचाते जाना ।

गाड़ीवान और कहार तो सदर् सहाब को सलाम कर चले गये । सदर् सहाब लखनऊ की तैयारी करने लगे । लड़की को नये कपड़े पहनाये । दस-पाँच जाड़े कपड़े बक्स में रख अपने बीबी और लड़की के साथ घड़ी दिन रहे स्टेशन पर पहुँचे और रात की गाड़ी से लखनऊ रवाना हुए । प्रातःकाल गाड़ी लखनऊ पहुँची । सदर् सहाब जाकर एक घोड़ा-गाड़ी की और संगत में जाकर उतरे । वहाँ स्नान कर अपनी बीबी और उस लड़की को वहाँ छोड़ गाड़ी पर सवार हो सहाब कलकटर के बंगले पर गये ।

मैजिस्ट्रेट को अपने पहुँचने की रिपोर्ट दे वह सुपरिंटेंडेंट की कोठी पर गये उनसे सब हाल कहकर सहायता माँगी। और सुपरिंटेंडेंट ने उनकी सहायता के लिए सदाँर गणेशसिंह और एक और सी० आई० डी० को तैनात कर दिया। गणेशसिंह से मिलकर सदाँर साहब को यह निश्चय हो गया कि वह स्त्री जिसे मिस एलिस लेकर मिशन में छोड़ गई। अब तक जनानामिशन में है। सदाँर गुरुदत्तसिंह सदाँर गणेशसिंह और दूसरे सी० आई० डी० के साथ गाड़ी में सवार हो संगत में आये।

वहाँ भोजनकर हाथ धोकर ताँनों बैठे और उस कहार की लड़की को बुलाकर कहा—तू तो पंडित गंगाधरजी की स्त्री को खूब पहचानती है न? चल हम तुझे एक जगह ले चलते हैं, वहाँ देख तो वह हैं कि नहीं।

ल०—कहाँ है यहीं।

स०—हाँ इसी शहर में है। मिस एलिस उन्हें लाकर यहाँ के जनानामिशनमें छोड़ गई है, पर तुझे इसतरह न जाना होगा। हम तुझे गाड़ी पर बैठाकर ले चलेंगे और उसके पास ही उतार देंगे। तू इधर-उधर फिरती हुई फाटक से होकर जाना। पर यह न कहना कि मैं गोरखपुर की हूँ वा वहाँ से आती हूँ। कोई पूछे तो कहना मैं बेतिया रहती हूँ। अयोध्या नहाने आई थी। भूले में वहाँ से एक आदमी के साथ लखनऊ आई और उसके यहाँ रहती थी। एक दिन उसके यहाँ से कुछ चोरी

गई । उसने मुझे चोरी लगाकर घर से निकाल दिया । मैं नौकरी ढूँढ़ती हूँ, दो वक्त से एक दाना नहीं खाया है, भूखी हूँ । जब तू भीतर चली जायगी तो औरतें वहाँ खाने को देंगी पर खाना मत, कहना मैं हिन्दू हूँ, किसी के हाथ का खाना न खाऊँगी । मुझे कच्चा दो तो कहीं भूनपका कर खा लूँगी । देखना बड़ी सावधानी रखना । वहाँ कोठरी कोठरी घूमना । पंडितानी मिलें तो भी सबके सामने अपना पता न देना और देख भालकर साँझ को जहाँ हम तुझे उतारें आ जाना । यदि हम वहाँ न मिलें तो आस-पास दूकानों में भीख माँगती फिरना या किसी से बातचीत करती रहना । हम आकर तुझे लेने आवेंगे । खबरदार किसी से भेद न खुले । हम तुझे बहुत इनाम देंगे । यह कहकर गाड़ी मंगवाई और गुरुदत्तसिंह गणेशसिंह और तीसरा सी० आई० डी० उस लड़की को गाड़ी में बैठाकर मिशन की ओर चले । गाड़ी जब जनानामिशन के फाटक से होकर आगे निकल गई तो एक किनारे रुकी । सदाँर गुरुदत्तसिंह ने लड़की को वहाँ उतार दिया और गाड़ीवान से कहा—पुलिस के दफ्तर में चलो ।

लड़की इधर-उधर घूमती-फिरती जनानामिशन के फाटक पर पहुँची और दर्वान से दाँत निकालकर बोली ।

लड़की—भला हो, कोठी सलामत । हमनी परदेसी हई । एक गो ढिबुआ मिले सकार ।

दर्बान—कहाँ रहती है ?

लड़की—सरकार । हमनी परदेसी—बेतिया जानी ला सरकार ?

दर्बान—हाँ । यहाँ कैसे आई ?

लड़की—एक गो ठेबुआ मिले सकार । देई ।

दर्बान—भीतर जाओ, वहाँ मिस साहब लोग हैं । वहाँ माँगो ।

लड़की—अच्छा सकार । भगवान बनाये गहैं ।

लड़की फाटक के भीतर गई । सामने बीच में एक बड़ा बंगला था । वहाँ कई अंगरेज स्त्रियाँ बरामदे में बैठी थीं । उसे देखते ही एक बुढ़ी आया को यह कहकर भेजा कि उस लड़की को बुला लाओ । आया आई और उसे बुलाकर ले गई ।

एक मिस—कहाँ रहती है ?

लड़की—हमनी बेतिया घर । सकार भुखल । एक गो ठेबुआ मिले ।

मिस—(आया से) क्या कहती है !

आया—कहती है कि बेतिया रहती हूँ । भूखी हूँ । एक पैसा मिले ।

मिस—ठहरो हम खाना देगा ।

लड़की—ना सकार । हमरा हिंदू । केहू के पकावल नाहीं खाईला ।

मिस—क्या आप पकाकर खायेगी !

लड़की—हाँ सकार । आपने पकइबा ।

मिस—ब्राह्मणी का पकाया ?

लड़की—ना सर्कार । दिन जनले नहीं ।

मिस—वह गोरखपुर की है । उसका पकाया खायेगी !

लड़की—ना सर्कार—इहाँ गोरखपुर के मनई कहाँ ? हमरा के सर्कार कच्चा दे । पैसा दे । हमनी आपने हाथे भुनि ततें खावै ।

मिस—(आया से) इसे उसी कोठरी में ले जाओ जहाँ वह पंडितानी ठहराई गई है जिस गोरखपुर की मिस एलिस लार्ड थी । अगर उसका पकाया खाय तो अच्छा, नहीं तो इसे अलग पकाने का इन्तजाम कर दो । (लड़की से) आया के साथ जाओ, वहाँ गोरखपुर की एक पंडितानी है ।

लड़की—भगवान राज-पाट बनाये राखें ।

लड़की आया के साथ बाग से होकर उत्तर ओर गई । वहाँ एक पक्का बारिक था । उस बारिक में पूर्व से दो कोठरी छोड़ कर तीसरी में पंडितानीजी रहती थीं । आया लड़की को लेकर गई । पण्डितानी चिंताग्रस्त खाट पर पड़ी किवाड़ बंद किये अपने भाग्य को भुंख रही थी । आया ने किवाड़ खटखटाया और पण्डितानी, पण्डितानी ! कई बार पुकारा । पण्डितानी खाट पर से उठी और किवाड़ खोला । आया ने कहा—वड़ी मिस साहब ने इस लड़की को भेजा है और कहा है कि यह आपका पकाया खाये तो इसका भी खाना पका दीजिए । आप खाना पका चुकी ?

पण्डितानी—नहीं। मेरे सिर में दर्द है। इसी से अभी कुछ नहीं पकाया है।

आया—इस कदर देर मत किया कीजिए नहीं तो बीमार पड़ जायेंगी ! रोने भंखने से कुछ होगा नहीं। आप अब अपने घर नहीं जा सकेंगी और जायें भी तो आपको वह अपने घर में घुसने न देंगे। चिंता छोड़िये। कुछ पका डालिये।

यह कह कर आया उस लड़की को पण्डितानी की कोठरी के दरवाजे पर छोड़ कर चली गई। पण्डितानी ने लड़की को देखा तो पहचान गई और उसे अपना कोठरी में ले जा कर किवाड़ बंद कर पूछने लगी।

पण्डितानी—भगवानदेइया, तू कहाँ ?

लड़की—एक पंजाबी सिख सद्दार के नौकरी कइली।
उन्हीं के साथे आइल वाटी।

पण्डितानी—कहाँ के सिख सद्दार ?

लड़की—उहै गोरखपुर के। ऊ का लैन के कोठियां में रहें लें। सद्दार गुरदत्तसिंह।

पण्डितानी—क्या भूखलगी है। खाने को दूँ।

लड़की—नहीं पण्डिताइनजी। हमे रौंके के देखे बदे पठौलें हैं, सांभ को चली जावें।

पण्डितानीजी ताड़ गई कि यह सब उनके छुड़ाने के लिए यत्न हो रहे हैं। भगवान् को धन्यवाद दिया और लड़की को सायंकाल तक अपने यहाँ रखा। अंधेरा होते ही लड़की

वहाँ से निकली और फाटक से होकर जहाँ सार्दार साहब गाड़ी लिये उसकी राह देख रहे थे पहुँची। सार्दार साहब ने लड़की को अपने साथ गाड़ी में बैठा लिया और लेकर संगत में आये। वहाँ उससे सारा पता ले सार्दार गणेशसिंह के साथ सुपरिंटेंडेंट के बंगले पर पहुँचे और उनसे सौ हथियार बंद पुलिस की मदद माँगी। सुपरिंटेंडेंट ने तुरत फौज के कमान के नाम चिट्ठी दी कि सार्दार साहब जिस समय जहाँ माँगें सौ हथियारबंद जवान उनकी मदद के लिए भेज दो। सार्दार साहब की चिट्ठी लेकर कमान साहब के पास पहुँचे। कमान ने तुरत एक सूबेदार और जवानों को आज्ञा दी कि तुम लोग सार्दार साहब जिस वक्त जहाँ कहें जाओ और उनकी सहायता करो। सार्दार साहब ने सूबेदार से कहा—भाई एक बड़ा कठिन काम है। ईसाई अंग्रेजों का सामना करना है जनानामिशन में गोरखपुर की एक औरत को वहाँ की मिस एलिस ने ला के रखा है। उसी को बरामद करना है। धर्म का काम है। आप लोग सबेरे २ बजे से आकर जनाना मिशन की कोठरी घेर लें और बिना मेरी आज्ञा के किसी को बाहर निकलने न दें! सबेरे साहब कलक्टर और साहब सुपरिंटेंडेंट को लेकर आ जाऊँगा और उन्हीं के सामने लाशी लूँगा। यह कहकर गुरुदत्तसिंह संगत में आये और भोजन कर सो रहे।

सबेरे २ बजे से ही फौज के सिपाही जनानामिशन के हाते

को चारों ओर से घेर कर खड़े हो गये । किसी को कानोकान खबर नहीं । सबरे आया चाय के लिए दूध लेने बाहर निकली । सिपाहियों ने उसे रोक दिया और कहा—बाहर जाने का हुकुम नहीं है । मिशन कंराउंड में कोलाहल मच गया । सबेरा होते ही सर्दार गुरुदत्तसिंह सर्दार गणेशसिंह और तीसरे डिप्टिक्टव को लिए लड़की को साथ लेकर साहब सुपरिंटेंडेंट की कोठी पर गये और सुपरिंटेंडेंट को साथ ले कलक्टर की कोठी पर पहुँचे । वहाँ कलक्टर साहब से सारा समाचार कह सुनाया और कलक्टर को भी साथ लिये जनानामिशन के फाटक पर पहुँचे । सिपाहियों ने साहब सुपरिंटेंडेंट और कलक्टर को देख सलाम किया । फाटक खोल दिया गया और गाड़ियाँ भीतर गईं । कलक्टर, सुपरिंटेंडेंट और सर्दार गुरुदत्तसिंह को देख मिशन की बड़ी मिस डंकन बद्दहवास हो गई और दौड़ी हुई आगे आई । साहबों ने अपनी टोपी उठाई और हाथ मिलाकर कोठी में गये ।

कल०—(गुरुदत्तसिंह से) सर्दार साहब, आप अपना काम कीजिए ।

सर्दार—हुजूर को और साहब वहांदुर का भी साथ चलने की तरलीफ गवारा करनी पड़ेगा ।

यह सुनकर कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट उठे । आगे आगे सर्दार गुरुदत्तसिंह लड़की को साथ लिये पीछे पीछे साहब कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट और दोनों लखनऊ के सी० आई०

डी० तथा मिस डंकन कोठी से निकले । सरदार गुरुदत्तसिंह ने लड़की से कहा—जहाँ पण्डितानीजी रखी गई हैं उधर चल । वह आगे आगे कोठी से निकलकर उत्तर ओर चली और बाग से होकर वारिक के सामने पहुँची । वहाँ वह खड़ी हो गई और उस कोठरी के द्वार पर गई जिसमें पंडितानीजी रहती थीं । पर वहाँ पंडितानीजी न मिलीं । कारण यह हुआ कि मिस डंकन ने सवेरे कोठी को घिरा हुआ देख उनको वहाँ से हटाकर दूसरी वारिक में कर दिया था । फिर तो सरदार गुरुदत्तसिंह लड़की को साथ लेकर कोठरी को देख-भाल करने लगे । जब वह इस वारिक में न मिली तो दूसरी वारिक में, दूसरी से तीसरी में इस प्रकार एक एक वारिक में कोने कोने देखा । अंत को आया की कोठरी की तलाशी ली गई । वहाँ भी वह न मिली । फिर उससे सटा हुआ एक और आँगन-दार कमरा था उसमें ताला पड़ा था । सरदार गुरुदत्तसिंह ने उसकी चाबी माँगी । आया ने कहा इसमें मेरे असबाब हैं, इंधन आदि रखे हैं । सरदार गुरुदत्तसिंह ने डपटकर कहा—वार्ते बनाती है कि चाबी लाती है ? पहले तो उसने टाल-मटोल की पर जब सरदार गुरुदत्तसिंह ने कहा—लाती है तो ला नहीं तो लोहार बुलावें । फिर तो आया डरती काँपती चाबी लाई । कोठरी खोली गई, सब लोग भीतर गये और ढूँढ़ने लगे । वहाँ देखा तो एक और कोठरी बंद थी । उसे खुलवाया तो पंडितानीजी उसके भीतर निकलीं । लड़की ने

शिनाख्त किया। सरदार गुरुदत्तसिंह पंडितानीजी को वहाँ से अपने साथ लेकर मिस डंकन की कोठी पर आये और साहब कलक्टर से प्रार्थना की कि आप कृपा कर पंडितानीजी, और मिस डंकन का इजहार कलमबन्द कीजिये। साहब कलक्टर ने दोनों के इजहार लिखे और सरदार गुरुदत्तसिंह ने पंडितानीजी को लड़की के साथ गाड़ी में सरदार गणेशसिंह को कोचबक्स पर बैठाकर संगत भेजा। एक और गाड़ी मँगा आप तीसरे सी० आई० डी० के साथ उसमें बैठकर संगत चले। साहब कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट अपनी कोठी पर गये। फौज के सिपाही मिशन अहाते को छोड़कर अपने बारिक को सिधारे।

दसवाँ परिच्छेद



ज कलक्टर साहब के इजलास में बड़ी भीड़ लगी है, जिले के बड़े बड़े सभी वकील और मुख्तार तथा जनसाधारण दर्शकों का जमघट है। पं० हरिनाथतिवारी और विद्याधरजी आदि पहले ही से आ डटे हैं। साहब कलक्टर ने आते ही महरजिया और ठाकुर गयासिंह की पुकार कराई। वह अपनी पाँच वर्ष की लड़की को लिये इजलास के सामने गया। फिर साहब ने अमानसिंह

और गुमानसिंह की पुकार कराई । दोनों भाई इजलास में गये और सामने खड़े हुए ।

साहब—(ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह से) आप (गयासिंह की ओर संकेत कर) इन्हें पहचानते हैं ?

अमान—हाँ हुजूर !

सा०—यह कौन है ?

अमान—हमारा एक काश्तकार ।

सा०—और यह लड़की ?

अमान—यह गयासिंह की लड़की है । इसका नाम महरजिया है ।

सा०—और आपकी ?

अमान—मेरी कोई नहीं ।

सा०—माँ नहीं है ? (सब हँसते हैं)

अमान—नहीं हुजूर । हुजूर ही देखें । यह पाँच वर्ष की लड़की मुझ ४५ वर्ष के बूढ़े की माँ कैसे हो सकती है ?

सा०—गयासिंह कहता है कि यह आपकी माँ है । इसका विवाह दस वर्ष हुए आपके बाप ठाकुर रामसिंह से हुआ था । आप लोगों ने उनके मरने पर उसे निकाल दिया और रोटी कपड़ा नहीं देते ।

अमान और गुमान—बिलकुल भूठ ।

साहब—(गयासिंह से) गवाह लाया है ?

गयासिंह—हुजूर ।

पेश० साहब—इस्मनवीसी दाखिल कर ।

गयासिंह—हुजूर ! एक ही गवाह है ।

साहब—बस एक ही अच्छा ले आ ।

(गयासिंह बाहर जाता है और अपने साथ एक बूढ़े आदमी को साथ लेकर आता है ।)

साहब—(पेशकार से) पेशकार, गवाह का इजहार लिखो !
(सिपाही हलफ देता है) ।

बूढ़ा गवाह—भगवान जाने सच कहेंगे । सिवा सच के झूठ नहीं कहेंगे ।

पेश०—(गवाह से) नाम ?

ग०—दीनानाथ ।

पे०—बाप का नाम ?

ग०—जगन्नाथ ।

पे०—कौम ?

ग०—ब्राह्मण ।

पे०—पेशा ?

ग०—खेती जजमानी ।

पे०—कहाँ रहता है ?

ग०—चंदौली ।

पे०—थाना ?

ग०—पडरौना ।

पे०—उमर ?

ग०—८५ वर्ष ।

सा०—तब तो आप ठाकुर रामसिंह के साथी हैं ।

ग०—धर्मावतार ! साथ खेला है । बड़े सज्जन थे ।

सा०—अच्छा इजहार दो । क्या जानते हो ?

ग०—कौनसी बात ।

सब हँसने लगे ।

पेश०—इसका (महरजिया को दिखाकर) विवाह रामसिंह से हुआ था ?

ग०—धर्मावतार ! मैं ही ने तो विवाह कराया । होम किया ।

पेश०—कोई और भी था कि तुम, गयासिंह और रामसिंह ही ?

ग०—वस, और कोई नहीं ।

पे०—क्या बरान नहीं आई थी ?

ग०—नहीं ।

पे०—ओ ! टीका नहीं गया था ?

ग०—नहीं ।

पे०—फिर विवाह कैसे हुआ ?

ग०—ठाकुर रामसिंह हमारे गाँव में लगान वसूल करने प्राये । वह गयासिंह के यहाँ उतरे थे । गयासिंह ने मुझे पुकारा । मैं आया । भीतर चौका दिया गया । लोटे की कलश नाकर पूजा हुई । मैंने कन्या की ओर से मंत्र पढ़ा, फिर घेवाह हो गया ।

हरि०—(कलकटर से) हुजूर हुकुम हो तो मैं भी दो एक प्रश्न पण्डितजी से करूँ ?

क०—(हरिनाथजी से) हाँ आप पूछ सकते हैं (हँसता है) ।

हरि०—पण्डितजी, लड़की बोल सकती थी ?

ग०—नहीं ।

हरि०—फिर तो विवाह की प्रतिज्ञा का मंत्र आप ही ने पढ़ा था ?

ग०—और कौन पढ़ता ? कोई पढ़ भी सकता है । वेद-मंत्र है कि ठट्ठा ! (सब हँसने लगे)

हरि०—भला कौन मन्त्र थे ?

ग०—मुझे याद नहीं ? पोथी में लिखी है ।

हरि०—आपने कौन कौन ग्रंथ पढ़े हैं ?

ग०—(बिगड़कर) तुम कौन हो ? मैंने सब कर्मठ पढ़ा है । बारहो अध्याय सत्तनरायन, पचीसो अध्याय दुरगा पाठ, ब्याह, सराद्ध सब हम पढ़े हैं ! (सब सुननेवाले कहकहा मारते हैं ।)

हरि०—भला यह तो बतलाइए कि जब यह लड़की बोल ही नहीं सकती थी तो आपके मंत्र की प्रतिज्ञा को क्या समझी होगी ।

ग०—वह क्या समझेगी । वह तो यह भी नहीं जानती थी कि मेरा ब्याह हो रहा है ।

हरि०—तब आपका और ठाकुर साहब का ब्याह हुआ, क्योंकि प्रतिज्ञा आपने की थी न कि लड़की ने ।

ग०—दुहाई सरकार की ! देखल जाय, ई हमें गारी देत हैं । आरसमाजी होय ।

सब हँसने लगे । कलक्टर साहब ने ठाकुर गुमानसिंह और अमानसिंह से कहा—आप कुछ गवाह से या गयासिंह से पूछना चाहते हैं । क्योंकि मुद्दै तो कुछ समझता ही नहीं ।

ठाकुर गुमानसिंह ने कहा—हुजूर वकील बुलाऊँ ?

क०—नहीं आप खुद पूछें, वकील का काम क्या है ।

अमान०—(गवाह से) तुम हमारे असामी दखिलकार थे या नहीं ?

ग०—हाँ था ।

अमान०—तुम पर नालिश बकाया लगान की हुई थी ।

ग०—हाँ ।

अमान०—उसमें तुमने रसीद पेश की थी ?

ग०—(चाँक कर) पेश की थी । इससे क्या ?

अमान०—और फिर अदालत ने क्या फैसला किया ?

ग०—अदालत ने रसीद नहीं मानी ।

अमान०—फिर क्या हुआ ?

ग०—ठाकुर साहब की डिगरी ।

अमान०—इसे हुए कितने दिन हुए ?

ग०—चार वर्ष ।

अमान०—फिर डिगरी का रुपया तुमने दिया ?

ग०—नहीं । अटा नहीं ।

अमान०—फिर ?

ग०—ठाकुर साहब ने मुझे खेत से बेदखल कर दिया ।

अमान०—विवाह तुमने बेदखल होने के पहले कराया था या पीछे ?

ग०—जब विवाह हुआ उस समय मैं बेदखल हो गया था । दखलदिहानी आए महीनों बीत गये थे ।

कल०—क्या आपको कुछ ठा० गयासिंह से भी पूछना है ? (पेशकार से) गयासिंह का वयान पढ़ दो ।

पेशकार ने इजहार पढ़कर सुनाया और अमानसिंह ने उसे सुन कर कहा—गयासिंह से मुझे कुछ नहीं पूछना है । उसने अपना दखिलकार होना और डिगरी का इजरा होना और अदम अदायगी तसलीम की है । मुझे अदालत से और कुछ कहना नहीं है ।

साहब कलक्टर ने दरखास्त खारिज कर दी और गयासिंह से कहा तुमको दावा करना है तो दीवानी करो । हमारी समझ में इस लड़की के विवाह की बात झूठी है । सावित्र नहीं होती । तुम और तुम्हारा गवाह दोनों अमानसिंह और गुमानसिंह से लड़ चुके हो । हो सकता है कि यह दावा तुम दोनों ने अदावत से दाखिल किया हो ।

गयासिंह यह सुन कर दुहाई देने लगा और कसमें खाने लगा । कलक्टर और दर्शकों के हंसते हंसते पेट में बल पड़ गये । अंत को जब देखा कि वह इजलास से नहीं जाता तो कलक्टर ने अर्दली से कहा—इसे बाहर कर दो और दूसरे

मुकदमे की पुकार करो। अर्दली ने गयासिंह को इजलास से निकाल बाहर किया। उसके साथ ही साथ दर्शकों से भी इजलास खाली हो गया और बाहर भीड़ लग गई।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

सरदार गुरुदत्तसिंह मिशन से संगत में आये और भोजन करके दो गाड़ियाँ मंगवाई। एक में अपनी बीबी, पण्डितानी और लौंडिया को सवार कराया, दूसरी पर आप और गणेशसिंह सवार हुए और चारवाग के स्टेशन पर पहुँच, टिकट ले, रेल के प्लेटफारम पर पहुँचे। वहाँ थोड़ी देर तक सरदार गणेशसिंह के साथ बातें करते टहलते रहे कि गाड़ी आई। औरतों को जनाना गाड़ी में बैठाकर आप सरदार गणेशसिंह से हाथ मिलाकर गाड़ी में बैठ गये। गार्ड ने सीटी दी और गाड़ी गोरखपुर की ओर चली।

गाड़ी प्रातःकाल गोरखपुर पहुँची। सरदार गुरुदत्तसिंह गाड़ी से उतरे, तीनों स्त्रियों को जनाना गाड़ी से उतारा और स्टेशन से बाहर आ एक घोड़ा-गाड़ी में स्त्रियों को चढ़ा आप कोचबक्स पर बैठ अपने बंगले पर आये। वहाँ स्नान भोजन कर गाड़ी मंगवाई और साहब सुपरिटेंडेंट के बंगले पर पहुँच रिपोर्ट दी। साहब सुपरिटेंडेंट ने उनकी रिपोर्ट कल-

कटर के पास भेज दिया और कहा—आप कलकटर साहब के पास जाइये और उनको इसे अपने हाथ से दीजिए। गुरुदत्तसिंह साहब कलकटर की कोठी पर गये। साहब ने उन्हें देखते ही पूछा—सरदार साहब कहिए क्या बात है ?

स०—हुजूर सब ठीक है। गंगाधर की स्त्री लखनऊ के जनानामिशन में मिली। उसे लेकर आया हूँ।

क०—कहाँ है ?

स०—मेरे घर पर।

क०—पहचान किसने किया ?

स०—एक लौंडिया ने जो गंगाधर के पड़ोस में रहती थी।

क०—अच्छा आप सब सबूत लेकर कचहरी में आइए।

सरदार साहब कलकटर की कोठी से अपने बंगले पर आये। कलकटर साहब ने अपने अर्दली को पं० रामचंद्र के पास भेजा और कहला दिया कि आज बारह बजे पं० गंगाधर का मुकद्दमा पेश होगा। पं० रामचन्द्र ने इसकी सूचना पं० गंगाधर जी और बा० लक्ष्मणस्वरूप और मौ० शौकतअली को दे दी। सब लोग कचहरी में ठीक समय पर पहुँच गये, कलकटर ने आते ही पुकार कराई और मुकद्दमे की काररवाई शुरू की। सरदार गुरुदत्तसिंह ने पंडितानी और कहार की लौंडिया को इजलास में पेश किया। पहले पंडितानी का इजहार हुआ। पंडितानी की पहचान गंगाधर ने की। पंडितानी ने बयान किया कि, मैं पंडित गंगाधर की बीबी हूँ।

अपने पति के साथ मियाँबाजार में किराये के घर में रहती थी। मेरे पति ने मिस एलिस को मुझे शिक्षा देने के लिए कहा। वे नित्य मेरे यहाँ पढ़ाने आती थी। मुझे हिन्दी और रोमन पढ़ाया। कुछ दस्तकारी भी सिखलाया। वह मेरे यहाँ आती और घंटों रहता थी। बड़ी घनिष्ठता हो गई थी। पंडित जी जब दौरे पर जाते तब मैं अकेली घर में रहती थी। महरी कामकाज करके चली जाती थी। यह (कहार की लौंडिया को बताकर) जब महरिन नहीं रहती थी तब अकसर मेरे घर आया करती थी और सौदा-सुलफ ला देती थी। मैं इसे पैसे दो पैसे दे दिया करती थी। कई बार मिस को मैंने अपने यहाँ खाना खिलाया था। मिस साहब ने एक बार, जब पंडितजी नहीं थे, तो मुझसे कहा—आपने मुझे कई बार खाना खिलाया, आप एक बार मेरे यहाँ भी चले। हम भी आपको दावत देगा। मैंने कहा—हम हिन्दू हैं, ब्रह्माण हैं, आप अंगरेज ईसाई, हम आपके यहाँ कैसे जा सकती हैं। फिर पंडितजी भी नहीं हैं। वह होते और आज्ञा दे देते तो मुझे चलने में कोई उज्र न था। पर मैं खाना न खा सकूँगी। मिस साहब ने कहा—पंडितजी होते तो मैं उनसे खुद कहती और वे खुशी से आज्ञा दे देते। उनकी आज्ञा की आप चिंता मत करें, मैं चार बजे गाड़ी लेकर आऊँगी। आप तैयार रहना। मैंने दबी जवान स्वीकार कर लिया। मिस साहब ४ बजे आईं। मैं कपड़ा पहनकर तैयार हो गई और उनके साथ गाड़ी पर बैठकर उनके बंगले पर गई।

वहाँ अनेक मिसें और देशी स्त्रियाँ थीं। थोड़ी देर गाना-बजाना हुआ, फिर भोजन होने लगा। मुझे मिस साहब ने सूखे मेवे, फल और दूध दिये थे। मैंने भी खाया था। फिर वहाँ कुछ देर ठहराकर मिस साहब मुझे गाड़ी पर चढ़ाकर घर पहुँचा गईं। इस प्रकार मिस साहब कई बार मुझे अपने साथ अपने बंगले पर ले गईं और वहाँ गाना-बजाना, मनबहलाव हो जाने के बाद पहुँचा गईं। इस बार पण्डित जी सालाना दौरे पर गये थे एक दिन मिस साहब आई और मुझसे कहा—चलिए आज बंगले पर गाना-बजाना है। थोड़ी देर रह कर चली आना। मैं मिस साहब के यहाँ गई वहाँ थोड़ी देर ठहरी। फिर मिस साहब मुझे और कई और देशी मिसों को गाड़ी में बैठा कर कहा—चलो सैर करा लायें। मैंने समझा कि कहीं पार्क आदि में जाने को कह रही हैं, अभी लौट आवेंगी। पर गाड़ी रेल के स्टेशन पर पहुँची। वहाँ मैंने कहा, आप मुझे कहाँ ले आईं। स्टेशन पर क्या काम है, पर मिस साहब ने कहा—घबराओ नहीं, रेलगाड़ी आ जाने दो, गाड़ी निकल जाने पर चलेगी। इसी बीच मैं गाड़ी आई। मिस साहब और दूसरी मिसें अव्वल दर्जे के डब्बे में बैठ गईं। मैं बाहर खड़ी थी। भीतर नहीं जाती थी। मिस साहब ने मेरा हाथ पकड़कर कहा, डरो मत इस डब्बे में आओ, अव्वल दर्जे की गाड़ी को देख लो कैसी अच्छी है। अभी गाड़ी देर तक ठहरेगी। चलने लगेगी तो उतर चलेगी। यह कह उन्होंने मेरा हाथ पकड़कर डब्बे में बैठा

लिया और इधर उधर की बातें करने लगी। हारमोनियम साथ था। मिस साहब बजाने लगीं और दो-तीन गाने गाये। मैं भी बैठ गई। बातों में मुझे भुला रखा। जब जब मैं उठती मुझे यह कहकर बैठा लेती कि तुम हिन्दुस्तानी गँवार हो। अभी गाड़ी देर तक रहेगी। इसी बीच मैं गाड़ी चल पड़ी। मैं द्वार खोलकर कूदना चाहता थी पर मुझे सबने पकड़ लिया। मैं अकेली बेवस थी। गाड़ी सधेरे लखनऊ पहुँची। वहाँ मिस साहब ने मुझे उतरा और स्टेशन के बाहर आकर एक घोड़ागाड़ी की। राह में मैंने मिस साहब से कई बार कहा आपने मेरे साथ धोखा किया, आप मुझे कहाँ ले जा रही हैं? पर मिस साहब ने कहा—अब तो गाड़ी चल पड़ी, चलो लखनऊ देख आवें। एक दिन ठहरकर इमामबाड़ा घौरेह देखकर लौट आवेंगी। गाड़ी पर सवार हो गई। मैंने समझा कि इमामबाड़ा देखने जा रही हैं, पर गाड़ी एक बँगले के हाते में जाकर एक कोठी के सामने खड़ी हुई। वहाँ एक बूढ़ी मिस डंकन नाम की थी। मैंने कहा—आप तो इमामबाड़ा दिखाने को कहती थीं। मिस-साहब ने कहा—नहा-धोकर कुछ खा पी लो तब चलती हैं। बतलाओ तुम्हारे खाने का क्या इंतजाम किया जाय? बाजार से पूरी मिठाई मँगावें या आप पकाओगी। मैंने कहा—मैं कुछ न खाऊँगी। बड़ी जिद की कि नहीं कुछ खाओ ही। मैंने कहा—खिलाना ही है तो एक बड़ा, दो हंडियाँ

और खिचड़ी के सामान मँगा दीजिये । मैं कहीं अपने हाथ से जगह देखकर बना लूँ । पर कुआँ कहाँ है । मिस डंकन ने सब सामान आया से मँगवा दिया और कोठी की उत्तर की बारिक में एक कोठरी जो पूर्व ओर कुर्ये के पास है खाली करा दी । मैं वहाँ गई । कुर्ये से घड़ा भरा, हाथ मुँह धोकर स्नान किया और चौका देकर खिचड़ी बनाने लगी । मिस एलिस ने मुझे नहाने के लिए यह साड़ी मँगा दी थी जो मैं पहने हूँ । खिचड़ी खाकर जब मैं कोठी पर गई तो देखा कि वहाँ न मिस एलिस है, न और हिन्दुस्तानी मिसें । मैं सिर पीटकर रोने लगी । मिशन की मिसें मुझे समझाने लगीं । रात को वैसे ही पड़ रही । सवेरे फिर कई मिसें आई और अनेक प्रकार की मिठाइयाँ लाकर देने लगीं । मैंने कहा—मैं कुछ न लूंगी । दिन भर विना दाना-पानी के पड़ी रही । फिर सायंकाल को मिस डंकन आई और कहने लगी—आप कुछ खायेंगी नहीं ता मर जायेंगी । मैंने कहा—मरना तो है ही, नहीं यहाँ आनी क्यों । मिस डंकन ने कहा—हम किसी को मारती नहीं जो खाना चाहो मँगवा दें । मैंने कहा—यही है तो चार पतकी, दो घड़े और खिचड़ी के सामान मँगवा दो । मिस साहब ने मँगवा दिया । मैंने स्नान कर चौका देकर खिचड़ी पकाकर खाई । इस प्रकार नित्य खिचड़ी का सामान आता । जब भूख के मारे दम निकलने लगती तो मैं खिचड़ी पका खाती और किवाड़ बन्द कर

अपने भाग्य को भंखती। सातवें दिन आया इस लैंडिया को लेकर मेरी कोठरी के दरवाजे पर गई। मैं भीतर खाटपर पड़ी भंख रही थी। आया के रोने-पीटने पर मैं उठी और किवाड़ खोला। आया यह कहकर चली गई कि इसे भी कुछ खिलाइये। मैंने समझा कि कोई मेरी-सी विपत्ति की मारी है। पर जब आया चली गई तो मैंने पहचाना और पूछा कि तू कहाँ? उसने कहा—मैंने एक पंजाबी की नौकरी कर ली है और यहाँ आई हूँ। वह सायंकाल तक मेरी कोठरी में रही। अन्धेरा होने चली गई। सवेरे आया और दो मिसें गई और मुझे जबरदस्ती पकड़कर एक कोठरी के भीतर बंद कर दिया। मैं बहुत रोई चिल्लाई पर वहाँ सुननेवाला कौन था? मैं रो-भंखकर थककर पड़ गई कि इसी बीच में बाहर लोगों की बोल सुनाई दी। किवाड़ खोला गया और सरदार साहब एक और सिख, और दो साहब मेरी कोठरी में गये। कई आदमी बाहर खड़े थे। लैंडिया भी थी। मिस डंकन भी पीछे खड़ी थी। वहाँ से मुझे मिस डंकन की कोठी पर ले आये। वहाँ कलक्टर साहब ने मेरा बयाना लिखा और सरदार साहब मुझे गाड़ी में बैठाकर संगत में लाये। वहाँ सरदार साहब की स्त्री भी थी। वहाँ मैंने स्नान किया और कुछ खाया। फिर सरदार साहब अपनी स्त्री और लैंडिया के साथ मुझे लेकर स्टेशन पर आये और सायंकाल की गाड़ी से लखनऊ से गोरखपुर चले। सवेरे यहाँ आकर सब उतरे। सरदार साहब

मुझे अपने घर ले आये। सरदार साहब मेरे बाप माँ हैं उन्होंने मेरी जान बचाई। नहीं तो मैं रो रोकर मर जाती।

पंडितानीजी का इजहार हो जाने पर लौंडिया का इजहार हुआ और मियाँवाजार की दो और स्त्रियों का वयान लिया गया। फिर सरदार गुरुदत्तसिंह का इजहार लिया गया। सरदार साहब ने कहा— मैं पहले मियाँवाजार गया और जब मुझे इतमीनान हो गया कि मामला सच्चा है और यह लौंडिया मिल गई तो मैं इसे लेकर अपनी स्त्री के साथ लखनऊ गया। वहाँ सुपरिंटेंडेंट और कलक्टर को अपने पहुँच की रिपोर्ट दे जाँचने लगा। सुपरिंटेंडेंट ने सरदार गणेशसिंह और रामदत्त शुक्ल सी० आई० डी० को मेरी मदद के लिए नियुक्त किया। मैं इस लौंडिया को लेकर मिशन के हाना के सामने छोड़ आया। वह जाकर देख आई। जब मुझे इतमीनान हो गया तो मैंने सुपरिंटेंडेंट से सौ जवानों की मदद माँगी और उन्हें हाते की हिफाजत के लिए तैनात किया। सवेरे साहब कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट पुलिस को लेकर लौंडिया के साथ जनानामिशन में गया और वहाँ एक एक बारिक की कोठरियों की तलाशी लेने लगा। कई बारिक देख डाले। एक-एक कोठरी की तलाशी ली। वहाँ भी पंडितानी न मिली तो मैं बड़े चक्र में पड़ा। अचानक आया की कोठरी के पास एक और वन्द कोठरी पर नजर पड़ी। दरवाजे में ताला पड़ा था। मैंने कुंजी माँगी। आया इधर

उधर करने लगी। जब किवाड़ तोड़ने के लिए लोहार बुलाने को कहा, तब वह कुञ्जी लाई। कोठरी खोली गई। भीतर एक छोटासा आँगन था, वहीं एक और छोटी बंद कोठरी मिली। उसे खुलवाया तो भीतर पंडितानीजी मिलीं! लौंडिया ने उनकी शिनाख्त की। मैंने साहब कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट पुलिस और मिस डंकन और आया के सामने तलाशी ली। साहब कलक्टर ने मेरे कहने से पंडितानी और मिस डंकन का इजहार लिखा है।'

साहब कलक्टर ने गुरुदत्तसिंह का इजहार हो जाने पर तारीख मुक़र्रर की और मिस एलिस के नाम समन जारी करने का हुक्म दिया। पंडितानीजी को हाजिरी के लिए जमानत लेकर पं० गंगाधर के सिपुर्द किया।

बारहवाँ परिच्छेद



ज दिसंबर की २५ तारीख है। कचहरियाँ चौबीस ही से बंद हैं। मुंशी भिनकूलाल के बड़े भाई, जब कई तातीलें बीत गईं और भिनकूलाल लखनऊ न गया तो यह देखने के लिए कि उसकी वहाँ क्या दशा है गोरखपुर आये हैं। भिनकूलाल उनकी खातिरदारी में जी-जान से लगे हैं। रात को चौके पर दोनों भाई खा रहे थे। भिनकूलाल की

बीबी ने अपने लड़के से कहलाया कि दादा से कहो, अब कहीं विवाह के लिए भी चिन्ता करें। दो-चार साल में लड़की ब्याहने योग्य हो जायगी। यह सुन बड़े भाई ने भिनकू से कहा—भिनकू ! कहीं शादी के लिए तजवीज की है। अभी से खोज करना चाहिए।

भिनकू—भैया ! मैं तो यहाँ परदेश में हूँ, दिन भर कचहरी में मरता-पिटता रहता हूँ, दम मारने की फुरसत नहीं मिलती। क्या करूँ कहाँ ढूँँ। दूसरे यहाँ के लोगों में उतनी घृस-पैठ नहीं। अमलों का हाल आप जानने ही हैं। लाये तो रोजी नहीं तो रोजा।

बड़ा भाई—आखिर तुमको इतने दिन यहाँ हो गये किसी कायस्थ से जान-पहचान नहीं हुई ? मेरा तो यहीं का जन्म है। पढ़ा भी यहीं। लाला यहाँ मुन्सरिम थे। पर नहीं कह सकता कि मेरे साथियों में कौन कौन हैं और कहाँ कहाँ।

भिनकू—चलिए सबेरे दो-एक से मिल आइए। आपकी कृपा से मेरी भी उनसे जान-पहचान हो जायगी।

बड़ा०—लक्ष्मणस्वरूप, गंगाप्रसाद, अघोरनाथ गंगोली मेरे सहपाठी थे। लक्ष्मणस्वरूप और अघोरनाथ तो उर्सा साल इट्रॉस पास हुए जिस साल मैं। अघोरनाथ काशी क्वॉन्स-कालिज में पढ़ने चला गया था और मैं लखनऊ गया। लक्ष्मण-स्वरूप भी फैजाबाद से एफ० ए० पास हो गया तो बी० ए० के लिए लखनऊ में गया था। वहाँ फिर हम दोनों का साथ

हो गया । वहीं से हम दोनों बी० ए० और एल० एल० बी० हुए थे ।

भिन०—एक बा० लक्ष्मणस्वरूप तो वकील भी हैं । जगन्नाथपुर में उनका घर है ।

बड़ा०—ठीक, वही हैं । अच्छा कल उनके यहाँ चलना होगा ।

भिन०—आप मुं० दुर्गाप्रसाद को जानते हैं ?

बड़ा०—मेरे दर्जे में तो इस नाम का कोई लड़का नहीं था । हाँ जब मैं पाँचवीं में था तो एक लड़का इस नाम का साँवले रंग का इंद्रेंस क्लास में था ।

भिन०—भाई रंग तो मिलता है, उनकी उमर भी आपसे अधिक है । आजकल वह जज साहब के पेशकार हैं । बड़े ही सज्जन देवता हैं । मुझ पर बड़ी कृपा रखते हैं । दर्शन के लायक हैं । साधु ! साधु !

बड़ा०—अच्छा चलो उनसे भी मिलते आचेंगे ।

भिन०—भैया, उनका बड़ा लड़का बड़ा ही सुशील है । बी० ए० में पढ़ता है । व्याह योग्य है । उसकी कुण्डली लेकर देखना चाहिए ।

बड़ा०—उससे फायदा ? तुम्हारा मुंह है जो उनको दहेज दे सकोगे ? बड़े आदमी हैं । हजारों की बात करेंगे ।

भिन०—नहीं । मुंशीजी बड़े कौम के शुभचिंतक हैं । एक बार मैंने उनसे कहा था क्या आप भी दहेज की रस्म को

रखा रखेंगे। मुंशीजी ने कहा—ईश्वर बचावे। मैं तो एक हब्बा न लूँगा और जो मिलेगा उस पर कनाअत करूँगा। मैं करार दाद की बुरी रस्म का कभी तकलीद न करूँगा। परजब तक लड़का बी० ए०, एल० एल० बी० न हो जाय मैं शादी हर्गिज न करूँगा, चाहे जो हो। इसी से जो लोग नकल माँगने आये, मैंने साफ कह दिया कि जब शादी अभी करना ही नहीं है तो नकल देनी फजूल है।

बड़ा०—फिर उनकी दात करना ही फजूल है। जब वह नकल ही न देंगे तो दिखाया क्या जायगा।

भिन०—नहीं, उन्होंने मुझे नकल देने का वादा किया है, इस शर्त पर कि शादी उसी वक्त को जायगी जब लड़का बी० ए०, एल० एल० बी० हो जायगा।

बड़ा०—अच्छा चलो। नकल मिल सके तो अच्छा ही है। मौका पाना तो छेड़ देना। पर उम्मीद कम है।

भिन०—अच्छा, भाग्य को आजमाया जाय।

दोनों भाई भोजन कर उठे और हाथमूँह धोकर बैठक में आये। लड़का पान-इलायची लाया। भिनकूलाल की बीबी चिलम भर कर किवाड़ की आड़ से दे गई। दोनों भाइयों ने हुक्का पिया। बड़ी देर तक इधर-उधर की बातें करते रहे और जब रात बहुत बीत गई तो चारपाई पर पड़के सो गये।

सबेरा हुआ भिनकूलाल और उनके भाई उठे, हाथ मूँह धोकर स्नान किया और कुछ जलपान कर एक इक्के पर

सवार हुए । पहले तो वह जगन्नाथपुर के बा० लक्ष्मणस्वरूप के यहाँ गये । वहाँ जाने पर मालूम हुआ कि बा० लक्ष्मण-स्वरूपजी २४ तारीख ही को कांग्रेस में चले गये । भिनकूलाल और उनके भाई वहाँ से मुंशी दुर्गाप्रसादजी के यहाँ आये । मुंशी दुर्गाप्रसाद पूजा कर रहे थे । नौकर ने बैठक खोल दी और दोनों भाइयों को बैठाकर पान-इलायची लाकर दिया । आध घंटा बाद मुंशीजी पूजा कर के आये और प्रणाम आशिष होने के बाद भिनकूलाल से बोले —आपकी तारीफ़ ?

भि०—मेरे बड़े भाई हैं । आप लखनऊ में वकालत करते हैं ।

मुं०—आपका शुभ नाम ?

भि०—गंगाशंकर ।

गंगाशंकर—मुंशीजी ! गुस्ताखी तो होगी पर क्या आपसे पूछ सकता हूँ कि आपने इंग्लैंड कहाँ से पास किया था ?

मुं०—यहीं गोरखपुर मिशन स्कूल से ।

गं०—मैं भूलता नहीं तो जब मैं पाँचवीं में था आप इंग्लैंड में थे ।

मुं०—आपके पिता का नाम ?

गं०—ज्वालाशंकर । वह यहाँ जजी के मुंसरिम थे और वकालत पास हो जाने पर इस्तीफा देकर जिस साल मैं इंग्लैंड पास हुआ वतन चले गये और लखनऊ में वकालत करने लगे ।

मुं०—मुं० ज्वालाशंकर को कौन नहीं जानता। वह हमारे पिता के बड़े घनिष्ठ मित्र थे। (भिनकूलाल से) तब आप अपने ही हैं।

भि०—मैं तब भी आप ही का खादिम था और अब भी हूँ।

मुं०—अच्छे खादिम मिले।

भि०—मुंशीजी, मैं कई बार आपके बड़े साहबजादे का कुंडली की नकल आप से माँग चुका हूँ। आपने देने के लिए वादा भी किया था। मिहरवानी करके आज दे दीजिए।

मुं०—अजी जल्दी क्या है? मैंने तो आपसे पहले ही कह दिया कि अभी मुझे शादी-वादी करना नहीं है। बिना बी० ए०, एल० एल० बी० हुए मैं लड़के की शादी करूँगा नहीं।

भि०—शादी आप जब चाहें तब करें, इसके लिए कोई कुछ इसरार थोड़ा ही करता है। न हम आप पर जोर ही दे सकते हैं। हमारी इलतजा तो यही कि आप नकल दे दें।

मुं०—जल्दी क्या है। दे दी जायगी।

भि०—आज फुर्सत का दिन है। आपको कहीं जाना-आना भी नहीं है। कुंडली मंगवा भेजिये, भाई साहब नकल उतार लेंगे।

मुंशीजी ने बहुत बचाना चाहा पर दोनों भाइयों ने इतना इसरार किया कि वह मजबूर हो गये और खिदमतगार को बुला कर कहा कि जाओ भीतर से कुंडली का मूँठा माँग लाओ। खिदमतगार भीतर गया और कुंडली का मूँठा ले आया।

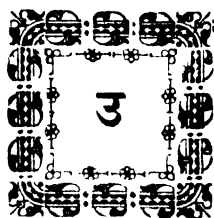
मुंशीजी ने उसे खोलकर कुण्डली निकाली और गंगाशंकर के आगे रखकर कहा—लीजिये, आप इसरार ही करते हैं तो नकल कर लीजिए। गंगाशंकर ने अपने पाकेट से पेंसिल निकाली और नोटबुक पर नकल करने लगे। इसी बीच में मुंशीजी ने रोककर कहा—भाई ठहरिये, कागज कलम दवात मँगाये देता हूँ। यह नकल का दस्तूर नहीं है। रमधनिया, कलम दवात कागज ला और भीतर से जरीसी हलदी पिसी हुई ले आ।

रमधनिया कलम दवात कागज ले आया। गंगाशंकर नकल करने लगे। वह हलदी के लिए भीतर गया। मुंशियाइनजी ने पूछा—क्या काम है? उसने कहा जान पड़ता है कि किसी को कुण्डली की नकल देंगे। मुंशियाइन की बाँछें खिल गईं। पूछा किसकी कुण्डली की? रमधनिया ने कहा—बड़कू की और किसकी? मुंशियाइन से इतनी बातें कह वह हलदी लेकर आया। मुंशीजी ने मंगलं भगवान् विष्णु करके हलदी छिड़की और नकल दे दी।

नकल जेब में रख गंगाशंकर और फ़िनकूलाल ने मुंशीजी से विदा माँगी और प्रणाम कर उठे। चलते समय मुंशीजी ने गंगाशंकर से कहा—अभी तो दो-चार रोज आप यहाँ रहियेगा कृपा कर फिर दर्शन दीजियेगा। फ़िनकूलाल से तो कभी कभी मुलाकात भी होती रहेगी पर आपके दर्शन दुर्लभ हैं।

यह कहते हुए मुंशीजी दोनों भाइयों को इक्के तक पहुँचाने आये और इक्का चले जाने पर अपनी बैठक में लौट आये।

तेरहवाँ परिच्छेद



एक दिन कलकटर साहब ने जब गयासिंह को अपने इजलास से बाहर निकलवा दिया तो बाहर लोग उसे घेर कर खड़े हो गये । पंडित हरिनाथ ने उस लड़की को गोद में उठा लिया और एक ऊँची जगह पर खड़े होकर व्याख्यान देने लगे । आपने कहा—

भाइयो ! इस बालिका को देखो, (उसे कन्धे पर उठा कर) इसकी अवस्था अधिक से अधिक पाँच वर्ष की होगी । इसका बाप जो यहीं मौजूद है इस बात को स्वीकार करता है, बल्कि अदालत में इजहार दे चुका है, कि इसका विवाह तीन वर्ष हुए हो चुका है जब कि यह अच्छी तरह बोल नहीं सकती थी । आप लोग हिंदू जाति की गिरी दशा के नमूने को देख लें । फिर भी इसका बाप कहता है कि मैंने इसका विवाह ८२ वर्ष के एक बूढ़े के साथ किया था । आप लोग इसे आँख वाला कहेंगे या अन्धा । फिर भी यह कहता है कि अपने बेटा बेटी का कल्याण सभी चाहते हैं । बतलाइये तो सही इसमें इसने इस अवोध बालिका का कौनसा हित और कल्याण समझा और किया । हमारे देश में बाल-विवाह और अयोग्य वर-वधू के विवाह के कारण विधवाओं की संख्या दिनोदिन बढ़ती चली जा रही है । किसी भी देश में ऐसा भयानक दृश्य

देखने में नहीं आता । इस पर हमारे देशवालों की शेखी का यह हाल है कि हम वसिष्ठ, विश्वामित्र, रामकृष्ण, इत्यादि के वंश के हैं । हमारे यहाँ विधवा-विवाह कभी नहीं हुआ, विधवा चाहे मुसलमान हो जाय, ईसाई हो जाय, भ्रूण हत्या करे, पर हम उसका विवाह करके उसके जन्म को न सुधारेंगे । वह कहते हैं कि विधवा होना पूर्वजन्म के पाप का फल है । हमें इससे इनकार नहीं है । शास्त्रों की आज्ञा हमारे सिर पर । आप लोग तनिक बुद्धि से काम लें, कि ऐसी दशा में जिसका उदाहरण यह अनजान बालिका है, विधवा होना इस बालिका के पूर्वजन्मों के कर्म का फल आप कहेंगे अथवा इसके आँख रखते हुए अन्धे बाप के कर्म का फल ?

हिंदू जाति बाल-विवाह के कारण नाश होती जा रही है । उसके बल, बुद्धि, पराक्रम और साहस सब जाने रहे हैं । संसार में वह एक मृतप्राय जाति है और गिनी जाती है । भाइयो ! अब भी चेतो और बालविवाह का परित्याग करो । हमारे पंडित पुरोहित कहेंगे कि, शास्त्रों में विधवाविवाह का निषेध है । पर क्या वह किसी भी शास्त्र या पुराण से कोई वाक्य या उदाहरण दे सकते हैं जिससे ऐसी अज्ञात बालिका का विवाह करना शास्त्र-संगत सिद्ध हो । फिर हम नहीं समझते कि इस प्रकार का कृत्य क्यों विवाह माना जावे । यह तो नाटक के खेल के विवाह या रामसीता के लीला-विवाह से भी गया बीना है । हम प्रतिवर्ष देखते हैं कि हमारे देश के

नगर नगर, गाँव गाँव में (रामलीला में) दो बालकों में एक को सीता, दूसरे को राम का स्वाँग बनाकर विवाह कराया जाता है। विवाह के सारे कृत्य बड़े सामान और समारोह से किया जाता है। पूजा होती है, कन्यादान होता पाणिग्रहण कराया जाता है। पर लोग उसे स्वाँग ही समझते हैं और उन दोनों बालकों का विवाह संबंध कोई स्वीकार नहीं करता और यदि दैवयोग से ईश्वर न करे वह लड़का जो राम बना था मर जाता, तो दूसरा लड़का जो सीता बना था कभी विधवा न माना जाता। फिर कोई कारण और शास्त्र का प्रमाण ऐसा नहीं मिलता कि इस खेल के विवाह को जिसे शास्त्र की परिभाषा में विवाह कह ही नहीं सकते क्यों विवाह माना जावे और ऐसे स्वाँग के संबंध को हम वैवाहिक संबंध मानें और ऐसे विवाह में कन्या के स्थान पर एकड़कर बैठाई हुई लड़की विवाहिता या विधवा क्यों मानी जाय।

भाइयो ! विवाह में वर-वधू को कुछ प्रतिज्ञा अग्नि को, सूर्य को, ध्रुव को साक्षी देकर जन समाज के सामने करनी पड़ती है। वह प्रतिज्ञा वैदिक भाषा में और वैदिक छंदों में है। विधवा की प्रथा जिस समय चली थी उस समय लोग वैदिक भाषा बोलते थे। पढ़े बेपढ़े सब उसे समझते थे। वही उनकी बोली थी। वह प्रतिज्ञायें अब तक भी उसी भाषा में की जाती हैं। चारों संस्कार करानेवाले पंडित भी उसके अर्थ को न समझते हों। पर इससे क्या कोई समझदार मान सकता है

कि केवल विवाह के समय पंडिता के उन मंत्रों के पढ़ देने मात्र से विवाह की पूर्ति मान ली जावे अथवा वर-कन्या के उनके समझने की योग्यता रखने से ? समझने की योग्यता रखने से हमारा यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि वर कन्या में वैदिक भाषा को समझने की योग्यता हो क्योंकि वैदिक भाषा युगांतर की भाषा है। उसे तो कोई ही विद्वान् समझ सकता है। बड़े बड़े पंडित भी नहीं समझते। यहाँ समझने की योग्यता रखने से मेरा यह अभिप्राय है कि यदि वह मंत्र आजकल की बालचाल में होते अथवा यदि कोई उनका आशय आजकल की बोली में गद्य या पद्य में कहता तो वे उसके आशय को समझ सकते या उनमें उसके समझने की योग्यता होती। उनमें इतनी बुद्धि होनी चाहिए कि वह विवाह-जैसे पवित्र कृत्य के उद्देश्य को समझ सकें।

भाइयो, यदि तुम यह चाहते हो कि तुम्हारी संतान बल बुद्धि, पराक्रम और साहस संपन्न हों, तुम्हारी ललनाएँ सुखी रहें, तुम्हारी जाति जागती जाति बने तो बाल विवाह के भयानक राक्षस से जो उसकी हड्डियाँ चबानेवाला है बचाओ। बाल-विवाह का परित्याग करो, बालकों और बालिकाओं को ब्रह्मचर्य्य पालन कराओ, उनको शारीरिक व्यायाम कराओ। यदि आप पुरुषों के लिए २५ वर्ष और स्त्रियों के लिए १६ वर्ष की आयु को आजकल के लिए अनुपयुक्त समझते हों तो २० और १४ नियत कर दो

और ऐसे विवाहों को जो नियत आयु से कम अवस्था में किये जायँ उसे अविहित मानिए और विवाह संबन्ध को नाजायज समझिए । राजदंड तो ऐसे अविहित विवाह करने और करानेवाले को आप दे नहीं सकते न दिला ही सकते हैं । समाज-दंड दीजिए । इसी प्रकार यह भी नियत कर दीजिये अमुक अवस्था तक पुरुष और स्त्रियों का विवाह हो सके, उसके अतिक्रमण कर जाने पर उनका विवाह न हो और हो तो अविहित माना जाय । इस प्रकार का बन्धन बाँधने से विधवाओं की संख्या घटेगी और आपका कल्याण होगा ।

इस प्रकार की विधवाओं के लिए जिनकी अवस्था कम हो आश्रम खोलिए । वहाँ उनके भरण-पोषण और शिक्षा का प्रबन्ध कीजिए । उन्हें ब्रह्मचर्य पालन कराइये । चिकित्सा, धाय-कर्म इत्यादि सिखाइए । वे आपकी कन्याओं की शिक्षा होंगी, आपके घरों में स्त्रियों और बालकों की चिकित्सा और शुश्रूषा करेंगी । यदि वह अपना विवाह करना चाहें तो उनका विवाह किसी सवर्ण योग्य पुरुष से करा दें । वह उसकी गृहदेवी बनेगी । काशी आदि धामों में विधवा आश्रम खोलने का प्रयत्न करें । प्रतिवर्ष सहस्रों विधवाएँ वहाँ अपना तीर्थ समझ बड़ी श्रद्धा-भक्ति से वास करने जाती हैं और अपना जीवन स्नान और पूजा-अर्चा में बिताती हैं । पर वहाँ विषयी गुण्डों और व्यभिचारियों के हाथ में पड़कर अपना सतीत्व खो आजन्म दुःखमय जीवन व्यतीत करती हैं । भ्रूण-हत्या करती

हैं अथवा पतित पापमय जीवन बिताती हैं। भाइयो, बहुत सोये अब तो जागो। मैं अंत में अपने ब्राह्मण भाइयों से यही प्रार्थना करता हूँ कि भाइयो, तुम देश के नेता हो, अपने स्वार्थ के लिए, पापी पेट के लिए, अपने देश अपनी जाति के अधःपतन के कारण मत बनो ! भूठमूठ शास्त्र के विधिनिषेध की आड़ लेकर हिंदू-जाति का सत्यानाश मत करो।

व्याख्यान समाप्त होने पर पं० विद्याधरजी ने गोरखपुर में एक विधवाश्रम खोलने के लिए अपील की। सब छोटे बड़े जो वहाँ मौजूद थे चंदा देने लगे। बा० लक्ष्मणस्वरूप ने वकालत खाने और मुख्तारखाने से चंदा एकत्र करने का भार अपने ऊपर लिया। ठा० अमानसिंह और गुमानसिंह ने २५) उसी दम निकालकर पं० हरिनाथ तिवारी को विधवाश्रम के लिए दिया। पंडित हरिनाथ तिवारी ने ठाकुर साहब से कहा— मेरी एक प्रार्थना है, आज्ञा हो तो करूँ ?

गुमान०—हाँ अवश्य आज्ञा कीजिए। हम आपकी आज्ञा का माथे पर रखेंगे।

ह०—ठाकुर साहब, बात चाहे सच हो या भूठ हो, आप इस बालिका को अपने साथ घर ले जाइए, और इसका भरण-पोषण कीजिए। आपके घर अनेकों का पालन होता है। यह तो आप ही की जाति की है। आप इस दुष्ट नीच गया-सिंह की करतूत के ऊपर मत देखिये, अपनी बड़ाई पर जाइये। यह पुण्य का काम है। अपयश को बचाइये। अब

चाहे इसका विवाह ठाकुर साहब से हुआ हो या न हुआ हो, यदि यह बालिका बड़ी होकर कुछ लांछन योग्य काम करेगी तो सब यही कहेंगे स्वर्गीय ठाकुर साहब की स्त्री और आपकी माता ने ऐसा किया। मेरी प्रार्थना पर ध्यान दीजिये और इसे अपने साथ लेते जाइये।

गुमान०—पंडितजी, आपकी आज्ञा शिरोधार्य है पर उस दुष्ट गयासिंह से तो पूछें वह इसे हमें देने और हमारे सिपुर्द करने पर राजी है। अगर वह देता है तो चलकर यह वाजदावा लिख दे कि अब मुझसे इस लड़की से कोई वास्ता नहीं—ठा० गुमानसिंह और अमानसिंह इसके संरक्षक और मालिक हैं।

हरि०—अच्छा मैं पूछता हूँ। (गयासिंह के पास जाकर) ठाकुर, तुम इस लड़की को ठा० अमानसिंह और गुमानसिंह को देने हो ?

गया०—तैं उन्हें क्यों दूँ। लड़की मेरी है कि उनकी ? उनसे वास्ता ? मैं इसका बाप हूँ, जो चाहूँ इसे करूँगा।

ह०—तुम्हीं तो कहते हो कि इसका विवाह ठा० अमानसिंह और गुमानसिंह के बाप ठा० रामसिंह से हुआ था, फिर तुम इसे उनके साथ कर क्यों नहीं देते। अब रामसिंह नहीं हैं तो घर के रक्षक उनके पुत्र अमानसिंह और गुमानसिंह हैं। वह इसका पालन करेंगे ?

गया०—उनको परवरिश करना है तो लिख दें मेरे नाम दस-बीस बीघा जागीर।

ह०—तुम्हें क्यों जागीर लिख दें ? पालन पोषण तो इस लड़की का न चाहिए ?

गया०—और मैं इसका बाप हूँ। पंडित, मैंने यह सब इस-लिये किया है कि कम से कम चार-पाँच सौ गुजारे के लिए मिलेंगे। नहीं तो खाने पहनने को तो इसे जहाँ कर दूँगा पावेगा।

हरि०—तो क्या अब इसे और कहीं ब्याहने की ठानी है दुष्ट, पापी !

गया०—आप जो चाहें सो कहें। पर मैं तो इसका चार सौ लूंगा चाहे ठाकुर गुमानसिंह और अमानसिंह दें चाहे कोई और राजपूत।

हरि०—ठाकुर साहब तुम क्षत्रिय हो, द्विज हो। कहते हो इसका ब्याह हो गया है सो भी एक रईस ठा० रामसिंह से। फिर तुम यह क्या अपने मुँह में कालिख लगा रहे हो और अपनी जाति को कलंकित करते हो। स्वर्गीय ठाकुर साहब की आत्मा तुम्हें क्या कहेगी ?

ग०—कहेगी क्या ! मेरी लड़की है मैं इसे जो चाहूँगा करूँगा।

हरि०—भाई इसके लिए अगर तुम हठ ही करते हो तो मैं तुम्हें कुछ दिलवा दूँ। अब तो तुम इसे ठा० रामसिंह की विवाहिता बना ही चुके। तुम्हारी क्या, तुम तो सब धो पी चुके हो, ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह की बद-नामी है।

ग०—तो फिर सौ रुपये दिलवा दीजिये । मैं इसे उनके हवाले कर दूँगा ।

ह०—नहीं, २५) ले लो और अगर वह नहीं देंगे तो मुझसे लो (हाथ में रुपया दिखाकर) और जाकर पुलिस में यह लिखवा दो कि मैं यह लड़की ठा० अमानसिंह और गुमानसिंह को पालन-पोषण करने के लिए देता हूँ, अब मुझसे इससे कोई वास्ता नहीं है । वह इसे ले जाकर अपने यहाँ रखें और इसका पालन करें । वही आज से इसके मालिक हैं ।

ठा०—अच्छा, लाइए ।

हरि०—(ठा० गुमानसिंह और अमानसिंह से) ठाकुर साहब, बड़ी कठिनाई से दुष्ट राजी हुआ । २५) माँगता है और बाजदावा लिखने को तैयार है । आप लिखा लीजिये । रुपया देने में आप हिचकें तो मैं दिये देता हूँ । इसमें आपके पिता लोकापवाद से छुट्टी पाते हैं । आप आश्रम बन जाने पर बालिका को आश्रम में भेज दीजियेगा । आश्रम उसका पालन और शिक्षण करेगा ।

ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह राजी हो गये और २५) निकालकर हरिनाथजी को दे दिया । वह गयासिंह के पास गये और उसे पुलिस कोतवाली में ले जाकर बाजदावा लिखवाकर बालिका को ठाकुर अमानसिंह और गुमानसिंह के साथ कर दिया । वह उसे साथ लेकर अपने घर गये । चलते समय हरिनाथजी से कहा कि जब विधवा आश्रम तैयार हो

जाय तो आप मुझे सूचित कीजियेगा । मैं इसे आश्रम में शिक्षा के लिए भेज दूँगा और २०) मासिक इसके व्यय के लिए देता रहूँगा ।

हरिनाथ ने ठाकुर साहब की उदारता को धन्यवाद दिया ।

चौदहवाँ परिच्छेद



च फरवरी सन १८९४ के गजट में छपा कि मि० विलियम ग्रिव प्रोवेशनरी डिप्टी कलक्टर मुकर्रर हुए और गोरखपुर के रायबहादुर रामनारायणदास की कोर्ट-आफ-वार्ड्स

रियासत के मैनेजर नियत होकर गोरखपुर भेजे गये । रायबहादुर नारायणदास के परदादा मुसलमानी राज्य के समय में दिल्ली से गोरखपुर आये थे । उनका नाम था गोपालदास । जाति के अगरवाला वैश्य थे और उस समय बीमा और हुण्डी-पर्वे का काम करते थे । उनकी कोठी गंगा-विष्णु गोपालदास के नाम से मशहूर थी । मुसलमान काल में आजकल की भाँति डाक से मनीआर्डर या रजिस्टरी द्वारा रुपये और नोट नहीं जाते थे । डाक का मुहकमा नहीं था । रेल का सिलसिला भी नहीं था । जो काम आज दिनों में होते हैं उस समय महीनों और सालों में होते थे । वाणिज्य-व्यापार का एकमात्र द्वार नौका थी और बड़ी-नावें

मालों से लदी हुई नदियों की छाती पर से एक स्थान से दूसरे स्थान जाती रहती थीं। राह में अकसर लुट जातीं और डूब जाती थीं। इस लिए भेजनेवाले अपनी नाव को बीमा करा कर भेजते। पाठक जानते होंगे कि बीमा एक प्रकार का जुआ है। उसमें बीमा लेनेवाला बीमा करानेवाले से कुछ रकम बीमा कराई पाता था और उस माल की जिसका वह बीमा लेता किसी नियत स्थान और किसी नियत समय तक पहुँचने का जिम्मेदार होता था। उस समय तक न पहुँच जाने पर बीमा करानेवाले को, या जिसे वह उस माल को बदल वह रकम जिसके लिए या जितने पर बीमा कराया गया हो भर देता था। रुपये एक स्थान से दूसरे स्थान पर इन्हीं, कोठी-वालों की हुण्डी द्वारा भेजे जाते थे। रुपया और हुण्डियावन लेकर एक जगह की कोठी दूसरी जगह की कोठी के नाम हुण्डी लिख देती थी। उस हुंडी को दिखलाने पर दूसरी कोठी दिखलानेवाले को या जिसके नाम हुंडी का पाना होता था रुपया दे देती थी। यही काम गोरखपुर की गंगाविष्णु-गोपालदास की कोठी में होता था। दिल्ली, आगरा, पटना, मुर्शिदाबाद, काशी आदि नगरों में कोठियाँ थीं जिन पर इस कोठी की हुण्डी होती थी और जिनकी हुण्डी यहाँ सकारी जाती थी। लाखों रुपये का कारबार नित्य का था। जब अंगरेजी राज्य हुआ और डाकखाने और रेल जारी हो गई, मनीआर्डर से रुपये आने-जाने लगे तो कोठियों का काम मंदा पड़ गया

और अंत को बन्द हो गया। फिर यह लोग सूद पर रुपया देने लगे। अंगरेजी राज्य के पूर्व जमींदारों को अपनी भूमि रिहन करने वा बेचने का हक नहीं था। वे असामियों से लगान जो प्रायः बटाई होता था वसूल करते थे और अपना मुनाफा या हक निकालकर बाकी गल्ला या तो मुस्ताजर को दे देते थे और उसकी मार्फत बेचकर मालगुजारी बादशाह के नाजिम के पास अदा करते थे या उसे आप बाज़ार दर पर लेकर अपने घर से नक़्द रुपया दाखिल करते थे। अंगरेजी राज्य होने पर जमींदारों को रिहन और बेची करने का हक सरकार कम्पनी से मिल गया। उनकी आवश्यकताएँ बढ़ीं और उनको आमदनी से अधिक रुपये की जरूरत पड़ी। उस समय ये कोठीवाले अपना रुपया उनको ऋण देने लगे और धीरे धीरे बहुतेरे जमींदार और तालुकेदार इनके शिनया हो गये। कर्ज न अदा होने पर अदालत में नालिश करनी पड़ी और वह जायदाद नीलाम होकर उनके हथे चढ़ी। इस प्रकार कोठीवाले से जमींदार हो गये। वाणिज्य-व्यापार छोड़ वे रईसी ठाट-बाट में लगे। फिर इनको सरकारी खिताबों का शौक हुआ। बड़ी बड़ी जियाफतें और डालियाँ साहब लोगों को देने लगे। चंदे में बड़ी बड़ी रकमें लिखने लगे और व्यसनों में फँस कर तबाह हो चले। रामनारायण दास के बाप के समय तक तो बनियों की चाल रही। उनके मरते ही रामनारायणदास ने रईसी ठाट बनाया। चिड़ियाखाना बनवाया और हजारों रुपये

खर्च करके देश देश की चिड़ियाँ मँगाकर रखी। अँगरेजों के लिए बड़ी बड़ी कोठियाँ लाखों रुपये लगवाकर बनवाये जिसमें कलक्टर, कमिश्नर और जज लोग नाममात्र किराये पर या बिना किराये रहते थे। प्रति मास उनका भोज होता जिसमें सहस्रों रुपया लगता। बाप-दादों के मकान तुड़वाकर कोठी की जगह अँगरेजी ढंग का बंगला बनवाया। दो दोरंडियाँ काशी और लखनऊ से बुलाकर पाँच पाँच सौ रुपये माहवार पर नौकर रखीं। एक अँगरेज प्राइवेट सिक्रेटरी नियत हुआ। कई आदमी उसके दफ्तर के लिए रखे गये। इस फजूल खर्च से रियासत बरबाद होने लगी। गवर्नमेंट ने इनकी कारगुजारी से प्रसन्न हो इन्हें रायबहादुर का खिताब दिया। इन्हीं के यहाँ एक अनाथ भंगी का बालक था जिसका नाम था गरीब। बेचारा सचमुच गरीब था। उसकी अवस्था ५-६ वर्ष की थी। बाप-माँ हैजे से मर गये। कोई पालन-पोषण करनेवाला नहीं था। रायसाहब के चिड़ियाखाने में उसका बाप नौकर था। उसके मरने पर रायसाहब गरीब बालक को अपने यहाँ से जूठा खाना दिलवा देते। वह उनकी कोठी और चिड़ियाखाने में भाड़ लगाता और दिन रात उनकी कोठी के बरामदे में एक कोने में बैठा रहता। एकदिन की बात है कि सवेरे रायसाहब की कोठी में वह भाड़ लगाता था। बेचारा लड़का तो था ही, मेज के सामने जिस कुर्सी पर रायसाहब बैठते थे अकड़कर बैठ गया। इसी बीच में रायसाहब सोकर उठे

और कोठी में आये। गरीब को अपनी कुर्सी पर लाने के लिये बैठ देखा तो आग बबूला हो गये। उल्टे पाँव लौट गये और नौकर से कहा हंटर उठा ला। हंटर लेकर कोठी में पहुँचे। बेचारे गरीब के पीठ की चमड़ी उकेलने लगे। मारते मारते बेदम कर दिया। जब गरीब बेहोश हो गया तो उसे उठवाकर बरामदे में एक कोने में डाल दिया। घंटों में बेचारे गरीब को होश आया। दिन-भर तो वहीं पड़ा रहा, सायंकाल उठकर चलता बना। फिरता फिरता मिशन स्कूल के कम्पाउंड के फाटक पर पहुँचा। उस समय घोष बाबू मिशन स्कूल के हेडमास्टर थे। बड़े दयालु। वह हाते के भीतर ही रहते थे। उस समय घोष बाबू टहल रहे थे। उनकी आँख गरीब पर पड़ी। उसे इशारे से अपने पास बुलाया और सब हाल दरियाफत कर अपने घर ले गये। उसके कपड़े बदलवाये, खाने को दिया, दवा कराया। दो एक दिन में जब गरीब चंगा हो गया तो उसे गिरजे में ले जाकर पादरी साहब से बपतिस्मा दिलाया गरीब का नाम विलियम रखा गया। मिशन से उसका भरण-पोषण होने लगा और घोष बाबू ने उसका नाम मिशन स्कूल के दर्जा ८ में लिख लिया।

गरीब अब गरीब से विलियम ग्रिव हो गया। वह स्कूल में पढ़ने लगा। मिशन की ओर से उसको चार सूट कपड़े के और दो जोड़े जूते दिये गये। सवेरे चाय मिलती। फिर खाना। तीसरे पहर टिफन और सायंकाल रोटी गोश्त। गरीब की

सूरत महीने भर में बदल गई । कोई कह नहीं सकता था कि यह वही गरीब है जो राय रामनारायणदास की कोठी और चिड़ियाखाने में भाड़ू दिया करता था । गरीब बड़ा जहीन और परिश्रमी था । उस समय आजकल की तरह यह नहीं था कि लड़कों को साल में एक ही बार तरकी मिले । तेज लड़कों को सालभर में दो दो बार तरकी होती थी । कितने डबल प्रमोशन पाते थे । गरीब ने अपने परिश्रम से एक ही साल में आठवाँ, और नवाँ दर्जा पार कर लिया और सालाना परीक्षा में सातवें दर्जे में अव्वल हुआ । हेडमास्टर साहब ने उस पर प्रसन्न होकर डबल प्रमोशन दे दी । इस प्रकार गरीब साल ही भर में आठवीं से पाँचवीं में जा पहुँचा । पाँचवीं दर्जे की छमाही परीक्षा में वह फिर अपने दर्जे में अव्वल हुआ और सालभर के भीतर ही चौथी में पहुँचा । चौथी में पहुँच उसने वही मिहनत की और तीसरी चौथी दोनों जमायतों की किताबें उसने तीन ही महीने में पढ़ डालीं । हेडमास्टर साहब तो जानते ही थे कि गरीब फेल हो जानेवाला नहीं । उन्होंने पादरी साहब से कहकर उसकी फीस मिडल क्लास की परीक्षा के लिए भेज दी । गरीब दूसरे वरस मिडल की परीक्षा के लिए गया और परीक्षा में न केवल अव्वल दर्जे में पास हुआ बल्कि ४० के भीतर आया और सरकारी वजीफा भी प्राप्त किया । फिर दो वर्ष मिशन स्कूल में इंट्रेंस-क्लास में पढ़कर इंट्रेंस परीक्षा दी और उसमें ग्रिव प्रान्त भर में पाँचवाँ

हुआ। गोरखपुर में उस समय कालिज नहीं था। हेडमास्टर साहब ने पादरी साहब से ग्रिव को कालिज भेजने के लिए कहा।

पादरी साहब गरीब पर बड़े प्रसन्न हुए और उसे इलाहाबाद के यमुना मिशन में पढ़ने के लिए भेज दिया। वहाँ गरीब ने चार वर्ष रहकर बी० ए० पास किया। वह एम० ए० भी पढ़ना चाहता था पर यमुना मिशन के प्रिंसिपल ने उसे डिप्टी कलेक्टर के लिए नामजद किया और गवर्नमेंट से वह मंजूर हो गया। गरीब गरीब से मि० विलियम ग्रिव हो गया।

इसी बीच में रायबहादुर नारायणदास की फजूल खर्ची से रियासत तबाह हो गई। जिसके पूर्वज लाखों रुपये औरों को कर्ज देते और उनकी जायदाद नीलाम कराने के लिए ताक लगाते थे आज वह खुद कर्ज के बोझ के नीचे दबकर पिसा जा रहा है। कलेक्टर साहब ने उनकी रियासत को बरबाद होते देख उसको कोर्ट आफ वार्ड्स में लिए जाने के लिए कमिश्नर साहब के यहाँ रिपोर्ट की। साहब कमिश्नर ने बोर्ड में सिफारिश की और बोर्ड ने उनके इलाके को कोर्ट आफ वार्ड्स किया। मुंशी ज्वालाप्रसाद डिप्टी कलेक्टर के सिपुर्द उसका प्रबंध कर दिया। कोर्ट आफ वार्ड्स के प्रबंध में आ जाने से न वह चिड़ियाखाना रह गया और न वह दोनों रंडियाँ रह गईं। कोठियों का माकूल किराया वसूल होने लगा। रायसाहब के खर्च के लिए माकूल माहवारी पेंशन मुकर्रर हो

गई । खुशामदियों और चुगुलखोरों के पाँव उखड़ गये । छः महीने तो रियासत का प्रबंध मु० ज्वालाप्रसादजी के सिपुर्द रहा, सातवें महीने मि० विलियम ग्रिव डिप्टी कलक्टर नियत होकर उसके मैनेजर मुकर्रर हो गोरखपुर आये । भगवान् की महिमा ! जिस गरीब को राय रामनारायणदास ने कुर्सी पर बैठ जाने के लिए हंटरो से मार मार चमड़ी उधेड़ दी थी आज वही गरीब उसी रामनारायणदास की रियासत का मैनेजर है, जिस कोठी में बैठने के कारण वह पिटा था आज उसी कोठी में ठहरता है, उसी कुर्सी पर बैठता है और रायसाहब उससे हाथ मिलाने जाते हैं । भगवान्, तेरी महिमा अपरम्पार है ।

पंद्रहवाँ परिच्छेद



पंडित गंगाधर पंडितानी को गाड़ी पर बैठाकर कचहरी से चले और मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ आये । वहाँ उनका बूढ़ा श्वशुर अधीर मन से अपनी लड़की को देखने के लिए पपीहा सा स्वाती के बूँद की प्रतीक्षा कर रहा था । गाड़ी रुकी । उसमें से पंडित गंगाधर और पंडितानी उतर कर जहाँ वह ठहरे थे जा ही रहे थे कि बुड़्दे की आँख पंडितानी पर पड़ी । वह मारे हर्ष के गद्गद हो गया और

दौड़ा। पंडितानी ने उसे देखकर पैर छूकर प्रणाम किया। बुढ़्ढा आशीर्वाद देने लगा और उनके साथ डेरे पर आया। तीनों बैठ गये। नौकर पानी लाया। पंडित गंगाधर ने उठकर हाथ मुँह धोया। फिर नौकर ने पंडितानीजी से कहा कि पानी रखा है, उठ कर हाथ मुँह धो डालिये। पंडितानीजी उठकर भीतर आंगन की ओर गई और हाथ मुँह धोकर बैठक में आई। नौकर ने पानदान लाकर सामने धर दिया। पंडितानी ने पान लगाये और गंगाधरजी को देने लगीं। गंगाधर ने पान हाथ में ले लिया और हँसकर बोले—तुम सात दिन ईसाइयों के साथ उनके बंगले में रह आई हो, अब बिना इसका इतमीनान हुए कि तुम वहाँ बेधर्म नहीं हुई, तुम्हारे हाथ के पान कौन खायेगा ?

पं०—क्या अब भी आपको इतमीनान नहीं हुआ ? मैंने तो अपने इजहार में सारी बातें सच्ची सच्ची बयान कर दी हैं। उसे ठीक मानना या न मानना आपके अख्तियार में है।

गं०—(पान मुँह में डालकर) परीक्षा की बात कौन जानता है। तुम जानो और तुम्हारा ईमान जाने।

पं०—ईश्वर तो था, वह तो देखता था। उससे तो कोई बात छिपी नहीं है। भगवान् जाने, यदि मुझ पर किसी के हाथ का पानी पीने या कुछ खाने के लिए जोर देती तो मैं अपने प्राण दे देती। हाँ बाहर नहीं निकल सकती थी। जी धकधक करता था कि निकलकर कहाँ जाऊँ और कैसे क्या करूँ।

गं०—पर वहाँ पड़ी कब तक रहतीं। महीने दो महीने में वह तुम्हें अपने वश में कर ही लेती। भला जब जंगली जानवर को लोग पालतू बनाकर हिला-मिला लेते हैं तो तुम तो आदमी थीं तुम्हें सुलझाना क्या बड़ी बात थी ?

पं०—तो इसमें दोष किसका है ? आप ही लोग तो हम स्त्रियों को घर की चारदीवारी में चिड़ियों की तरह बन्द कर के, हमें डरपोक, निस्साहसी और कादर बना डालते हैं। बहुत खुश हुए तो कहा लड़कियों के स्कूल में जाकर पढ़ आओ, सो भी बैलगाड़ी में, या किसी मिस से कह दिया कि आकर पढ़ा जाये। भला इस शिक्षाभ्यास से क्या आप स्त्रियों को शिक्षित बना सकते हैं। इससे उनको भाषा का ज्ञान भले ही हो जाय, पर बुद्धि और साहस आदि जो शिक्षा के प्रधान गुण हैं नहीं आ सकते।

गं०—ता तुम क्या चाहती हो, बालक और बालिकाओं को एक ही स्थान में शिक्षा मिला करे और दोनों कंधे से कंधे मिला कर बैठें ?

पं०—यह तो हम कभी नहीं कहतीं कि कन्याएँ और बालक एक ही पाठशाले में पढ़ें। मेरा तो कुछ अभिप्राय ही और है। मैं तो कहती हूँ कि आज-कल की शिक्षा से यदि कुछ लाभ है तो यही कि कुछ सीधे बोलना आ जाता है। पर क्या यही शिक्षा का फल है। आप तो जिले-भर की पाठशालाओं को देखते-फिरते हैं, आप ही बतलाइये कि पाठशालाओं

में सिवा भाषा के (सो भी यथावत् नहीं) और कुछ गणित के और भी कुछ बालकों को सिखाया जाता है ?

गं०—क्यों नहीं, इतिहास और भूगोल आदि की भी शिक्षा दी जाती है ?

पं०—पर इससे क्या होता है । पुस्तकों में लिखकर या लिखी हुई जितनी बातों की शिक्षा दी जाती है मैं तो उन सबको भाषा ही की शिक्षा में लेती हूँ । आपकी पाठशालाओं में लड़कों को क्षेत्र के प्रश्न कराये जाते हैं पर क्या प्रश्न कर लेने से वह क्षेत्र को माप भी सकते हैं ? मैं जानती हूँ पढ़ाने वालों को क्या आपको भी यदि कोई खेत मापने को कह दिया जाय तो आप नहीं माप सकेंगे । भला उस शिक्षा से क्या लाभ जो काम में न आ सके ?

गं०—तो यह कहो तुम्हारा अभिप्राय व्यावहारिक शिक्षा से है ।

पं०—हाँ उसे आप कुछ भी कहें । मुझे उसके लिए शब्द नहीं आते । मेरा जो भाव था मैंने बतला दिया । आप उसका नाम जो चाहें रख लीजिए । आगे के लोगों में और आजकल के लोगों में भेद यही है कि वह जितना जानते थे या जितना सीखते थे उसमें से सब को नहीं तो बहुतों को कर सकते थे । आजकल के लोगों को जितनी बातों की शिक्षा दी जाती है उनमें वह एक को भी नहीं कर सकते । यही कारण है कि आगे के अनपढ़ वा कम पढ़े लोग जो काम

कर गये हैं आजकल के बड़े बड़े एम० ए० बी० ए० नहीं कर सकते । हाँ रटते रटते अपने मानसिक और शारीरिक बल को भले ही खो बैठते हैं ।

गं०—कहना तो तुम्हारा ठीक है पर जब तक शिक्षा का सूत्र विदेशियों के हाथ में है, जब तक शिक्षा का उद्देश्य दास बनाना है, जब तक शिक्षा इस लिये दी जाती है कि हमारे बालकों और बालिकाओं का समय नष्ट किया जावे, उनकी शारीरिक और मानसिक उन्नति न हो सके, उनके माता पिता शिक्षा के भार के नाचे दबें और निर्धन हो जायें तब तक इसका सुधार होना कठिन है ।

बातें करते करते अन्धेरा हो गया । मुंशी दुर्गाप्रसाद भी कचहरी से आ गये । हाथ मुँह धो ही रहे थे कि नौकर ने कहा— पंडित गंगाधरजी की पंडितानी आ गई । मुंशीजी ने पूछा, कहाँ हैं ? नौकर ने कहा, यहीं पर जहाँ पंडितजी ठहरे हैं ।

मुंशीजी हाथ मुँह धोकर खड़ाऊँ पहने पं० गंगाधर के डेरे पर पहुँचे । पंडितजी उनको देखते ही बोले—आइये ! आइये ! हम लोग बैठे आपकी राह देख रहे थे । पधारिये ।

मुं०—(कुर्सी पर बैठकर) कहिये, बात क्या है ? (पंडितानी से) कहिये कुशल से तो थीं ?

पं०—कुशल कहाँ । यह तो कहिये आप लोगों का दर्शन फिर बदा था । इतना कहकर पंडितानीजी ने सारा समाचार

कह सुनाया—कैसे मिस एलिस ने उनके मन में विश्वास जमाया और उन्हें लेकर उनके घर से अपने बंगले पर, फिर बंगले से स्टेशन ले गई। वहाँ बातों में भुलवाकर उसे लखनऊ ले गई और जनाना मिशन में पहुँचा दिया। वहाँ वह छोड़कर चलती हो गई फिर किस प्रकार सरदार गुरुदत्त-सिंह उनको वहाँ से बरामद कर अपने साथ गोरखपुर लाये। मुंशीजी पंडितानीजी से सारा समाचार सुनकर पंडितानी की दृढ़ता और सरदार गुरुदत्तसिंह के उद्योग और प्रयत्न की प्रशंसा करके बोले—पंडितानीजी, आपकी उस दृढ़ता को जो आपने अपने धर्म की रक्षार्थ प्रदर्शित की युग युग सराहना करता रहूँगा। आप साक्षात् देवी हैं (गंगाधर से) कहिये पंडितजी आप क्या फरमाते हैं ?

गंगा०—मुंशीजी, आप जानते हैं कि यह आज आठ दस दिन के बाद मिली हैं। इतने दिनों तक यह मिशनरियों के ही हाथ में थीं। अभी मुकदमे का फैसला भी नहीं हुआ है। अदालत चाहती तो इन्हें जिसके ऊपर इतमीनान होता सिपुर्द करती। यह तो साहब की कृपा है कि इन्होंने इनको मेरे सिपुर्द किया। अब आप यह बतलाइये कि इस समय इनसे खाना बनवावें या नहीं।

मु०—इनमें लगा क्या है? यह तो उतनी ही शुद्ध हैं जितना कि गंगाजी। पर यदि आपको अपनी बिरादरी का डर है तो अभी मत खाना बनाने के लिए कहिये। मुकदमे से

छुट्टी मिल जाने पर इन्हें हरिद्वार स्नान कराकर अपनी विरादरी में जाइये। वहाँ इनके हाथ का खाइये। मेरी राय पूछने हैं तो पंडितजी इन्होंने तो इतना साहसा किया कि अपने हाथ पानी भरकर, चौका देकर, पका कर, खाया, यदि यह वहाँ कुछ उनका स्पर्श किया खा भी आतीं तो भी मैं इनमें अशुद्धि का लेश न मानता क्योंकि बेवसी में जो कुछ हो जाय उसमें कोई दोष नहीं। हाँ यदि समाज में रहकर कोई हठात् समाज के बधन को तोड़े तो वह त्याज्य है, प्रायश्चित्तीय है और दण्ड के योग्य है।

इसी बीच में पंडितानीजी पान लगाकर ले आई और मुंशीजी को दिया ! मुंशीजी ने हँसकर ले तो लिया पर उसे थाली में रख दिया और कहा—पंडितानीजी, बुरा न मानियेगा। मैंने पान इस लिये नहीं खाया कि अभी मैंने स्नान-संध्या नहीं की। मैं हाथ मुँह धो चुका था कि आपके आगमन का समाचार मिला। मैं वैसे ही उठकर चला आया। दूसरे समय आप जो दें मुझे खाने में कोई आपत्ति नहीं।

गंगा०—पर मुंशीजी यदि पक्की रसोई बनवाई जावे तो क्या हरज है ?

मुंशी—अजी हरज किसी में नहीं यदि आपकी अंतरात्मा शुद्ध हो और कायरता न हो। मेरी समझ में तो किसी में कोई दोष नहीं पर आप अपनी आत्मा को तोल लें।

बूढ़ा—तो फिर पक्की ही बनावें।

गंगा०—फिर तो मुंशीजी, यहाँ भोजन कीजियेगा ?

मुंशी—मेरी राय मानते हो तो पंडितानीजी को हमारे घर भेज दो । वहाँ यह सबके लिए पूरी कचौरी, आदि पकावें और भगवान का भोग लगाकर हम सब वहाँ एक साथ बैठकर प्रसाद पावें ।

गंगा०—बहुत ठीक ।

यह कहकर मुंशीजी स्नान करने गये और पंडितानीजी मुंशीजी के घर में गईं । वहाँ वह बैठकर मुंशियाइनजी से बातें करने लगीं नौकर ने सब सामान किया और पंडितानीजी पकाने लगीं । भोजन तैयार हो जाने पर लक्ष्मीनारायण को भोग लगाया गया । फिर पंडित गंगाधर, उनके श्वशुर और मुंशीजी आदि ने बैठकर भोजन किया । उनके उठ जाने पर पंडितानीजी ने भी स्त्रियों के साथ बैठकर भोजन किया । फिर नौकरों को खाना देकर अपने डेरे पर गईं ।

सोलहवाँ परिच्छेद



न्द्रह फरवरी को मि० डब्ल्यू ग्रिव गोरखपुर आये पर मिशन में जहाँ उनका पालन हुआ था, नहीं उतरे । कारण यह था कि अब न मिशन स्कूल में घोष बाबू थे और न वह पादरी ही थे । इसके अतिरिक्त ग्रिव ने दूसरी भाषा संस्कृत

ली थी और बी० ए० तक संस्कृत दूसरी भाषा लेकर परीक्षा पास की थी। पादरी लोग समझते थे कि ग्रिव संस्कृत पढ़कर पादरी होगा और हिंदूधर्म का खंडन करेगा। पर डिवे-टिंग क्लब में एक बार हिंदूधर्म का महत्त्व” (Superiority of Hindu religion) विवाद का विषय रखा गया। उस समय ग्रिव थर्ड-इयर से फोर्थ-इयर में आया था। यद्यपि रिवरेंड इवान ने जो डिवेटिंग क्लब के प्रधान थे इसका विरोध किया पर क्लब में हिंदुओं की संख्या अधिक थी, उनको आगामी मास के लिए उसे रखना ही पड़ा। डिवेट के दिन ग्रिव ने बड़ी योग्यता से हिंदूधर्म की प्राचीनता और महत्त्व का प्रतिपादन किया। यद्यपि अनेक विद्यार्थियों ने ग्रिव का विरोध किया पर ग्रिव ने उनका खंडन बड़ी युक्ति और प्रमाण से किया और उनको अवाक् कर दिया। यह बात रिवरेंड इवान को अत्यंत असह्य हुआ। उन्होंने अब से उठते समय ग्रिव को अलग ले जाकर कहा कि तुम ईसाई होकर ऐसा करते हो, तुम्हें इसके पक्ष में बोलना न चाहिये था। ग्रिव ने कहा कि आपका कहना उचित है पर मैं विवश हूँ, सत्य को नहीं छिपा सकता, सच पूछिये तो मुझे जितनी सच्चाई हिन्दू धर्म में दिखाई पड़ती है ईसाई धर्म क्या संसार के किसी धर्म में मिलने की आशा नहीं। इवान यह सुन अपने मन में बहुत कुढ़ा और चुपके से बड़े पादरी को लिख भेजा कि ग्रिव को अधिक शिक्षा दिलाने में मिशन का कोई लाभ नहीं; वह पादरी के काम के

लिये उपयुक्त न होगा, कारण यह है कि उसका विश्वास ईसाई-धर्म पर नहीं है। इसी कारण वह आगे पढ़ना भी चाहता था किन्तु उसे डिप्टी कलक्टर की नामजद कर मिशन के सिर से बला टाल दी। इन्हीं कारणों से ग्रिव मिशन में नहीं गया और रेलवे स्टेशन से उतरते ही डाक बँगले में आकर ठहरा। दूसरे दिन कलक्टर और कमिश्नर साहब से मिला और अपने आगमन की रिपोर्ट देकर कोर्ट आफ़ वार्ड का चार्ज मुंशी ज्वालाप्रसाद से लिया।

कोर्ट आफ़ वार्ड में जितनी कोठियाँ थीं, सब में हाकिम लोग रहते थे। कोई दूसरी कोठी खाली न थी। राय साहब ने अपनी कोठी को जिसमें उनके पूर्वज हुंडी-पचें का काम करते थे गिरवाकर अंग्रेजी ढंग का बनवाया था। जब से कोर्ट में रियासत आई वह बंद पड़ी थी। कोठी से लगा ही हुआ गुस्लखाना, और बावर्चीखाना था। उसके पीछे राय-साहब का मकान था। ग्रिव को कलक्टर साहब ने सलाह दी कि आप उसी में ठहरिये और कोर्ट की ओर से उसकी सफाई होने लगी। दो-चार दिन में सफाई हो गई और ग्रिव उसमें आकर ठहरा। यह वही स्थान था जहाँ एक बार ग्रिव जब गरीब था हंटरो से पिटा था। ग्रिव ने कोर्ट का चार्ज लेकर ऐसा प्रबंध किया कि रियासत की आमदनी दूनी हो गई और प्रति वर्ष कर्ज का हास होने लगा। उसके सद्व्यवहार से कोर्ट के सारे कर्मचारी प्रसन्न थे, प्रजा सुखी थी। उसका

नागरिकों से ऐसा अच्छा वर्ताव था कि 'नगर के बड़े बड़े रईस नित्य उसके यहाँ आते और घंटों बैठे गप-शप किया करते। रायसाहब तो पास ही रहते थे। दोनों समय वह ग्रिव के पास आते और घंटों बैठे लोगों के साथ जी बहलाते।

ग्रिव से अकसर लोगों ने कई बार पूछा कि आप कहाँ के रहनेवाले हैं, आपके माता-पिता कहाँ हैं और क्या करते हैं पर ग्रिव उनको यह कहकर टाल देता था कि ईसाइयों की जाति क्या? उनके माता-पिता का कौन ठिकाना? एक दिन सायंकाल को नगर के कई रईस और कई डिण्टी कलक्टर ग्रिव के यहाँ आये। रायसाहब भी वहीं बैठे थे। सब लोग कमरे में बैठे नौ-दस बजे तक इधर-उधर की बातें करते रहे जब सब लोग चले गये और रायसाहब और मि० ग्रिव रह गये तो रायसाहब ने बड़े आग्रह से कहा—डिण्टी साहब, आप रोज टाल दिया करते हैं पर आज मैं आपको बिना यह बतलाये न छोड़ूँगा कि आपके पूर्वज कौन थे, कहाँ के रहनेवाले और किस जाति के थे। वह कैसे ईसाई हुए? आपने कहाँ शिक्षा पाई और ईसाई हाँकर आपको हिन्दू ग्रन्थों से इतना प्रेम कैसे हुआ?

ग्रिव साहब—रायसाहब आप इसे जानकर क्या करेंगे? मैं पुराना गाड़ा हुआ मुर्दा उखाड़ना नहीं चाहता। इससे मुझे बड़ा दुःख होता है। लज्जा आती है, बीता समय फिर थोड़ा ही आता है। आप मुझे बतलाने के लिये कृपा कर बाध्य न कीजिये।

इतना कहकर ग्रिव ने वाल्मीकीय रामायण हाथ में लिया और किष्किधाकांड में पंपासर का वर्णन पढ़ने लगा। रायसाहब संस्कृत नहीं जानते थे पर ग्रिव के मधुर पाठ से मुग्ध हो गये और बोले—डिण्टी साहब, अर्थ भी करते चलें तो मेरे भी कान पवित्र हों। ग्रिव अर्थ करने लगा और रायसाहब श्रोता बनकर श्रवण करने लगे। दो अध्याय हो जाने के बाद ग्रिव ने पुस्तक बंद की और रायसाहब यह कहकर अपने स्थान को गये कि जब आप पाठ करें तो मुझे भी बुला लें, मैं भी आ जाऊँगा और आपसे रामायण की कथा सुनकर अपना जन्म सफल करूँगा। आपको इसमें कुछ कष्ट तो न होगा ?

ग्रिव ने कहा—मैं आपको सहर्ष बुला लिया करूँगा और रामायण का अर्थ सुनाऊँगा।

उस समय से रायसाहब भोजन करके नित्य बैठे प्रतीक्षा किया करते थे कि कब डिण्टी साहब का आदमी बुलाने आता है और नित्य जाकर बैठते। ग्रिव उनको दो-चार अध्याय अनयमपूर्वक सुनाया करता।

कई महीने बीत गये। एक दिन रायसाहब ग्रिव से कहने लगे—डिण्टी साहब, आप तो संस्कृत के पंडित हैं। आप ईसाई कैसे हुए ? आप स्वयं हुए या आपके बाप-दादे हुये थे ? इतना बड़ा विद्वान् और ईसाई ? आपके साथ कोई ईसाई लेडी भी नहीं है कि यह अनुमान हो जिससे और नहीं तो उसी के

कारण आपने ईसाई धर्म स्वीकार किया। आपको मैं कभी गिरजे में भी जाते नहीं देखता जिससे जान पड़ता है कि आपका ईसाई धर्म पर विश्वास भी नहीं है। फिर आप ईसाई हुये तो कैसे ?

प्रिव— आप इसे जानकर क्या करेंगे ? मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ कि आप मुझसे यह प्रश्न न करें।

रायसाहब—आज तो मैं आपको विना बताये छोड़नेवाला नहीं। चाहे जो हो, आपको बताना ही पड़ेगा। आज मैं विना पूछे जानने का नहीं।

प्रिव ने देखा कि अब विना बतलाये पीछा न छूटेगा। वह अपने स्थान से उठे और नौकरों से कहा कि हम रायसाहब से कुछ गुप्त बात करना चाहते हैं, तुम लोग शागिर्द-पेशे में चले जाओ। जब सब लोग बले गये और स्थान निर्जन हो गया तो कमरे के सब किवाड़ों को बंद करके प्रिव आया, रायसाहब के पाँवों पर गिर पड़ा और आँखों में आँसू भर हाथ जोड़कर बोला—रायसाहब, मैं आपका वही टुकड़खोर गरीब हूँ जिसे आपने कुर्सी पर बैठ जाने के कारण हंटरों से मारते मारते बेदम कर दिया था।

प्रिव के मुह से इतना निकलना था कि रायसाहब का रंग फक हो गया। काटो तो लहू नहीं बदन में ! वह थोड़ी देर तक अचेत पाषाण की प्रतिमा की भाँति कुर्सी पर बैठे रहे। फिर उठकर प्रिव को पकड़कर छाती से लगा लिया और अपने

किये पर आँसू बहाते हुए बोले—डिप्टीसाहब, यह आप क्या कहते हैं ? मुझे विश्वास नहीं आता ।

प्रिव—रायसाहब ! यह बात बिल्कुल सत्य है, इसमें तनिक भी झूठ नहीं । आपको प्रतीत न हो तो मैं आपको कितनी ही ऐसी बातें बता सकता हूँ जिनसे आपको दृढ़ निश्चय हो जायगा कि मैं गरीब ही हूँ । अच्छा, मेरे माता-पिता आपके चिड़ियाखाने में भाड़ू दिया करते थे या नहीं ?

रायसाहब—गरीब के माता-पिता अवश्य मेरे चिड़िया-खाने में भाड़ू देते थे ।

प्रिव—वह हैजे की बीमारी में मरे थे या नहीं ?

रायसाहब—हाँ, अवश्य मरे थे ।

प्रिव—अच्छा, आपके इसी कमरे के बरामदे में बीच की दर में एक बड़े काकातुये का अट्टा लटकता था या नहीं ?

रायसाहब—था तो ।

प्रिव—और पते की बातें बताऊँ ?

राय०—नहीं अब रहने दीजिए । मुझे विश्वास हो गया कि आप गरीब ही हैं । मुझे दुःख है और मारे लज्जा के मेरी गर्दन नहीं उठ रही है । मैं ही आपके ईसाई होने का कारण हुआ । हाय ! मुझसे बड़ा अपराध हुआ जो मैंने हिन्दूजाति के एक रत्न को खो दिया ।

प्रिव—नहीं रायसाहब, आप दुःखित मत हों । मैं ईसाई कदापि नहीं हुआ हूँ । क्या एक चिल्लू पानी छोड़कर वह मुझे

ईसाई बना सकते हैं ? यदि बना सकते तो जगत्पावनी पाप-हारिणी भगवती गंगा के पवित्र तरंगों में तो मैंने सैकड़ों बार गोते लगाये हैं। जो गंगा मनुष्य के जन्म-जन्मांतर के पापों को स्मरण, दर्शन-मात्र से नाश कर देती है क्या उसकी तरंगों में निरंतर वर्षों स्नान करनेवाले मनुष्यों में ईसाईपन की छूत जो एक चिल्लू पानी पड़ने से लगी थी रह सकती है ? कदापि नहीं।

राय०—यदि आपकी शुद्धि हुई तो मैं पहला मनुष्य हूँगा जो आपके साथ सहभोज में सम्मिलित हो।

प्रिव—रायसाहब, यह आपकी उदारता है। समय आवेगा, जब हिन्दू लोग विधर्मियों को अपनी छाती से लगायेंगे और उनको शुद्ध कर अपने में मिलायेंगे। उस समय सनातनधर्म जो अभी आर्यसमाजियों की शुद्धिसभा से विरक्त है और उसे अनुचित कह रहा है आर्यसमाज के हाथ बँटायेगा। उस समय हिन्दू धर्म के मृतप्राय शरीर में जीवन का संचार हो जायगा। ईसाई, मुसलमान सब उस बृहत्काय हिन्दू धर्म को करवट बदलते देख घबड़ा उठेंगे।

राय०—डिप्टीसाहब, आपकी समझ में हिन्दू धर्म के अधः-पतन का कारण क्या है ?

प्रिव—रायसाहब ! इसके विषय में लोगों के भिन्न भिन्न मत हैं। पर मेरा तो यही विचार और विश्वास है कि वर्णाश्रम धर्म ही हिन्दू जाति का प्राण है, वही उसका जीवन है। उसकी

दृढ़ता से हिंदू धर्म की दृढ़ता और हास से हास है। उसी की रक्षा करना हमारा आपका परम कर्तव्य है। हिंदू धर्म की उन्नति तभी हो सकती है जब ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र अपने अपने धर्मों का पालन करें और देश में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास-आश्रमों का यथावत् प्रचार हो।

राय०—इसमें विकार कब से आरंभ हुआ ?

प्रिंव—बौद्धकाल के अन्तिम शताब्दियों में। शंकराचार्यजी ने उसे सुव्यवस्थित तो किया। पर कई शताब्दियों में फिर सच्चे ब्राह्मणों के न रह जाने से विकार उत्पन्न हो गया। ब्राह्मणों के हाथ से क्षात्र धर्म की यथावत् रक्षा न हो सकी और क्षत्रियों में विकार आरंभ हो गया। वे इन्द्रियलोलुप हो गये। इसी बीच में मुसलमानों ने आक्रमण किया और भारतवर्ष में मुसलमानों की प्रधानता हो गई। फिर तो अन्य वर्णों में संकट आरंभ हुआ और अंग्रेजी राज्य में तो किसी का भी वर्णधर्म न रह गया। आश्रमधर्म पहले ही बिगड़ चुका था वर्णधर्म भी नाश हो गया। यही अधःपतन का हेतु है।

राय०—डिप्टीसाहब, आप क्या कहते हैं ? मेरा तो अनुमान है कि हिंदुस्तान के अधःपतन का कारण जाति-पाँति ही है। क्षमा कीजियेगा, यदि आप ही हिंदू रहते तो इस पद पर कैसे पहुँचते और जो लोग आपको छूने से भागते थे, आज आपके पास प्रसन्नतापूर्वक कैसे आकर बैठते ?

प्रिंव—तो यह क्यों कहते हैं कि वर्णव्यवस्था या जाति-

पाँति अधःपतनका कारण है। यह क्यों नहीं मानते कि संकुचित और क्षुद्र विचार पतन का प्रधान कारण है। रहा आपका यह कहना कि मैं हिंदू रहकर इस पद पर कैसे पहुँचता ? इसका उत्तर यह है कि यदि आप घृणा और अपने संकुचित विचार छोड़ दें और सबको उत्तम शिक्षा और ब्रह्मचारी बनने का अधिकारी मानें तो लोग इससे भी बड़े बड़े पद पर पहुँच सकते हैं। अंग्रेजी राज्य ने हममें वर्णसङ्करता फैलाकर हमारी उन्नति के आगे पत्थर डाल दिया है।

यह कहकर ग्रिव ने गवर्नमेंट गजट उठाकर रायसाहब के आगे डाल दिया और बोले—देखिये सरकार ने संयुक्त प्रांत में ग्रेजुएटों के लिए सौ सौ पाउण्ड की चार चार स्कालरशिप इस लिये देना स्वीकार किया है कि वे विलायत जावें और वहाँ रहकर चमड़े का सिक्काना और कपड़े का रंगना सीखें। अब आप ही विचारिये कि यदि चार चमार ग्रेजुयेट और चार रंगरेज ग्रेजुयेट होते और वह विलायत में जाकर चमड़े सिक्काने और कपड़े रंगने का काम सीख आते तो उनका सीखना देश के लिए कितना लाभदायक होता और कितनी जल्दी उन्हें वह काम आ जाते। इसी प्रकार और कामों को समझ लीजिए। लुहार बढ़ई के लड़कों को इंजिनियरी, थवइयों के लड़कों को इमारत बनाने का काम, वैद्यों के बालकों को डाक्टरी, भंगियों को हेल्थ-आफिसरी का काम कितने जल्द आ सकता है। उनमें उनके

संस्कार हैं, केवल थोड़ीसी शिक्षा उसे जगाने के लिए पर्याप्त है। मैं आपसे सच कहता हूँ मैंने बी० ए० पास किया है, डिप्टीकलक्टर हूँ, पर अब भी मुझे झट्टू देने और मलमूत्र ठूने में घृणा नहीं है। कारण यह है कि पैत्रपैतामहिक संस्कार अब तक मुझमें जागृत है। राय साहब, मैं सच कहता हूँ मेरे पास धन नहीं, नहीं तो मैं विलायत जाता और वहाँ से डी० पी० एच० हो आता। इसमें कौनसी खूबी है कि आप डिप्टीकलक्टर तो बेटा डाक्टर, पोता वकील, तो तरपोता इंजिनियर। एक भी संस्कार वंश परम्परा से जमने नहीं पाता और चिकने घड़े की तरह कोरे रह जाते हैं।

राय०—धन्य हैं आप! जिनको हिंदू जाति, हिंदू धर्म और हिंदुस्तान से इतना प्रेम है!

श्रिव—आप जानते हैं कि आजकल के लड़कों को पैत्र-पैतामहिक कामों से घृण क्यों हो जाती है?

राय०—नहीं!

श्रिव—वह पाठशाले में जाते ही बाबू बन जाते हैं और अपने सब संस्कार खो बैठते हैं। वह हाथ-पैर से काम नहीं करते। उनके ऊपर इतना बोझ डाल दिया जाता है कि उन्हें देने से अवकाश ही नहीं। उनको न शारीरिक व्यायाम करने का अवकाश मिलता है न मानसिक और न उनमें यह समझने की शक्ति रह जाती है कि हम भी मनुष्य हैं और जो सरे कर सकते हैं हम भी कर सकते हैं। सारा जन्म उनका

विदेशी भाषा सीखने और रटने में बीतता है। उनको अपनी भाषा, अपने धर्म, अपने इतिहास और अपने गौरव का कुछ भी बोध नहीं होता। वह केवल मनुष्य की खाल ओढ़े तोते होते हैं।

रात बहुत बीत गई। रायसाहब बिदा हुए और डिण्डी साहब भोजन करने गये।

सत्रहवाँ परिच्छेद

मिस एलिस को जब मालूम हुआ कि उस पर मैजिस्ट्रेट के यहाँ फौजदारी की नालिश हुई है, और पुलिस ने लखनऊ से परिण्डतानीजी को बरामद कर अदालत में लाकर हाजिर कर दिया है और अदालत मेरे नाम सम्मन जारी कर चुकी है तो वह बहुत घबराई और दौड़ी हुई पादरी साहब के पास पहुँची। पादरी साहब उसे लेकर साहब कलकटर के बँगले पर पहुँच और बहुत कुछ कहा-सुना। साहब कलकटर ने कहा कि मुकदमा में शहादत काफी गुजर चुकी है और मिस एलिस का बचना कठिन है।

पा०—फिर तो हम लोगों का काम काहे को चलेगा ?

क०—क्यों ? आप उपदेश कीजिए और ईसाई धर्म के महत्त्व को दिखलाइये, उन्हें समझा-बुझाकर ईसाई बनाइये, आपको टोकता कौन है।

पा०—समझाने-बुझाने से तो साल में एक भी ईसाई न होगा ?

क०—आप लोग लालच दिखलाएँ पर धोखा देकर किसी को चुरा ले जाना तो ठीक न होगा। कानून तो सबके लिए एक ही है।

पादरी—हैं तो एक ही, पर यदि इसी प्रकार हम लोगों पर मुकद्दमा चला करेगा और सजाएँ दी जायेंगी तब तो प्रचार का काम हो चुका।

क०—हम तो तभी रियायत कर सकते हैं जब सबूत कम-जोर हो पर जब सबूत काफ़ी पहुँच जाय तो हम क्या कर सकते हैं। ऐसा भी कोई नादानी करता है जैसी मिस एलिस ने की ?

पादरी—कितनी ही बार ऐसा किया गया और जब वारिस ढंढ-ढांढ कर निराश हो गये तो बपतिस्मा दे दिया गया।

क०—क्या बिना ऐसा किये आप ईसाई नहीं बना सकते ?

पादरी—कदापि नहीं। अब वह समय गया जब साधारण मनुष्य भूखों मरते थे और उन्हें रुपया और गुजारा देकर ईसाई बनाया जाता था। अब हिन्दुस्तान के अदने दर्जे के लोग बहुत सुखी हैं। एक एक मजदूर आठ आठ आने बारह बारह आने रोज कमाता है। वह पैसे के लालच से ईसाई क्यों होने लगा ? रहे पढ़े-लिखे लोग, वह अब अपने धर्म को

समझते और ईसाई धर्म पर ऐसी ऐसी आपत्तियाँ करते हैं कि उत्तर देना कठिन हो जाता है। अब जो ईसाई होते हैं धोखे ही देने से होते हैं।

क०—फिर आप लोग अपना काम हाथ-पैर बचाकर करें, जिससे कानून की पेच में न पड़ सकें। इसमें संदेह नहीं कि हम लोग आपकी मदद करना चाहते हैं और करेंगे पर जब आप फँस जायेंगे और सबूत काफी गुजरेगा तो हमको मजबूर होकर आपकी सजा करनी ही पड़ेगी। कहाँ तक हम बचा सकेंगे।

पा०—कुछ हो। इस बार तो आपको कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा।

क०—हाँ इतना हो सकता है कि मिस साहब को खफाफ सजा दी जाय पर इन्हें बचा देना हमारे इमकान से बाहर है। सबूत काफी गुजर चुका है।

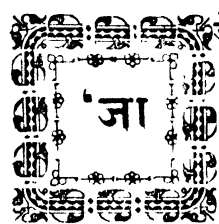
पादरी साहब और मिस एलिस कलक्टर साहब की कोठी से चले और मिशन में आकर जवाबदाही की तैयारी करने लगे। मुकदमे की पेशी के दिन दो बारिस्टरों को इलाहा बाद से ले आये। साहब मजिस्ट्रेट के इजलास में उस दिन ग्यारह बजे ही से भीड़ लग गई। सबूत के गवाहों का इजहार होने लगा। लखनऊ के कलक्टर और सुपरिंटेंडेंट पुलिस का इजहार हुआ। दोनों ने सरदार गुरुदत्तसिंह के बयान की ताईद की और कहा कि तलाशी हमारे सामने हुई और पंडितानी

कोठरी से बरामद हुई। फिर मिस डंकन का इजहार हुआ। उन्होंने कहा पंडितानी को मिस एलिस नहीं ले आई थी, वह गोरखपुर के दो ईसाई मिसों के साथ आई थी। मिसें तो चली गईं पर वह मिशन में ठहर गई थी। आपने कहा कि पंडितानी मिशन के कम्पाउण्ड में उत्तर की बारिक की तीसरी कोठरी में रहती थी। मैं उसे रोज मंस से खाना दे आती थी। वह कैसे उस कोठरी में गई जिसमें वह निकला; कह नहीं सकती। जिस दिन तलाशी हुई मैं शाम ही से पंडितानी को खोज रही थी। जब मैं खाना लेकर गई तो वह अपनी कोठरी में न थी, मैंने समझा वह उस लौंडिया के साथ जिसे मैं दोपहर को उसकी कोठरी के द्वार पर पहुँचा आई थी कहीं चली गई। मैंने उस कोठरी में जिसमें पंडितानी मिली घड़ी रात गये ताला लगाया था और बाहर के द्वार में भी ताले लगाये थे। फिर टिकट-कलक्टर का इजहार हुआ। उसने कहा—मिस एलिस अमुक तारीख को चार और हिन्दुस्तानी मिसों के साथ लखनऊ से आनेवाली सवेरे की गाड़ी से उतरी थीं। मैं उस वक्त फाटक पर था। उन्होंने मुझे पांच अव्वल दर्जे के टिकट दिये थे जिनके नंबर ३६, २५, ३९, २९, २८ थे। वे टिकट चारबाग के स्टेशन के थे। मैं मिस एलिस को पहचानता हूँ। वह अक्सर स्टेशन पर आती जाती है। मैं दूसरों मिसों को नहीं पहचानता।

सबूत के गवाहों के गुजर जाने पर मिस एलिस के बारि-

स्टरों ने गवाहों से जिरह करना शुरू किया। कई दिन तक जिरह में लगे। इजलास नित्य दर्शकों से खचाखच भरी रहता था। कई दिन लगातार जिरह करने पर भी गवाह नहीं उखड़े। जुर्म साबित हो गया। अदालत ने फ़र्द जुर्म लगा दिया और मिस एलिस से सफ़ाई माँगी। मुकद्दमे की पेशी के लिये दूसरी तारीख मुकर्रर की।

अठारहवाँ परिच्छेद



डे का दिन इतना छोटा होता है कि ठहरता ही नहीं, सवेरे जाते वक्त कह गये हैं कि कचहरी से आते ही खाना तैयार मिले, तीन बज गये महरिन अभी नहीं आई।' यह कहकर भिनकूलाल की बोबी उठी और थाली और कड़ाही लेकर आँगन में बैठकर साफ करने लगी। लड़की से कहा—बेटी जरा चौके से वर्तन हटा दो और भाड़ देकर चौका दे लो, कचहरी से आते ही खाना माँगेंगे।

लड़की—तुम तो नित्य मेरे पढ़ने-लिखने में बाधा डाला करती हो। अभी पाठशाला से आते देर न हुई कि चलो भाड़ लेकर चौका लगाओ। मैं तो न लगाऊँगी। महरि आती होगी, आफत क्या है।

माँ—अभी से न सीखोगी तो कब सीखोगी । स्त्री जाति घर का काम सीखने से इतना भागे !

लड़की—नहीं, स्त्रियों का काम तो बस दिन-रात चौका-वर्तन करना और रोटी के सामान में लगी रहना ही है । वह क्या मनुष्य हैं ?

माँ—नहीं, तो क्या वह पढ़ लिखकर दफ्तरों में कमाई करने जायेंगी ।

लड़की—नहीं, जो कमाई करने जाते हैं उनके सुर्खाब के पर लगे रहते हैं ? मैं तो यह नीच काम कभी न करूँगी चाहे भूखों मर जाऊँ ।

माँ—नहीं, रसोइयाँदार लगा लेना । कुर्सी पर बैठकर आप किताबें पढ़ना ।

माँ-बेटी में यह झक-झक बक-बक हो ही रहा था कि महरी आ गई । वह झपटकर चौका साफ करने लगी और वाली—बहूजी आफत क्या पड़ी थी जो आप बासन माँजने बैठी हैं । कड़ाही छाड़िए मैं माँजे देती हूँ ।

लड़की—मैं तो कहती थी कि महरी आती होगी, आफत क्या पड़ी है पर मानें तब न ।

महरी—अभी देर भी तो नहीं हुई । आज तो मैं आपके घर सबेरे आई हूँ ।

माँ—सबेरे अबेरे की बात नहीं है । एक वक्त आदमा न रहे तो काम ही न हो ! अपने हाथ से हारेखाँगे काम कर

लेने में हरज ही क्या है। देखो महरिन में जब इसे घर का काम करने को कहती हूँ लड़ने लगती है, लड़की का इतना लड़ना और मुँहजोर होना बुरा है। आज तो मुझसे लड़ती है कल अपने घर जायगी तो यही लत पड़ी रही तो सास-ननद से उलझेगी। फिर कैसा होगा। कब तक मेरे यहाँ रहेगी। लड़की को किसने रख छोड़ा है। न यह चौका बर्तन साफ करे, न दाल-चावल चुने, दस वर्ष की हो गई कभी चूल्हे के सामने नहीं बैठती। जब देखो तब किताब, सिवा लिखने-पढ़ने के दूसरा काम नहीं। अब तो आर्वे तो मैं इसका स्कूल जाना बन्द कर देती हूँ।

महरी समझाने लगी पर लड़की महरिन से भी उलझ पड़ी और उसे भला-बुरा कहने लगी। महरिन चुप साध गई और बर्तन साफ करके चौका जला दिया। भिनकू की खी कड़ाही चढ़ाकर चट-पट पूरी तरकारी बनाने लगी। इसी बीच में भिनकूलाल भी कचहरी से आ गये। महरी ने हाथ पाँव धोने को पानी दिया और हुक्का ताजा कर चिलम भरकर रख दी। भिनकूलाल बैठकर नम गू पीने लगे। इसी बीच में नीवी ने खाना तैयार कर थाली परसी। भिनकूलाल बैठकर खाने लगे।

खी—अब तो करुणा का पठशाला जाना बन्द कर दो ?

भिनकू—क्यों ?

खी—अब उसे घर का कामकाज सिखलाओ। वह अपने

मन की हुई जाती है। घर का एक काम नहीं करती। कहने पर लड़ती है। बात बात में उलझ पड़ती है। यही हाल रहा तो जहाँ जायगी वदनामी करायेगी। लड़की का इतना मुँह-जोर होना अच्छा नहीं है।

कि०—अभी वच्ची है। सयानी होने पर सुधर जायगी। (लड़की से) बेटी, अब तुम खाना बनाया करो। हम तुम्हें खाना बनाने की किताब मंगा देंगे।

लड़की—(किताब का नाम सुन प्रसन्न हो) हाँ चाचा, आप मंगा दें मैं उसे पढ़ूँगी।

कि०—पढ़ना ही नहीं, उसके मुताबिक खाना भी बनाना पड़ेगा।

स्त्री—किताबों को ही पढ़कर बनाना है तो हो चुका। हो गई सब गुण आगर। तुमने भी तो उस बार बाँस के मुरब्बे किताब ही देखकर बनाये थे, फेंकना ही पड़ा था। अच्छा सिखाओ, तुम्हारे ही सिखाने से सुधरे। सुधरना चाहिए।

लड़की माँ की बातें सुन सुन भीतर ही भीतर कुढ़ती थी और आँखें लाल-पीली कर रही थी। भिनकूलाल खाकर उठे और कपड़े बदल, छड़ी ले घर से निकले। राह में दोस्तों से मिलते हुए मुंशी दुर्गाप्रसादजी के यहाँ पहुँचे। मुंशीजी पूजा से उठे थे और अपनी बैठक में बैठे रामायण पढ़ रहे थे। भिनकूलाल ने बैठक में पैर रखते ही कहा—मुंशीजी, प्रणाम।

मुं०—(सिर उठाकर) प्रणाम। आइये तशरीफ लाइये।

आप तो बहुत दिनों पर आज देख पड़े । दूज के चाँद हो गये ।

फि०—मैं तो कई बार दरे-दौलत पर माथा टेक गया पर आप ही न थे । दर्शन न हुए ।

मुं०—मैं पं० गंगाधरजी के मुकदमे की वजह से उनके साथ कहीं चला गया हूँगा । यही वजह है कि आपके दर्शन न हो सके ।

फि०—कहिये, साहब मजिस्ट्रेट ने तो मिस पर कोई करारदाद-जुर्म लगा दिया न ?

मुं०—इससे क्या होता है । अंग्रेज-अंग्रेज एक ही होते हैं । सजा भी देंगे तो बगाये नाम । बहुत करेंगे एक दिन को कैद की सजा देंगे । इजलास पर बैठी रहेगी । ४ बजे उठकर चली जायेगी । जुर्माना हुआ तो उसके घर से थोड़े ही आवेगा, मिशन अदा कर देगा ।

फि०—मुंशीजी, आपने जो उस दिन अपने साहबजादे की कुण्डली की नकल भाई साहब को दी थी वह मुआफिक आ गई । भाई साहब उसे लेकर काशी के पंडितों के पास खुद गये थे और महामहोपाध्याय परिडत सुधाकर द्विवेदी, परिडत अयोध्यानाथ, गणेशदत्त शास्त्री और हरिनाथ भा को दिखलाया । सबों ने कहा, इससे बढ़कर गनना वन ही नहीं सकता । ३६ गुणों में ३४१ वनते हैं । (कुण्डलियाँ और परिडतों के हस्ताक्षर किये हुए पत्र देता है) लीजिए

अठारहवाँ पारिच्छेद

आप भी अपना इतमीनान कर लीजिए । अब कुण्डली मुआफिक आ गई, शादी आप जब चाहें करें, इसमें हमें कोई उज्र नहीं । आप दस वर्ष न करें तो भी मैं इन्तजार करने को तैयार हूँ । लड़की अभी बच्चा है । अगर देखना चाहें तो, आपके यहाँ भेज दूँ । मैं बड़ा बेतकल्लुफ हूँ । (हँसता है)

मुं०—(कुण्डली और पण्डितों की सम्मतियाँ लेकर) अच्छा हम भी दिखला लें । घरवालों की राय ले लें तब आपसे अर्ज करूँगा ? पर मैं शादी तभी करूँगा जब लड़का बी० ए० एल० एल० बी० हो जायगा ।

भि०—इसका कुछ मुजायका नहीं । शादी मंजूर कर लीजिए । जब जी में आवे कीजियेगा । बी० ए० एल० एल० बी० क्या मैं तो कहता हूँ आप वारिस्टरी के लिए विलायत भेज दीजिए । हम तब तक इन्तजारी करने को तैयार हैं । हमारी तरफ से शादी करने के लिए कभी इसरार न होगा । इसका आप इतमीनान रखें ।

मुं०—(पान देकर) लीजिए पान तो खाइये ।

भि०—बस अब पान न खाऊँगा । आज से दूसरी बात है । (अपने डिब्बे से पान निकालकर) लीजिए खाता हूँ । (हँसकर) अच्छा अब तो इजाजत दीजिए (उठता है) ।

मुंशी दुर्गाप्रसादजी भी उठ पड़े और भिनकूलाल प्रणाम कर बैठक से बाहर निकला । इसी बीच में पं० गंगाधरजी भी आ गये । भिनकूलाल का हाथ पकड़कर खींचते हुए

मुंशीजी की बैठक में आये और जबरदस्ती अपने पास बैठा लिया ।

गंगाधर—मुंशीजी, करारदाद जुर्म तो लग गया । मिस साहब से सफाई माँगी गई है । देखें क्या होता है ।

मुं०—होगा क्या ? खफीफ सजा । परिडतजी यह सब स्वांग है । सब टोपी टोपी एक हैं । भला क्या आप आशा करते हैं कि अंग्रेज अंग्रेज की सख्त सजा करेगा । आप निन्य अखबारों में पढ़ते हैं कि फलाँ जगह अमुक अंग्रेज ने अमुक हिन्दुस्तानी को गोली मार दी या घूसे या ठोकरोँ से मार डाला । उस पर मुकदमा चल रहा है । अमुक को दौरा सपुर्द हुआ । पर अन्त को क्या होता है ? जुर्माना या खफीफ सजा, सो भी बहुत कम । कभी आपने कहीं गोरों को भी फाँसी पड़ते देखा है ? कहने के लिए तो गवर्नमेंट कहती है कि हिन्दुस्तानी और अंग्रेज सब बराबर हैं पर हाथी के दो दाँत, खाने के और दिखाने के और । यह सब जवानी बातें हैं, अमल के लिए नहीं । आप लोग कहा करते हैं कि अंग्रेज सच्चे होते हैं । मुझे तो तीस वर्ष पेशकारी करते बीत गये । बीसों अंग्रेजों के इजलास में काम किया पर मुझे तो बहुत कम ऐसे मिले जिनमें पक्षपात न हो । भला जिस जाति की गवर्नमेंट की नीति ही सच्ची नहीं वह कहाँ तक पक्षपातहीन हो सकती है । वहाँ तो बात बात में पालसी है । परिडतजी, यह न समझिये कि हिन्दुस्तान में इङ्गलिस्तान के राजा का राज्य है । यहाँ अंग्रेज

जाति का राज्य है। अंग्रेजों का बच्चा-बच्चा, फौज के गोरे तक, हमें अपना गुलाम समझते हैं। देखें, इस अन्याचार का फल इन्हें भगवान कब देता है।

फिनकूलाल बैठे-बैठे उकता गया और अन्त में पगिडन गंगाधर से क्षमा माँग, मुंशीजी और गंगाधर को प्रणाम कर, चला गया।

उन्नीसवाँ परिच्छेद



राने गोरखपुर के पास, बाबा गोरखनाथ के मन्दिर के दक्षिण, रेलवे सड़क से उत्तरवाले बाग में जहाँ अब क्षत्रियस्कूल की इमारत बनी है, पन्द्रह-बीस डेरे खड़े हैं। ब्राह्मण सवेरे से ही पूड़ी-कचौरी और हलवाई मिठाइयाँ बना रहे हैं। जान पड़ता है कि भंडारा होनेवाला है। एक बजे मि० ग्रिव और रायसाहब एक लैण्डो में आये और उस खीमे में जाकर बैठे जिसके सामने एक बड़ा शामियाना खड़ा था। थोड़ी देर बाद एक अर्दली खीमे के बाहर निकला और खाना बनानेवाले एक ब्राह्मण से कहा—चलो तुमको रायसाहब और डिप्टीसाहब बुला रहे हैं। ब्राह्मण चौंके से निकला और हाथ धो अँगौछे से पोछता हुआ दौड़ा खीमे के दर्वाजे पर जाकर बोला—धर्मावतार ! हुकुम।

ग्रिव—कै कड़ाह चढ़वा रखे हैं ?

ब्रा०—धर्मावतार ! आठ कड़ाह पूड़ियों के लिए और दो तरकारियों के लिए ।

प्रिव—कितना आटा पक चुका ?

ब्रा०—धर्मावतार ! पाँच बोरा पक चुका, छुटा चल रहा है ।

राय०—और तरकारी क्या क्या आई है ?

ब्रा०—धर्मावतार, वही जो बाजार में है । आलू, गोभी करमकल्ला !

राय०—बाग से तरकारी नहीं आई ?

ब्रा०—सर्कार आई तो है । माली गाड़ा पर लादकर सवेरे ही गिरा गया ।

राय०—कौन-कौन चीज ?

ब्रा०—कुम्हड़ा, कद्दू, नेनुआ और चिचिड़ा ।

राय०—दही आया कि नहीं ?

ब्रा०—हुजूर बीस मटके तो दही के आ चुके हैं, देखें और कितने आते हैं ।

राय०—और चीनी ?

ब्रा०—दो बोरे आये हैं । उनमें एक बोरा हलवाई ले गया है मिठाई बनाने के लिए । एक कोरा रक्खा है ।

राय०—इतनी चीनी से काम न चलेगा । यह तो हलवाई ही भर के लिए न होगी । एक बोरा और मंगवाओ ।

ब्रा०—बहुत अच्छा धर्मावतार । (जाता है)

राय०—परिडतजी ! परिडतजी !

ब्रा०— (लौटकर) हुकुम सरकार ।

राय०—हलवाई को भेज दो ।

ब्रा०—बहुत अच्छा ! (जाता है)

राय०—(ग्रिव से) हुक्के तमाकू का भी कुछ इन्तजाम किया गया है ?

ग्रिव—मैंने तो नहीं किया है । आप जानते हैं मैं तो कभी पीता नहीं । इसी से याद नहीं पड़ा ।

राय०—(अर्दली से) बाजार जाओ और चालीस-पचास नारियल, सौ दोसौ चिलम, और पाँच मन बढ़ियाँ खमीरा तमाकू, ले आओ । कुछ तमाकू दोसेरा ले लेना, बाकी चौसेरा रहे । दोसेरा दस पन्द्रह सेर काफी होगा ।

अर्दली—बहुत अच्छा ! (जाता है)

हलवाई—(खीमे में आकर) हुजूर सलाम, सलाम सरकार ।

राय०—मिठाई बन गई ?

हलवाई—हुजूर सवेरे से ही काम लगा है, बन रही है ।

राय०—खोया मंगाया है ?

हलवाई—हुजूर, दस मन मिला है ।

राय०—बहुत है । चीनी ?

हल०—एक बोरा सवेरे कटा है, वह लग गई, अब दूसरा बोरा ले जाऊँगा ?

राय०—और चाहिए ?

हल०—हुजूर ! आधा बोरा और लगेगा ।

राय०—अच्छा जाओ और देखो सायंकाल तक सब तैयार देना होगा ।

हलवाई—बहुत अच्छा सरकार ! (जाता है)

थोड़ी देर में चपरासी एक ठेले पर नारियल, चिलम और तमाकू लदाये हुए पहुँचा । रायसाहब ने उसे पास की रावटी में रखने की आज्ञा दी और कहा—हर खीमे के सामने चार मटके पानी, चार चार नारियल, दस दस चिलम और पाँच पाँच सेर तमाकू चौसेरा रखवा दो ।

अर्दली ने बात की बात में सब सामान ठीक कर दिया ।

साढ़े तीन बजे थे कि मेहमानों का आना आरंभ हुआ और सारा बाग घुरहू, मंगरू, कतवारू के शब्दों से गूँज उठा । कई सौ भंगी बात की बात में बाग में आकर जमा हो गये । आनेवालों का ताँता नहीं टूटता था । जान पड़ता था कि सारा नगर भंगियों ही से बसा है । पाँच बजते बजते बाग में दो-ढाई हजार भंगी आकर जमा हो गये । वस्ती, गोरखपुर, गोंडा, बहराइच, फैजाबाद, आजमगढ़, बलिया, बनारस, मिर्जापुर और इलाहाबाद, कहाँ तक बतायें, छपरा, चम्पारन, आरा, पटना, मुजफ्फरपुर, दर्भङ्गा तक के भंगी आये थे । सात बजे से पंगत पड़ने लगी । दो दो सौ की बारह जगह पंगतें लगी थीं । चार चार ब्राह्मण परोसनेवाले थे, भाँति भाँति के पकवान परोसे गये । भंगी लोग खाने थे और डिप्टीसाहब को असीसते जाते थे । कहते थे—भगवान इहौ से दूना मर्तवा

दैं, राजपाट बना रहै, आज तक अस कोऊ न भये कि भला भंगियन के जिमावत । बड़े बड़े राजा और लाट होइ गये पर केहू के हिम्मत नाही पड़ा । रायसाहब और डिण्टी-साहब खड़े खड़े उनकी बातें सुन-सुन हँसते थे । नव-दस बजे सबको खिला-पिलाकर छुट्टी मिली । इधर फर्गश ने शामियाने के नीचे दगरी बिछाई और आठ-आठ किटसन लम्प से शामियाना जगमगा उठा । डिण्टीसाहब ने अपने अर्दली को बुलाकर आज्ञा दी कि डेरे डेरे जाकर कह आओ कि चलो सभा हो रही है । वह उनको उधर बुलाने गया । इधर रायसाहब और डिण्टीसाहब कुर्सी डलवाकर शामियाने के सामने बैठ गये । इसी बीच में अर्दली हँसता हुआ आया और कहने लगा—हुजूर, वह तो समझते ही नहीं कि सभा किसे कहते हैं । कहते हैं कि सभा का होय ? उन्हें कैसे समझाया जाय—

राय०—डिण्टी साहब, वह सभा को न समझने (अर्दली से) जाकर कह दो कि सब लोग शामियाने के नीचे आ जायँ । पंचायत होगी ।

अर्दली गया और थोड़ी देर में आकर बोला, वह कहते हैं कि इतनी बड़ी पंचायत का चौधरी कौन बनेगा । रायसाहब ने कहा, जाकर कह दो कि डिण्टीसाहब बुलाते हैं । डिण्टीसाहब का नाम सुनते ही सब भंगी दौड़-दौड़कर शामियाना तले आकर खड़े हो गये । जब बड़ेसमझाने-बुझाने पर

वे फर्श पर बैठ गये तो डिण्टीसाहब उठे और मंगलाचरण कर बोले—

“भाइयो, मैं आपकी इस कृपा का कहाँ तक धन्यवाद दूँ, मेरे पास इसके उपयुक्त शब्द नहीं हैं। आप लोगों ने बड़ी दया की जो मेरी प्रार्थना पर इतनी दूर से कष्ट सहकर यहाँ पधारे हैं। भाइयो, मेरी आप लोगों से यही प्रार्थना है कि आप अपनी दशा सुधारिए। विद्या पढिये।

एक बूढ़ा भंगी—तो क्या डिण्टीसाहब आपका यह मतलब है कि हम अपने लड़कों को स्कूलों में भेजकर बाबू बनाव ? ऐसा तो नहीं होगा। सबकी सेवा तो हम करते हैं। हमें बाबू बनने पर आदमी कहाँ मिलेंगे ? भला ब्राह्मण क्षत्रिय को तो खिदमत-गार मिलते ही नहीं। हमें कहाँ मिलेंगे। नहीं साहब यह तो हम मरते मरते न होने देंगे। (सब हँसते हैं)

ग्रिव—मेरा मतलब यह कदापि नहीं जैसा कि एक भाई ने समझा है कि पढ़ पढ़कर आपके लड़के बाबू हो जावें और अपने काम के लिए दूसरों के मुँह ताकें। नहीं मेरा मतलब यह है कि आप लोग इतना तो करें कि उन्हें हिन्दी भाषा और हिसाबकिताब पढ़ाइये। पाठशाला भेजिये।

एक दूसरा भंगी—डिण्टीसाहब आप देहाती मदरसों का हाल नहीं जानते। वहाँ लड़कों के समय का सत्यानाश होता है। हमारे गाँव के बाभन और भुइहारों के चार लड़के सीवाने पर के ही गाँव में पढ़ने जाते हैं। भगवान जाने खाने बिना

मर जाते हैं। सवेरे अंगोछे में चना बाँध के ले जाते हैं और सूर्य डूबे घर आते हैं। नहीं जानते कि मदरसे में पढ़ाते हैं या लड़कों को पेरकर उनका तेल निकालते हैं। घर पर छुट्टी में भी उनको हम खेलते नहीं देखते। जब देखते हैं तब किताब हाथ में लिये रटा करते हैं। वाज आये हम ऐसे पढ़ाने से ! इस पढ़ाई से तो हमारे लड़के कहीं के न रहेंगे।

प्रिय—उनको पढ़ाकर बाबू मत बनाइए। घंटे आध घंटे पढ़ें और बाकी समय में अपने घर का काम करें। उनको अँगरेजी की शिक्षा दीजिए। विलायत भेजिए कि वहाँ से जाकर शिक्षा प्राप्त कर आवें और नगरों और कस्बों में सफाई का काम संभालें। भाइयो, और जाति के लोग जो सफाई का काम कराते हैं, या उसकी निगरानी करते हैं, वह लोग अपने कर्तव्य का यथावत् पालन नहीं कर सकते। वह ज़बानी जमाखर्च बताते हैं पर जब सफाई का काम और उसका निरीक्षण आप के लड़के करेंगे तो वह काम पूरा होगा। वह मुँह से न समझायेगा बल्कि अपने हाथ से करके दिखला देगा। अन्त में मेरी आपसे एक और प्रार्थना है कि यदि आपका कोई भाई भूल से ईसाई या मुसलमान हो जाय तो आप उसे फिर अपनी जाति में मिला लिया करें। ऐसा न कीजिएगा तो आपकी संख्या दिनोदिन घटती ही जायगी। आप लोग जानते हैं या नहीं कि मुसलमान हलालखोर और लालबेगी तुम्हारे ही भाई थे पर मुसलमान हो जाने से वह

तुमसे अलग हो गये । भाइयो, उठो जागो, तुम हिन्दू समाज के एक अंग हो । यह न समझो कि हम कुछ नहीं कर सकते । मद्य, गाँजा, भाँग, मादक पदार्थों का त्याग करो जिससे तुम्हारा और तुम्हारे देश का कल्याण हो । बस आज मैं इतनी ही प्रार्थना करूँगा । कल सवेरे ८ बजे कृपा कर यहीं इकट्ठे हजियेगा । उस समय आपसे मैं बहुत कुछ बातें करूँगा ।

बीसवाँ परिच्छेद

मवती लगनेवाली है और उसी समय सूर्य ग्रहण का योग है । पन्द्रहियों से गाड़ी खचा-खच यात्रियों से भरी आ रही है । स्पेशल पर स्पेशल छूट रही हैं पर रेल के स्टेशनों पर यात्रियों की भीड़ दिन-रात लगी रहती है । काशी की गलियों से होकर जाना कठिन है, सड़क पर कंधे से कंधा छिलता है । विश्वनाथ की गली में ४ बजे रात से ग्यारह बारह बजे रात तक निकलना मुश्किल है । घाटों पर लगातार पानी में बांस बाँध दिये गये हैं कि कोई यात्री उससे आगे न बढ़े । पुलिस के अतिरिक्त, पग-पग पर सेवासमिति के स्वयं-सेवक खड़े यात्रियों का प्रबंध कर रहे हैं । लोग कहते हैं कि अभी से इतनी भीड़ है तो ईश्वर जाने अमावस्या तक क्या दशा होगी ।

अमावस्या के दो दिन पहले ही दशाश्वमेध घाट पर ईसाई, आर्य समाज, सनातनधर्म सेवासमिति के डेरे गड़ गये। इलाहाबाद की सेवासमिति ने चार स्वयं-सेवकों के दल चार नायकों (कप्तानों) के साथ काशी की सेवा-समिति की सहायता करने के लिए भेजे। चारों ओर गली गली, नाकों पर, मोड़ों पर, सड़कों और घाटों पर, दस दस पग पर सेवा समिति के स्वयंसेवक खड़े थे। पंडों के नौकर पचास-पचास साठ साठ के झुण्ड लिये भेड़ के चरवाहे की भाँति यात्रियों को स्नान कराने के लिये घाट पर ले जाने हैं। गँवार स्त्री-पुरुष काठ बाँधे एक दूसरे का फाँड़ पकड़े नाक की सीध जाते हैं। नीचे आँख तक नहीं डालते कि राह कैसी है। कहीं कहीं जहाँ गलियों के पत्थरों के जोड़ का मुँह खुल गया है कभी कभी ठोकरें लेते हैं। राह में चिल्लाने जाते हैं “देखो हाथ न छूटे !” इस प्रकार गङ्गा नहाकर मिट्टी के वर्तनों में गङ्गाजल लिए, भाँगे वस्त्र वे विश्वनाथ के मन्दिर में जाते हैं और धक्के में पिसते हुए सदाशिव भोलेनाथ के मस्तक पर जल चढ़ा बाहर आते और अपने डेरे पर जाते हैं। पंडों के घर धर्मशालायें, और मंदिर, कहाँ तक कहें, काशीवासियों के घर, सब खचाखच यात्रियों से भर गया। सहस्रों यात्री गंगा के किनारे कहीं स्थान न मिलने के कारण जा जाकर रात को पड़ रहते। कितने सड़कों के किनारे के चबूतरों पर, दुकानों के उठ जाने पर, अपने अड़्डे जमाते थे। सारांश यह कि काशी

पुरी की भूमि यात्रियों के बोझ से अकुला उठी। भारतवर्ष के सभी प्रांतों के यात्री, पंजाब से बंगाल और आसाम तक और नेपाल से कन्याकुमारी तक, यहाँ एकत्रित हुए।

यद्यपि पूष का महोना था पर भीड़ की अधिकता के कारण नगर में इतनी गर्मी पड़ती थी मानों फागुन चैत है। लोग लिहाफों को उतार दुलाई ओढ़ते और दिन को सफेद कुर्ते पहनकर निकलते थे। बनारस की म्युनिसिपैलिटी की सफाई और सड़कों के प्रबन्ध का पूछना ही क्या? दुनिया भर ग्रीष्म-ऋतु में सड़कों पर पानी छिड़का जाता है, पर यहाँ जाड़े में सड़कों की दुवक्ता सिंचाई होती है। सोमवती के दिन दो घड़ी रात से ही नगर के सड़कों और गलियों से यात्रियों का स्नान के लिए आना-जाना आरंभ हुआ, और दस ग्यारह बजे तक गली और घाट खचाखच यात्रियों से भर गये। घण्टों कहीं तिल धरने की जगह न रह गई। सेवासमिति ने बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था और घाटों के किनारे किनारे थोड़ी थोड़ी दूर पर जलपुलिस अपनी नौका लिए उपस्थित थी। फिर भी यात्रियों के मेले का रेला इतना प्रबल था कि कितने मनुष्य जल में डूबकर मर गये। सैकड़ों स्त्री-पुरुष और बालक अपने साथियों से छूटकर भूल गये। उन्हें सेवासमिति के स्वयं-सेवकों ने लाकर भूले हुआ के डेरे में रखा था और जिस जिसने अपना ठीक पता बनारस में अपने साथियों के ठहरने के स्थान का या अपने घर का बतलाया उसे सेवा-समित ने

वहाँ पहुँचा दिया । जिनके साथी उनको खोजते हुए सेवासमिति के भूले हुआओं के डेरे में आये उन्हें पहचानने पर उनके साथियों के हवाले कर दिया । इलाहाबाद की सेवा-समिति के स्वयंसेवकों के दल के साथ मुंशी दुर्गाप्रसादजी के दोनों लड़के गंगाप्रसाद और यमुनाप्रसाद भी आये थे । उन दोनों की तैनाती भूले हुआओं के डेरे पर थी ।

सोमवती के दिन प्रातःकाल मुंशी भिनकूलाल अपनी स्त्री और बच्चों का लिए गोरखपुर से बनारस पहुँचे । यद्यपि उनके टिकट छावनी स्टेशन तक के थे पर सारनाथ ही से एक पंडे के नौकर ने उनको ऐसा घेरा कि अपनी इच्छा के विरुद्ध उनको अलईपुर में उतरना पड़ा । अलईपुर के स्टेशन पर यात्रियों की इतनी भीड़ थी कि कोई सवारी न मिल सकी । निदान वहाँ से वह पंडे के नौकर के पीछे अन्य यात्रियों के साथ चले पर थोड़ी दूर चलने पर उनको एक खाली गाड़ी आती हुई देख पड़ी । गाड़ीवाले से भाड़ा तय कर वह विश्वनाथ की गली की मोड़ पर की धर्मशाला के लिये चले पर पंडे के नौकर ने उनका पीछा न छोड़ा । यात्रियों के झुण्ड को अपने एक साथी के सिपुर्द कर वह गाड़ी के कोचमक्स पर बैठ गया और गाड़ीवाले को पंडे के घर की ओर जहाँ उसके यात्रियों के ठहरने की जगह थी ले जाने को कहा । गाड़ीवान विश्वेश्वरगंज से होकर पूर्व मुँह जाने लगा कि अचानक भिनकूलाल की आँख भैरवनाथ की गली की ओर पड़ी । उसने गाड़ीवान से

कहा—कहाँ गाड़ी लिए जाता है ?

गाड़ीवाला—जहाँ पंडाजी ने कहा है ।

भि०—कौन पंडा ?

गाड़ी०—जो आपके साथ आये हैं ?

भि०—मैंने तुमको धर्मशाला का पता बतलाया न था !

गाड़ी०—बतलाया तो था पर पंडाजी कहते हैं कि धर्मशाला में आपको बड़ा कष्ट होगा, वहाँ यात्रियों की बड़ी भीड़ है, आप राजघाट पर ही उनके मकान पर ठहरेंगे । वहाँ सब तरह सुपास मिलेगा ।

भि०—नहीं गाड़ी पलटाओ । हम धर्मशाला में ठहरेंगे । हम पंडे वंडे के घर नहीं जायेंगे ।

पंडे का नौ०—(गाड़ी से उतरकर) धर्मावतार ! घर पर चलिए । वहाँ नौकर-चाकर सब हैं, बड़ी सुविधा मिलेगी । धर्मशाला में इस मेले में बड़ी तकलीफ होगी । न ठहरने की जगह मिलेगी न कोठरी न कोई डेरा देखनेवाला ।

भि०—कुछ परवा नहीं तुम्हारे बला से । हम धर्मशाला ही में उतरेंगे । (गाड़ीवान से) पलटा गाड़ी । पलटाना है या नहीं । (उतरता है) हमें उतार दो हम पैदल चले जायेंगे ।

पं० कानौ०—बाबू साहब बिगड़ते क्यों हैं हम आपको वही दिखलायेंगे । आप गोरखपुर के हैं । वहाँ के सब अमले और वकील हमारे यजमान हैं । यहाँ के रहनेवाले नहीं हैं । लखनऊ रहते हैं ! (गाड़ीवान से) पलटा गाड़ी !

गाड़ीवान—बहुत अच्छा सकार ! (गाड़ी पलटाता है) ।

पण्डे के नौकर ने घोड़ों की बाग पकड़ ली और गाड़ी को रोककर कहा—अन्नदाता, मान जायें वहाँ आपको बड़ा कष्ट होगा । हम आपको चाहें जो हो बिना पंडाजी के यहाँ ले गये और वही दिखलाये जाने न दंगे । भिनकूलाल और पण्डे के नौकर से झकझक बकबक हो रही थी कि इसी बीच में पण्डित मदनमोहन चौबे वहाँ आ गये । चौबेजी स्वयं मथुरा के पण्डा थे, और अब भी पण्डा का काम करने हैं । पर अँगरेजी और हिन्दी की शिक्षा पाने से आपके भाव बदल गये थे । देश हित के काम में लग पड़े थे । मथुरा में आपने यात्री कष्ट निवारक सभा खोली थी जिसके द्वारा वहाँ यात्रियों के लिए बहुत कुछ सुविधा होगई थी । पण्डे लोग यात्रियों को कष्ट न देकर उनके सुख पहुँचाने का प्रयत्न करते और अपने यजमानों से दूध भिक्षा लेने लगे थे । वह क.शा में भी उसी सभा की ओर से पधारे थे और सेवासमिति के स्वयंसेवक होने के कारण यहाँ सेवा समिति का काम कर रहे थे । पण्डे के नौकर की दुष्टता देख आपसे न रहा गया । उससे डपटकर बोले—तू कौन है जो गाड़ी रोकता है ? छोड़ दे बाग ।

प० नौ०—तुम हमारे बीच में बोलनेवाले कौन हो ? अपने रास्ते जाओ !

मद०—छोड़ता है कि नहीं ! अच्छा हम कोतवाली जाते हैं, अपना और अपने पण्डे का नाम बता ?

प० नौ—नहीं बताते । तुम हो कौन पूछने वाले ?

प० मद०—(एक कानिस्टबिल को देख) भाई यहाँ आना यह आदमी यात्री की गाड़ी को रोकता है और झगड़ा करने को उतारू है । नाम भी नहीं बतलाया और न उस पंडे का नाम बताता है जिसका कि यह नौकर है । मैं इसे आप के सिपुर्द कर के कोतवाली जाता हूँ ।

सिपाही ज्योंही गाड़ी के पास आया पंडे का नौकर उसे देखने ही भागा ! सिपाही ने उसका पीछा किया और कई गलियों में चक्कर लगाने के बाद उसे पकड़कर थाने पर लाया । मदनमोहन वहाँ पहुँच गये थे और रपट लिखा रहे थे कि कानिस्टबिल उसे पकड़े पहुँचा । मदनमोहन ने उसे तुरन्त पहचान लिया । कोतवाल ने तो उसे वहाँ हवालात में बंद कर दिया और मदनमोहन वहाँ से गाड़ी पर बैठकर विश्वनाथ की गली की धर्मशाला में आये । वहाँ कारमाइकल लाइब्रेरी के सामने गाड़ी को रोक दिया और असबाब धर्मशाला में एक कोठरी में डालकर स्नान करने चले । स्त्री ने बड़ा आग्रह किया कि मणिकणिका का स्नान करूँगी पर मदनमोहन ने कहा कि वहाँ बड़ी भीड़ है । कितने ही आदमी डूब गये हैं । घाट बहुत तंग और गली बड़ी सकरी है । आखिर बहुत समझाने पर वह दशाश्वमेध घाट गये । स्नान करके लौटे और दुर्धिराजगणेश पर पहुँचे थे कि इतनी भीड़ हुई कि लड़की छूट गई । भिनकूलाल उसे खोजने के लिए अपनी स्त्री समेत विश्वनाथ

के मंदिर की गली में गये किन्तु बहुत ढ़ँढ़ने पर भी लड़की न मिली। आखिर अपनी स्त्री के साथ वह नन्दीश्वर के किनारे से होकर अपने डेरे पर धर्मशाला में आये।

उनकी स्त्री डाढ़ें मार मारकर रोने लगी। भिनकूलाल उसे समझा-बुझाकर लड़की को खोजने निकलें और चारों ओर जब कहीं न पाया तो कोतवाली में जाकर हुलिया लिखाया और सेवासमिति के कार्यालय में रपोट की। वहाँ से एक स्वयं-सेवक उन्हें भूले हुआ के डेरें में ले गया पर वहाँ उनकी लड़की उस समय नहीं पहुँची थी। वह अपना पता देकर अपने डेरे लौट आये।

हुंठिराज पर भीड़ के रेले में पड़कर करुणा अपने पिता भिनकूलाल के साथ से छूट गई। वह विश्वनाथजी के मंदिर के फाटक पर पहुँची पर मंदिर में न गई। द्वार पर एक किनारे हक्का-बक्का सी देखने लगी। मंदिर से यात्रियों की भीड़ निकली और वह धक्के के प्रवाह में पड़कर सरस्वती फाटक पर जा पहुँची। वहाँ एक किनारे खड़ी होकर सक-वकाई मृगशावक की भाँति आँखों में आँसू भरकर इधर-उधर ताकने लगी कि अचानक एक स्वयं-सेवक की आँख उस पर पड़ी। उसने उससे पूछा।

स्वयं०—यहाँ तू अकेली क्यों खड़ी है। भूल गई है?

करुणा०—मैं अपने माता-पिता के साथ स्नान करके आ रही थी। साथ छूट गया। मुझे राह नहीं मालूम कि किधरसे जाऊँ।

स्वयं०—कहाँ ?

करुणा—अपने माता पिता के पास ।

स्वयं०—उनके नाम क्या हैं ?

करुणा—भिनकूलाल ।

स्वयं०—कहाँ के रहने वाले हैं ?

करुणा—लखनऊ के, पर गोरखपुर में कलकटरी में नकल छापते हैं । वहीं से आये हैं ।

स्वयं—यहाँ ठहरे कहाँ है, पण्डा का नाम जानती है ?

करुणा—पण्डा के यहाँ नहीं ठहरे हैं । यहीं कहीं विश्वनाथ के आस पास किसी धर्मशाला में ठहरे हैं ।

स्वयं—अच्छा हमारे साथ आओ हम तुम्हारे पिता को खोजकर उनके पास पहुँचा देंगे ।

करुणा अपने मन में बहुत प्रसन्न हुई और डरती हुई उसके साथ चली ।

स्वयं—यहिन डरो मत । हम सेवा-समिति के स्वयंसेवक हैं । मेले आये हुए यात्रियों की सेवा करना हमारा धर्म है । चलो हम तुम्हें भूले हुआ के डेरे में पहुँचा आते हैं । वहाँ तुम्हारे भोजनादि का प्रबंध हो जायगा और वहीं से स्वयंसेवक तुम्हारे पिता की खोज में भेजा जायगा । उन्हें बुलाकर तुम्हें उनके साथ कर दिया जायगा ।

गंगा०—गोरखपुर में किसी और को जानती है ।

करुणा—हाँ। मुंशी दुर्गाप्रसादजी को। मेरे पिता प्रायः उनके यहाँ जाया करते हैं।

गंगा०—तू भी कभी गई है ?

करुणा—(लजाकर) मैं क्यों जाने लगी।

गंगा०—अच्छा घबड़ाओ मत। मैं तुमको यदि तुम्हारे पिता यहाँ न भी मिले तो गोरखपुर पहुँचा दूँगा। मुंशी दुर्गाप्रसाद मेरे पिता हैं। मेरा छोटा भाई घर जाने वाला है। तुम्हारे पिता यहाँ आये कब ?

करुणा—आज ही सवेरे की गाड़ी से।

गंगा०—ठहरे कहाँ हैं ?

करुणा—विश्वनाथ के पास किसी धर्मशाला में।

इतने में ही यमुना प्रसाद आ गया और बोला—भैया, गोरखपुर के एक टाइपिस्ट आये थे, उनकी लड़की भूल गई है अच्छा सा नाम बताते थे। पता दे गये हैं। इतना कहकर वह पूछनेवालों का रजिस्टर उठा लाया और देखकर बोला—हाँ भिनकूलाल ! वह विश्वनाथ के सामने की धर्मशाला में ठहरे हैं।

गंगाप्रसाद ने उसी दम यमुना को एक और बालंटियर के साथ भिनकूलाल को बुलाने के लिए भेजा। भिनकूलाल और उनकी स्त्री मारे हर्ष के उछल पड़े। गंगाप्रसाद ने रजिस्टर दिखलाकर सब पता ठिकाना मिलाया, फिर करुणा को बुलाकर उनके हवाले किया।

इक्कीसवाँ परिच्छेद

स दिन से भिनकूलाल अपनी लड़की का फल-दान मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ चढ़ाकर आये उनकी स्त्री निरंतर उनसे यही कहती रही कि जहाँ तक शीघ्र हो विवाह कर डालो पर भिनकूलाल यह कहकर टालते गये कि व्यर्थ का हठ ठीक नहीं है, काम बिगड़ जायगा। मुंशीजी खरे आदमी हैं जरा भी मिज़ाज के विरुद्ध हुआ कि वह विवाह करने से इनकार कर देंगे। लड़की की यह दशा थी कि बात बात पर माँ से उलझती रहती थी और दिन भर महल्ले की लड़कियों के साथ पंचायत और अपना-पराया किया करती। घर का धंधा करना उसके लिए तिलाक था, बारह तेरह वर्ष की हो गई, पाक प्रकाश आदि अनेक ग्रंथ लेकर चाट गई पर रोटी पकाना न आया। पहले तो पकाती ही न थी पर जब कभी पकाती तो या तो रोटियाँ जल जातीं या कच्ची ही रह जातीं। तरकारी बनाती तो चिकना इतना डाल देती कि तरकारी या तो जल ही जाती या चिकने की भरमार हो जाती। जब कोई कुछ कहता तो लड़ने पर तैयार हो जाती। भगवान की दया से घर में इने गिने आदमी थे, माँ-बाप और एक छोटा सा दुधमुँहा भाई। पर इतने का भी जब कभी खाना बनाना पड़ता तो दंगा-फसाद करती और कह देती कि इतने लोगों

का खाना मुझसे न बनेगा । सफाई की तो यह दशा थी कि धोती रोज धुलाती पर दिन भर मैं फिर धोने लायक कर देती । न उसका मन सीने में लगता न पिरोने में, केवल दिन रात बात छीलती रहती थी ।

एक दिन भिनकूलाल ने बड़े प्रेम से कहा कि आज बेटी से खाना पकवा दो, कई भित्रों को खाने के लिए बुलाया है ।

माता नलड़की से कहा—बेटी ! कहते हैं कि आज तू खाना पका । दो एक भले आदमियों को खाना खिलाना है । सब सामान ले ले और सबेरे पका डाल ।

बेटी—मैं तो न पकाऊंगी । क्या मैं रोटिकरी हूँ । रसोइयाँ रख लो । मुझसे इतने लोगों का खाना न बनेगा ।

माता—(भुंभलाकर) तो क्या बैठकर पलंग का कर तोड़ेगी ।

बेटी—मैं इसी तरह रानी बनी बैठी रहूँगी । देखनेवाली जला करे ! न देख सकें तो आँखें फोड़ लें ।

भिनकूलाल कमरे से उसकी बातें सुन रहे थे । जी में तो क्रोध आया पर वह इतनी सिर चढ़ी थी कि डर के मारे बोल न सके कि कहीं मेरी भी खबर न ले डाले । अपनी स्त्री से कहा अच्छा कोई नहीं बनाता तो मैं ही बना डालूँगा ।

निदान भिनकूलाल की स्त्री ने खाना बनाया । तब वह भित्रों को खिला सके ।

कई दिन बीते एक दिन रात को जब भिनकूलाल खाना खाने बैठे तो स्त्री ने कहा—मैं विवाह करने का जब नाम लेतो

हूँ तब आप कूदते हैं। लड़की का यह हाल है कि तिनका नहीं टालती। किसी ढंग से जल्दी विवाह कर डालिये नहीं तो कहीं उसके गुण प्रगट हुए तो विवाह होना कठिन हो जायगा।

भि०—क्या करूँ। मुंशीजी कह चुके हैं कि बिना बी० ए० एल० एल० बी० हुए मैं लड़के का विवाह न करूँगा, आप जिस दिन विवाह का नाम लेंगे इनकार समझिये ?

स्त्री—फिर तो कोई युक्ति निकालनी पड़ेगी। दूर की बात नहीं। लड़की तुम्हारी ऐसी है कि बात बात पर तिनके तोड़ती है। कहीं इसके स्वभाव का पता चला तां वे कहे सुने इनकार कर देंगे। आखिर कितने दिन बात छिपी रहेगी। मैं तो जब कभी उनकी महरी आती है काँपती ही रहती हूँ कि कहीं यह अपने गुण प्रकट न करने लगे।

भि०—मुझे खुद दुःख है कि लड़की का पढ़ाना लिखाना सब व्यर्थ हो गया। उसका मिजाज ऐसा खराब निकला कि उसे छोटे बड़े की तमीज नहीं। जो मुँह में आता है कह डालती है। काम धंधे से इतना जी चुराती है। कौन जाने इसका पार कैसे लगेगा। हमारी आबरू में बड़ा लगायेगी।

स्त्री—यह तो मैं भी जानती हूँ कि जितना ही आप में और मुंशीजी में मित्रता है विवाह हो जाने पर उतना ही मन-मुटाव हो जायगा पर अब तो किसी न किसी कलबल छल से इससे अपना पिंड छुड़ाना ही भला। दिन रात कलह मचाये

रहती है। लड़की क्या शत्रु जनमी है।

भिन० — अच्छा कोई तदबीर निकालेंगे।

यह कहकर वह चौके पर से उठे और अपनी चारपाई पर पड़े पड़े यह सोचने लगे कि कौन सा ढंग निकालें कि लड़की का विवाह इसी साल हो जाय। नाना प्रकार के विचार मन में आये। कभी तो कहते विवाह कहीं अपरिचित स्थान पर कर दें जहाँ से कोई लेकर खबर आनेवाला न भी हो। कभी कहते कि चलो मुंशीजी से छलकर पेसा कसैं कि उन्हें इसी वर्ष विवाह करना पड़े। पर इसमें उनको भय था कि कहीं चालवाजी पकड़ न जाये नहीं तो इनकार अलग हो जायगा और सदा के लिये साहिब सलामत जायगी। बड़े चक्कर में थे। कुछ बुद्धि काम नहीं करती थी इसी विचार में पड़े पड़े सो गये।

सवेरे जब आँख खुली तो खो ने पूछा—कहो कोई ढंग सोचा ?

भिनकू—मुझे तो कोई उपाय नहीं सूझता कुछ बुद्धि काम नहीं देती।

स्त्री—अच्छा, पंडितों को साधिये। दो चार पंडितों के यहाँ जाइये, उन के आगे हाथ पाँव जोड़िये, कुछ दक्षिणा दीजिये जिसमें वे समर्थन कर दें कि इस वर्ष विवाह न हुआ तो पाँच वर्ष नहीं बनेगा। मुंशीजी पंडितों की बात बहुत मानते हैं, उनकी बात नहीं उलटेंगे। इधर मैं महरी को भेज-

कर मुंशियाइन को साधती हूँ कि विवाह इस वर्ष हो जाय । पाँच-पाँच वर्ष की बात ! कौन जानता है क्या होगा । पर पहले तुम पण्डितों को साध आओ । कहीं ऐसा न हो कि पण्डित लोग कह दें कि आगे वा दूसरे वर्ष विवाह बनेगा, तो तुम्हें मुँह की खानी पड़ेगी ।

भिनकूलाल उस दिन से सायंकाल को जब कचहरी से आता तो किसी न किसी पंडित के यहाँ अवश्य जाता और बड़ी नम्रता से निवेदन करता—महाराज सारा सामान विवाह का कर चुक हूँ, आटा, दाल, चावल, मायदा, चीनी सब ले चुका हूँ । यदि इस वैशाख में विवाह न हुआ तो मैं कहीं का न रह जाऊँगा । यदि आप कृपा करें और यह समर्थन कर दें कि विवाह इसी वर्ष बनेगा । फिर तीन चार वर्ष नहीं बनेगा । तो मुझे संसार में रख लें । बहुत गिड़गिड़ाता और कभी कभी तो रोने लगता था । निदान बेचारे दयालु पंडित कह देते कि अच्छा हमसे जो इन कुँडलियों को लेकर पूछने आयेगा ऐसा ही कहेंगे । यदि इसमें आपका कल्याण है तो हमें ऐसा कहने में क्या लगता है । इस प्रकार दस पंद्रह दिनों में भिनकूलाल ने एक एक पंडित को साध लिया और काशी के पंडित महामहोपाध्याय रुद्राकर द्विवेदी, गणेशदत्त और अयोध्यानाथ के हस्ताक्षर इस व्यवस्था पर करा लाया कि विवाह सिवाय आगामी वैशाख के तीन चार वर्ष तक नहीं बनता । गुरु शुद्ध नहीं है ।

यह सब ठीक कर भिनकूलाल ने अपनी स्त्री से कहा—

भि०—पंडितों को तो मैंने किसी न किसी तरह साथ लिया। अब कोई ऐसी युक्ति करो कि मुंशियायिन जी हाथ आ जावें। वस सब काम बन जायगा !

स्त्री०—पर इसमें कुछ खर्चना पड़ेगा। जानते हो कि कई बार उनके यहाँ से आदमी आ चुका। महरी जब आती है कुछ न कुछ लाती ही है और आज से नहीं जब से आप से मुंशीजी की मुलाकात हुई। अब खालीखूली आदमी भेजना उचित नहीं। कम से कम १०) लगेंगे।

भि०—(रुपया निकालकर) यह लो और अपना काम करो।

भिनकूलाल की स्त्री ने रुपये लिए और बाजार से मिठाई, फल, मेवे आदि मंगवाये और तनजेब की साड़ी वसंती रंग में रंगी। फिर अपनी महरी से कहा—

स्त्री०—महरी, कल सबेरे आना तुझे एक जगह जाना पड़ेगा और हो सके तो एक किसी और को लेती आना और न हो तो पड़ोस में जो मिसरानी रहती है उसे भेजती जाना मैं उसे ठीक कर लूँगी।

महरी—बहुत अच्छा।

महरी काम कर के गई और भिनकूलाल की स्त्री लगी पत्र लिखने। पत्र पूरा न हुआ था कि मिसरानी भी आ पहुँची।

भि०—बहू जी आसिरवाद।

स्त्री०—पाँच लागी । बहुत दिन पर देख पड़ीं । न बुलानी तो काहे को आतीं ।

मि०—मैं तो जब छुट्टी पाती हूँ आप आ जाती हूँ । आज कल एक जगह रोटी बनाना पड़ता है इसी लिए दस पंद्रह दिन से नहीं आ सकी । सबेरे की गई अभी आई हूँ । खाट पर पीठ नहीं लगी थी कि महरी ने कहा बहूजी ने बुलाया है, दौड़ी हुई आ रही हूँ । फिर ४ वजे जाऊँगी और कहीं नौ-दस वजे रात को लौटूँगी ।

स्त्री—किसके यहाँ ?

मि०—हैं एक डिण्टीसाहिब । अभी महीना दिन हुआ आये हैं । आपही की विरादरो के हैं । भला सा नाम है (सोच कर) महावीरप्रसाद । बड़े गुलाब आदमी है । बड़ा परिवार है । दो दो भाई, तीन बहिन, बीबी, २ लड़के, इनको छोड़कर उनके बाप भी हैं । नखास पर तो रहते हैं ।

स्त्री०—क्या मिलता है ?

मि०—(१) रुपये महीना खाना और कपड़ा, तीज-तिहवार का इनाम अलग ।

मि० स्त्री—जो अच्छा है । खाली छोड़ बेगार भली । एक बात तो कहो, उनके यहाँ कोई लड़का विवाह योग्य हैं ?

मि०—उनके दोनों भाई विवाह योग्य है । एक बीस वर्ष का दूसरा १८ वर्ष का है ।

भि० स्त्री—अच्छा जब काम पड़ेगा तब आप से कुंडली के लिए कहूंगी ?

मि०—भला मैं कैसे लाऊंगी ? आप अपने आदमी से मंगा-इए । नहीं कह दीजिये रोज तो कचहरी जाते हैं । किसी दिन डिप्टीसाहब से जिक्र कर दें या उनके घर ही किसी लुट्टी के दिन जाकर माँग लावें । मुझसे न बनेगा ।

भि० स्त्री—अच्छा कल आपके हमारा एक काम करना पड़ेगा ?

मि०—कब ?

भि० स्त्री—जब आपको लुट्टी मिले । सबेरे हो तो अच्छा है । कल के लिए कहती आइएगा ।

मि०—अच्छा देखूंगी । ९ बजे तक आपका काम हो जाय तो अच्छा । कल अतवार है देर को जाऊंगा ।

भि०—बहुत अच्छा । पर आज कहती आइएगा ।

मि०—काम क्या है ?

भि० स्त्री—एक जगह भोजन है । मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ । वही लड़की के विवाह की बात-चीत है । पर वह इस साल विवाह करने पर राजी नहीं होते । आप उनके घर जायें । और मुंशियाइन से ऐसा जड़ें कि इसी वर्ष विवाह हो जाता तो बहुत अच्छा था । मैं आप के पाँव पड़ती हूँ । काम हो गया तो जहाँ तक बनेगा सेवा करने के लिए हाजिर हूँ ।

मिसराइन अच्छा कहकर अपने घर गई और भिनकूलाल की स्त्री ने पत्र लिखकर समाप्त किया । पत्र ऐसे शब्दों में और

इतनी नम्रता से लिखा कि पढ़ने वाले का पत्थर सा कलेजा भी पसीज जाता। सांझ ही को पत्र लिखकर सब सामान भेजने के लिए टोकरियों में तैयारकर रख छोड़ा, फिर अपने घर के काम में लगी।

रात बीतने पर जब सबेर हुआ तो महरी आई और घर का काम करके जब छुट्टी पाई तो अपने पति को बुला लाई। भिनकृलाल की स्त्री ने सब ठीक कर दोनों के सिपुर्द किया और कहा—मिसराइन को बुला लो, वह तुम्हारे साथ पत्र लेकर जायेंगी। यह सब चीजें मुंशी दुर्गाप्रसादजी के यहाँ पहुँच। आओ। मिसराइन भीतर जायेंगी। उनको देर लगे तो तुम लोग जलदी चले आना। उनके साथ का अगोरा न करना। महरी मिसरानी को बुला लाई और तीनों मुंशीजी के यहाँ पहुँचे। मिसरानी भीतर चली गई और सब चीजें ले जाकर घर में मुंशियाइन जी के आगे रखा। मुंशियानीजी पत्र पढ़कर कुली न समाई और मिसरानी से बोली—

मु०—सब अच्छी हैं।

मि०—हाँ। पैलगी कहा है और कहा है कि पंडितों से बहुत पूछा गया पर सब यही कहते हैं कि विवाह इसी वर्ष वैसाख में बनता है आगे नहीं बनता।

मु०—भला इतने दिन में क्या हो सकता है ?

मि०—भगवान के हाथ है जो करेंगे वही होगा। साइत मनुष्यके हाथ थोड़ा ही है।

मु०—आगे को होता तो हौसले से विवाह होता अभी से तैयारी करती ।

मि०—वह भी यही चाहती हैं पर बनने को क्या करें । बनता ही नहीं । अब तो किसी न किसी भांति रीति निवाहना है । भगवान कुशल से रखें फिर तो सब कुछ होता ही रहेगा ।

मु०—फिर क्या किया जायगा ?

मि०—क्या बताऊँ । निभाने से आपही के निभेगा । वह भी क्या यह चाहते थे । एक दिन मुंशीजी एक पंडित के यहाँ दोनों कुंडलियों को लेकर गये और कहा देखिये तो विवाह आगे कब तक बनेगा । पंडित ने कहा—आगे तो तीन वर्ष तक नहीं बनता है । इस साल वैसाख में बनेगा आगे पूजने से भी नहीं बनता । यह सुनकर वह घबराये । कई और पंडितों के पास गये सबने यही कहा । काशी तक छान मारा पर किसी ने यह नहीं कहा कि आगे भी बनेगा । मजबूर होकर रह गये । जब वह ने सुना तो उसने मुझे बुलाकर आपके पास भेजा । वह चाहती थीं कि कहीं आप अलग मिलतीं तो आपके पैरों पर पड़के अपनी लाचारी कहतीं । बहूजी बड़ी घबराई हुई हैं कुछ सूझता नहीं ।

मु०—अच्छा जब नहीं बनता तो मजबूरी है । उनका क्या दोष है ।

यह कहकर मिसरानी को बिदा किया और वह भिनकू-लाल के यहाँ आकर सब समाचार आदि से अंत तक सुना गई ।

बाईसवाँ परिच्छेद



स प्रकार कुत्ते ग्रामसिंह कहलाते हैं उसी प्रकार पटवारियों को लोग गाँव का ब्रह्मा कहते हैं। प्राचीन राजाओं के चर रहा करते थे जो शत्रु राज्य में फिरा करते थे और उनमें नाना भाँति भेद कराया करते थे। आज ब्रिटिश सरकार ने अपने पटवारी रूपचर को अपने ही राज्य में खुले साँट छोड़ रखा है कि ज़िमींदार और काश्तकारों में सदा भेद कराते रहें। गाँव में जितने मुकद्दमें ज़मींदारों और काश्तकारों के बीच होते हैं सब इन्हीं पटवारियों के कारण। देवदत्त का खेत यज्ञदत्त के नाम लिख देना इनके बायें हाथ का खेत है। किसी ज़िमींदार को काश्तकार से लड़ा देना इनका नित्य का काम है। खेत में धान बोया है उसे ऊँख लिख देना इनके लिए साधारण बात है। यह चाहें तो बंजर को खेत और खेत को बंजर कर सकते हैं। अद्भुत जीव होते हैं। फिर भी काश्तकारों पर इनका इतना आतंक रहता है कि चाहे ज़िमींदार चिल्लाता रह जाय पर काश्तकार न सुने पर पटवारी के मुँह से बात निकली कि एक छोड़ दस करने को तैयार। मालगुजारी का बंदोबस्त सरकार ज़िमींदार से करे, लगान वसूल करने का अधिकार ज़िमींदार को। पर क्या मजाल बिना पटवारी के कहे कोई काश्तकार ज़िमींदार को लगान दे तो दे।

पटवारी बिगड़ जाये तो जमींदार को असामियों से लगान ाना कठिन हो जाय । लोग कहते हैं कि पटवारियों के हागज कभी सच्चे नहीं होते और यह सत्य भी है, पर हमारे सरकार का राज्य उन्हीं के हागज पर स्थिर है । इन पटवारियों के हागजात की जाँच के लिए कानूनगो के अतिरिक्त हों अफसर हैं पर फिर भी इनके हागज जैसे के तैसे रहते हैं । सम्भव नहीं कि कभी ठीक हों ।

अमानसिंह और गुमानसिंह से हमारे पाठक परिचित होंगे । उनके असामियों को जो किसी समय उनके पसीने की गूँथ अपना रक्त बहाने को उद्यत रहते थे पटवारियों ने उनके खून का प्यासा बना दिया । साल का साल बीत जाता था पर काश्तकार लगान देने का नाम नहीं लेते थे । जब काश्तकारों से माँगते तब वे कहते कि पटवारी भैया को भुलाइए । पटवारी से कहते तो आज कानूनगो साहब के यहाँ जाना है, परसों तहसीली में हाजिरी है कहकर टालता था । इस प्रकार दो वर्ष बीत गये । इस बीच में बेचारों ने दस-पाँच सरसरी, बकाया लगान की तो पटवारी ने खतियोनी की तकल ही नहीं दी । तहसील से नकल मंगाई । फिर पटवारी साहब दो-दो तीन-तीन बार समन और खुराक भेजने पर भी हाजिर हुए जब वारंट गया तब पकड़कर 'आये और डाँड़ी कठिनाई से बकाया लगान की डिगरी हुई । इस प्रकार बकाया लगान का मुकदमा दायर होने से लेकर बसूली तक

लोकवृत्ति

बाबूसाहब का उतना ही रुपया खर्च हो गया जितने की बेचारों की डिगरी हुई थी। कारण यह था कि अदालत में कोर्टफीस और तलबाना ही नहीं लगता बल्कि कदम कदम पर सरकारी अमले बेचारे मुकदमेवालों को लूटने के लिए जाल बिछाये बैठे रहते हैं। अहलमद हो या पेशकार, कुर्क अमीन हो या चपरासी, सब हाथ पसारे तैयार रहने हैं और इतना ही नहीं, ऊपर से आँखें दिखलाने और काम बिगाड़ने को तैयार।

एक बार की बात है कि बाबूसाहब के एक गाँव में एक काश्तकार था। वह डेढ़ सौ रुपया सालाना लगान देता था और सदा अपना लगान ठीक समय दिया करता था। पटवारी ने उसे उभाड़ा और उसने लगान देना बंद कर दिया। बाबूसाहब ने उस पर सरसरी करना चाहा और तहसील से उसकी जोत की नकल ली तो देखा कि पटवारी ने उसके नाम केवल पाँच बीघा और २०) लगान लिखा था। बेचारे हाथ मल के रह गये। कई बार कागजात की दुरुस्ती की नालिश की, पचासों रुपये खर्च, हुए पटवारी की गलती साबित भी हुई, पर हाकिम परगना ने उसे तम्बीह करके छोड़ दिया। इतनी बड़ी रियासत पटवारियों की शरारत से ऐसी हो गई कि बेचारे बाबूसाहब को जमींदारी से जो लाभ होता था सब मुकद्दमेवाजी में स्वाहा हो जाता और बिना कर्ज लिये मालगुजारी न चलती थी।

इसी बीच में तरमीम बन्दोबस्त हुआ। पटवारी के सिपुर्द तरमोम हुई। उसने बाबू साहब की हकीयत की चौथाई आराजी दूसरों में भर दी। रकबा तो कम हो गया पर माल-गुजारी ड्योढ़ी हो गई। गाँव में बटवारा हो गया था। बाबू-साहब ने दुरुस्ती की दरख्वास्त दी। हाकिम परगने ने तहसीलदार के यहाँ मौके की तहकीकात के लिए भेजा। मामला तहसीलदार के भी समझ में न आया, और आता कहाँ से जब पटवारी के कागजात को मंगाकर बंदोबस्त के कागजात से मिलाने तब न—निदान तहसीलदार ने लिख दिया कि जब तक पटवारी की निशान दिही न हो उसकी दुरुस्ती हो नहीं सकती। इस प्रकार सैकड़ों रुपये बरबाद करके बाबू-साहब को मुकदमा उठा लेना पड़ा और निशान दिही करानी पड़ी।

कुछ असामियों पर एक बार बेदखली की नालिश करने के लिए नकल ली और अदालत में नालिश दायर कर आये, पर अहलमद साहब की पूजा नहीं की। अहलमद साहब ने दुरुस्ती के लिए तारीख मुकर्रर करके इत्तलानामा भेजा और जब बाबू साहब इजलास में गये और मिलान किया तो एक भी नंबर गलत न था। निदान वह वापस आये पर पंद्रहवें दिन फिर दुरुस्ती वही के लिए हुकुमनामा सिर पर मौजूद। फिर अदालत में दौड़ना पड़ा। अहलमद साहब तब तक बार बार तलब करते गये जब तक नालिश पीछे एक

रुपया वसूल न कर लिया। अब हुई पेशी। पटवारी साहब तलब हुए तो आपने अपने कागजात पेश कर इजहार दिये। नये वर्ष के असामियों की जोत गतवर्ष से बिलकुल अनोखी ही थी। कितने नंबर इस असामी के उसके और उसके इसके नाम थे पर हाकिम को इतनी फुरसत कहाँ कि जाँच करे दर-असल बात क्या है? झुक मारकर पटवारी की गलत-सलत बहियों को ठीक मानकर फैसला करना पड़ता है।

एक मुकद्दमा धकाया लगान का था। असामी ने तीन वर्ष से अपना लगान ही न दिया था। पटवारी का इजहार हुआ। पटवारी ने बयान किया कि असामी लगान अदा कर चुका है। पटवारी का स्याहा तलब किया गया तो उसमें सचमुच असामी बिबाक लिखा था और उस पर अमानसिंह का दस्तखत बना था। अदालत ने यह देख अमानसिंह को तलब किया। अमानसिंह तहसीलदार के इजलास में हाजिर हुए।

तह०—बाबूसाहब आपने झूठी नालिश दायर की है।

अ०—कदापि नहीं। लगान बाकी है। मिलता तो नालिश क्यों दायर करता।

तह०—असामी लगान अदा कर चुका है।

अ०—उसने रसीद दाखिल की है? मैं तो लगान देनेवाले को दस्तखती छपी रसीद देता हूँ।

तह०—पर इसे आपने रसीद नहीं दी थी। पटवारी के स्याहे में वसूली लिखाकर दस्तखत किया था।

अ०—मैं स्याहे को देखना चाहता हूँ । मुझे जहाँ तक याद है पटवारी को कई बार बुलाया था कि गाँव में आकर लगान दिला दो और स्याहे पर दस्तखत करा लो पर वह टालता गया । गाँव में सिधा दो-एक काश्तकारों के किसी ने लगान नहीं दी है । (रसीद दिखलाकर) देखिये इस गाँव में तीन वर्ष में केवल चार रसीदें काटी गई हैं ।

तह०—(रसीद देखकर) अच्छा आप स्याहा तलब कराइये ।

अ०—(स्याहा के तलबी का फीस दाखिल कर) अदालत पटवारी के स्याहे को तलब करे । यदि मेरे हस्ताक्षर ठहरें तो मैं दोषी हूँ ।

दूसरी पेशी में जब पटवारी स्याहे के साथ तलब हुआ तो बाबू अमानसिंह ने अपनी रसीदें असामियों से पेश कराई । स्याहा देखा तो वह दस्तखत उनके हाथ का न था । आपने दस्तखत को स्याहे के दस्तखत के सामने हाकिम के आगे रख दिया । हाकिम ने बाबू साहब और पटवारी दोनों के इजहार लिये । बाबू साहब ने स्याहे पर दस्तखत करने से इनकार किया और पटवारी ने बयान किया कि दस्तखत बाबू साहब के हैं । तहसीलदार ने पटवारी को मुअत्तल किया और स्याहे और रसीद को हस्ताक्षर पहचानने वाले के पास भेजा । उसने लिख दिया कि दोनों दस्तखत एक आदमी के नहीं हो सकते । निदान तहसीलदार ने बाबू साहब के मुकदमे बकाया लगान की डिग्री की और पटवारी की बर के पास रिपोर्ट किया ।

तेईसवाँ परिच्छेद



घ का महीना है। जाड़ा कड़ाके का पड़ रहा है। इस जाड़े में मुंशी भिनकूलाल सात बजे उठ चाय पीकर अंगा पाजामा पहन किधर भागे जा रहे हैं। मोड़ से बाँयें फिरे ! जान पड़ता है कि मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ जा रहे हैं। देखें आज क्या चाल चलते हैं। मुंशीजी पूजा से उठी पाकर बैठक में आगये थे और बैठे आग ताप रहे थे। योगवश पं० गंगाधरजी भी रात को चम्पारन से आये थे और वे भी मुंशीजी के पास ही अंगेठी के सामने बैठे थे कि सी बीच में मुंशी भिनकूलाल बैठक में जा धमके और आदाब जर्जकर मुंशीजी के पास जा बैठे।

मुंशीजी—रुहिये हजरत, आज किधर सवारी सबरे आई है ?

भि०—क्या कहूँ कुछ कहते नहीं बनता, बड़े चक्र में डाँ हैं।

मु०—आखिर कुछ फरमाइये तो सही ?

भि०—बीस रोज हुये मैंने दोनों कुंडलियों को अपने यहाँ क पंडितजी को जो पूजा करने आये थे दिखलाया और कहा खिये विवाह आगे के वर्ष में कब बनता है। पंडितजी ने कहा—विवाह तो तीन चार वर्ष तक नहीं बनेगा। फिर मैंने

पंडितजी से कहा—जरा विचार कर देखिये । तो उन्होंने कुछ गिनकर कहा, अगामी वैशाख में बनता है । फिर आगे पाँच वर्ष तक नहीं बनेगा । मुंशीजी मैं तो सूख गया । मैंने कई एक पंडितों से दिखलाया । सबों ने यही उत्तर दिया । फिर मैं दो दिन की छुट्टी लेकर काशी गया और वहाँ के पंडितों से भी जाँचा पर सब यही कहते हैं कि इस वैशाख में शादी न हुई तो पाँच वर्ष तक नहीं बनेगी । लाचार होकर आप से निवेदन करने आया हूँ । अब उद्धार करना आपके हाथ है ।

मुं०—मैंने तो पहले ही कह दिया था कि बी० ए०, एल० एल० बी० पास हुए बिना मैं शादी नहीं करूँगा ।

फि०—मुझे खुद कहते शरम आती है । किस मुंह से कहूँ । पर पंडित लोग ऐसा कहते हैं ।

मुं०—इसीलिये मैं फलदान नहीं लेता था ।

यह कहकर मुंशी दुर्गाप्रसाद घर में गये और अपनी स्त्री से कहने लगे, लो फिनकूलाल ने नखरे फैलाये न । कहता है कि शादी इसी वैशाख में बनती है । फिर पाँच वर्ष नहीं बनेगी । अब क्या करूँ । लाओ (५०) मैं अभी ठाकुर जी के यहाँ से फलदान मँगवाकर (५१) का (१०१) कर के वापस किये देता हूँ और कहे देता हूँ कि भाई यह लो, दूसरी जगह शादी कर लो । मुझ से जो बन पड़ेगी मैं तुम्हारी सहायता करूँगा पर मुझे अपना संकल्प छोड़ने पर मजबूर न करो ।

मुंशीआइन—भला लोग क्या कहेंगे ?

मुंशी०—यही कि शादी करने से इनकार कर दिया । यह उनका स्वयं कहना था कि हमारी ओर से शादी के लिये इस-रार न होगा । हो तो आप नामंजूर कर दीजियेगा । इसमें हमारा क्या दोष है ।

मुंशीआइन०—पर यह उचित नहीं है । लोग यही कहेंगे कि क्या समझ के मुंशीजी ने फलदान लिया, फिर क्या समझ कर फेर दिया । यदि कहीं शादी न हुई तो इसका दोष तो हमारे सिर पड़ेगा ।

मुंशी०—हमारे सिर क्या पड़ेगा । संसार में तिलक फिर फिर जाते हैं फलदान को कौन कहै ? मैं तो जाकर साफ कहे देता हूँ कि आप का फलदान वापस है । आप शादी कहीं और कर लीजिये । मैं इस साल शादी नहीं कर सकता । फजूल लासा लगाना ठीक नहीं ।

मुंशीआइन०—कुछ भी हो इनकार करना ठीक नहीं है । मैं तो कभी फलदान फिरने न दूँगी । विवाह करूँगी और करूँगी ।

मुंशी०—यह तुम्हारा हठ ठीक नहीं । खैर, मैं फलदान तो न फेरूँगा , पर विवाह में कोई काम न करूँगा । मैं तो घर छोड़कर चला जाता मगर लोग हँसेंगे ।

यह कहकर मुंशीजी बाहर आये और बोले—अच्छा भाई नहीं बनता तो आज ही कर डालो अब तो मैं बात हार चुका हूँ ।

मुंशी भिनकूलाल अपने घर गये और विवाह का सामान

करने लगे । इधर मुंशी दुर्गाप्रसाद अपनी स्त्री के हठ पर इतने कुढ़े कि ठाकुरजी के मंदिर में जाकर प्रतिज्ञा की कि मैं इस विवाह में अपने हाथ एक पैसे की चीज न खरीदूंगा और न कुछ मुंह खोलूंगा ।

सायंकाल को जब मुंशीजी नित्य की तरह पूजाकर अपनी बैठक में आये तो पं० गंगाधरजी ने मुंशीजी से पूछा—मुंशीजी आज आप सुस्त मालूम पड़ते हैं, कारण क्या है ?

मुं०—पंडितजी क्या कहूँ, जब कभी मुझे अपने संकल्पों को विकल्प करने पड़ते हैं तो मुझ में एक प्रकार की आत्मिक दुर्बलता आ जाती है जिसका मिटाना मेरी शक्ति के बाहर हो जाता है । आज उस दुष्ट की चालबाजी में पड़कर जो सवेरे आया था मुझे अपने संकल्प को विकल्प करना पड़ा । मेरा हृदय व्याकुल हो रहा है मानों मुझ से कोई घोर पाप हो गया है ।

गंगा०—मुझे तो यह बड़े हजरत जान पड़ते हैं । मैं तो समझता हूँ कि यह अपने स्वार्थ के लिए जो न करते हों वह थोड़ा । इनकी मित्रता भी स्वार्थ साधने के लिए है । देख लीजिएगा शादी हुई कि यह हजरत फिर दर्शन न देंगे । यदि मैं पहिले जानता तो आपको ऐसे मनुष्य के पंजे में फँसने न देता । जो लक्षण इनमें है वह खलों के लक्षण से मिलते हैं । सत्य का तो इस मनुष्य में नाम नहीं है । भला इसकी संतान कैसी होगी ईश्वर ही जाने ।

मुं०—अब तो जो कुछ होना था हो गया। घर के मारे नहीं चलता नहीं तो मैं आज हो मामला साफ कर देता। ऐसे दुष्ट से पल्ला छुड़ाने का अच्छा मौका हाथ आया था, पर भगवान को यही मंजूर है। अस्तु ईश्वर तेरी आज्ञा पूरी हो।

गंगा—पर एक बात मुंशीजी मेरी याद रखिए। कहीं इनकी बातों में आकर आप फूल न जावें और बहुतसा धन न व्यय कर बैठें क्योंकि मुझे जहाँ तक इनकी आकृति और चेष्टा से पता चलता है यह हज़रत दूसरे के धन को बरबाद कराने में तनिक भी संकोच न करेंगे।

मुं०—मैं आपसे दृढ़ प्रतिज्ञा करता हूँ चाहे संसार लगा रहे पर मैं तटस्थ रहूँगा। कभी एक पैसे की चीज अपने हाथ से न खरीदूँगा और न किसी सलाह में शरीक हूँगा। मुझे इस शादी करने में तनिक भी हौसला नहीं है। यद्यपि मेरा ज्येष्ठ लड़का है फिर भी भगवान जानता है मेरा मन नहीं उमड़ता, बैठा जा रहा है। जो मैं आता है कि इस नापाक का मुँह नोच लूँ।

यह बातें हो जाने पर पं० गंगाधरजी विश्राम करने लगे और मुंशीजी भी अपनी खाट पर पड़ रहे। रात भर चिंता से करवटें बदलते रहे पर अब होता क्या था। 'चिड़िया चुन गई खेत' जो होना था सो हो गया। इसी से गँवार कहा करते हैं कि भावी प्रबल है।

चौबीसवाँ परिच्छेद



गरीबदास जो विलायत में बी० ए० की परीक्षा पास करने गये थे वहाँ से पास होकर हिन्दुस्तान लौटे और बंबई उतरे। राय साहब को आने का समाचार ले ही से पहुँच गया था। वह आने के समय बंदरगाह पर जूट थे। गरीबदास के जहाज से बंदरगाह पर पैर रखते ही राय साहब ने मारे हर्ष के उसे उठाकर अपनी छाती से लगाया। फिर दो चार दिन बंबई में रहकर रायसाहब गरीबदास के साथ गोरखपुर आये। दो सप्ताह भी न बीते थे कि गोरखपुर का हेल्थ अफसर डिप्टी सेनेटरी कमिश्नर हो गया और उसका पद खाली हुआ। गरीबदास उसकी जगह पर गोरखपुर के हेल्थ अफसर हो गये। गरीबदास ने गोरखपुर की सफाई का ऐसा प्रबंध किया कि जो गोरखपुर गंदी लियों के लिए उदाहरण माना जाता था सफाई का नमूना बन गया। जिस गली में कभी भंगी भूलकर भी नहीं जाते थे गरीबदास आप साइकिल लिये फिरने लगे। गरीबदास प्रातः जल उठते और जाँघिया चढ़ा आधी अस्तीन का कुरता इन साइकिल उठाते और शहरभर की सड़कों पर घूम आते। इतने हलकेंदार थे सब अपने अपने हलके की सफाई पर लगे होते। क्यों न हो जब अफसर इतना श्रम करे तो मातहत

क्यों न अपने काम को तन मन से करें। पानी की सफाई का उसने यह प्रबंध किया कि कुओं में प्रति मास पानी साफ करने की दवा पड़ने लगी और साल में एक बार मिट्टी निकाल दी जाने लगी। सड़कों पर जगह जगह नल के कुएँ बन गये, लोगों को शुद्ध जल मिलने लगा। पानी की निकास के लिए जगह जगह नहरें बन गईं और जहाँ घुटनों पानी लगता था वहाँ सावन भादों में लोग जूता पहने चले जाने लगे। बीमारी के समय गरीबदास खुद गली गली फिरते और अपने मातहत डाक्टरों को हुकुम दे रखते कि मरीजों को ठीक समय पर औषधि दी जाय और दिन में दो बार अपने अपने हल्के के मरीजों की रिपोर्ट भेजा करें। उनके सुप्रबंध से सारा नगर प्रसन्न और सुखी था।

अभी तक यद्यपि गरीबदास ने शिखा रख ली थी पर उनकी शुद्धि नहीं हुई थी। दैवयोग से आर्यसमाज के शुद्धि के उपदेशक गोरखपुर में पधारे। आर्यसमाज के मंदिर में कई दिन तक उपदेश हुआ। बड़ा उत्सव मनाया गया। गरीबदास की शुद्धि बड़ी धूमधाम से हो गई। गरीबदास ने ५००) शुद्धि की सहायता के लिए शुद्धि सभा को प्रदान किया। रायसाहब ने भी ५००) अपनी उदारता से दान दिया। कई और भी शुद्धियाँ हुईं। सबसे अद्भुत शुद्धि जनाना मिशन की एक मिस कानर्स की थी। यह नैनीताल की ओर की पहाड़िन थी और बहुत बचपन ही से ईसाइयों के यहाँ अना-

यालय में पली थी। शिक्षा भी इसने अच्छी प्राप्त की थी और लाहौर की एल० एम० एस० परीक्षा पास थी। यहाँ गोरखपुर में वह कई वर्षों से जनाना अस्पताल की प्रधान डाक्टर थी। उसकी सेवा पर पादरियों को गर्व था। उसने जब आकर आर्यसमाज में शुद्धि के आवेदन-पत्र पर हस्ताक्षर किया तो पादरियों ने बड़ा शोर मचाया, और कलक्टर के यहाँ तक पहुँचे। पर मिसकानर्स स्वयं कलक्टर के इजलास में गई और दरखास्त दी कि “मैं अपने मन से बिना किसी के कुछ कहे सुने हिन्दू होना चाहती हूँ, मैंने स्वयं जाकर आर्यसमाज की शुद्धि-सभा में प्रार्थनापत्र दिया है और उसके उत्तर आने पर मैं शुद्ध होना चाहती हूँ। मेरा विश्वास ईसाई धर्म से उठ गया है। पादरी लोग इसपर व्यर्थ आडंबर मचा रहे हैं। यदि वे चाहते हैं कि मैं हिन्दू न बनूँ तो वे मेरे प्रश्नों का समाधान कर दें। यह प्रश्न मैं उनसे खुले मैदान में करने को प्रस्तुत हूँ। मैंने अपने रहने के लिए मकान किराये पर ले लिया है अतः प्रार्थना है कि चार पुलिस के कानिस्टबिल तैनात कर दिये जायें कि मिशनवाले मेरे असबाब उठाने में तकरार और फसाद न करें।”

कलक्टर यह प्रार्थनापत्र पाकर विस्मित हो गया और पुलिस को लिखा कि एक हेड कानिस्टबिल और चार कानिस्टबिल मिस० कानर्स के साथ तैनात कर दिये जायें। मिस कानर्स पुलिस की सहायता लेकर नए मकान में आ गई।

दूसरे दिन उसने नगर में एक विज्ञापन बँटवाया:—

मैं कई वर्षों से गोरखपुर की स्त्री जाति की सेवा करती आती हूँ। अब तक मैं जनानामिशन के अस्पताल में मिशन की ओर से दवा देती और चिकित्सा करती थी। अब मेरा मिशन से कोई संबंध नहीं रहा और न मेरा विश्वास ईसाई धर्म पर है। अतः मैं अब रायगंज में आ गई हूँ और जब तक कोई और स्थान नियत न कर लूँ, यहीं रहकर अपनी बहिनों की चिकित्सा और सेवा करूँगी। मुझे आशा है कि हमारी बहिनें हमारी सेवा से लाभ उठायेंगी। मैं अपने स्थान पर प्रातः काल से १० बजे तक बिना फीस रोगियों को देखूँगी।

मिस कानर्स० एल-एम-एस

भूतपूर्व डाक्टर-एस

जनाना मिशन अस्पताल, गोरखपुर

यह विज्ञापन नगर में बँटते ही रायगंज में स्त्रियों की भीड़ लगने लगी और जनाना मिशन का अस्पताल फीका पड़ गया। सात दिन बाद मिसकानर्स की शुद्धि बड़े घूमधाम से आर्य-समाज में की गई। उन्होंने घोषणा की कि मैं जब तक इस नगर में रहूँगी विधवाश्रम में ४ घंटे नित्य अपराह्न में जाकर निःशुल्क शिक्षा दूँगी और चिकित्सा करूँगी। मिस कानर्स की शुद्धि से ईसाइयों के प्रचार में बड़ा धक्का लगा। कारण यह था कि औषधि के बहाने से अस्पताल में स्त्रियाँ जाती थीं और वहाँ जनाना मिशन की स्त्रियाँ उन्हें ईसाई धर्म का

उपदेश देती और फुसलाकर जब कभी मौका मिलता एकाध को मिशन में रोककर ईसाई बना लेती थीं। अब जब से मिस कानर्स अपनी शुद्धि कराके नगर में रहने लगीं स्त्रियों को अपनी चिकित्सा के लिये जनानामिशन जाने की आवश्यकता न रह गई। घर पर शिक्षा देना तो मिसएलिस के मुकद्दमे से ही बंद हो चुका था, अस्पताल का बहाना था, वह भी जाता रहा। अब जनानामिशन गोरखपुर में रखना ईसाई पादरियों को व्यर्थ जँचने लगा और अंत को उन्हें वहाँ से जनानामिशन उठा लेना पड़ा।

पच्चीसवाँ परिच्छेद



म नवमी को अभी आठ दस दिन हैं पर रेल गाड़ी घड़ी घड़ी पर खुलती है। जान पड़ता कि सारा देश अयोध्या में फट पड़ेगा। गरीब-दास और रायसाहब ने मिलकर रामनवमी स्नान करने का विचार किया और मुंशी दुर्गा-प्रसादजी के यहाँ गये। वहाँ पं० गंगाधर जी भी अपनी स्त्री सहित रामनवमी स्नान के विचार से रात की गाड़ी से आये थे। दंड प्रणाम के बाद बातें होने लगीं।

राय०—हेल्थ आफिसर साहब का अनुरोध है कि रामनवमी का स्नान किया जाय। आप भी चलते तो बहुत

अच्छा होता । जिस दिन की ठहरे एक इंटर की गाड़ी रिजर्व करा ली जाय ।

मुं०—मैं तो स्वयं आपके पास आनेवाला था कि आप से मंदिर के पुजारी के नाम एक पत्र भेजवाऊँ । कारण यह है कि पंडितजी (पं० गंगाधर की ओर संकेत कर) आज रात को चंपारन से आये हैं । इनका बड़ा अनुरोध है कि रामनवमी का स्नान किया ही जावे । आज मैं जजसाहब को दस दिन की छुट्टी के लिए दरखास्त दूँगा । मंजूर हो गई तो आपकी खिदमत में हाजिर हूँगा । फिर कब चला जायगा इसके लिये सलाह हो जायगी । सब लोग साथ ही साथ चलें तो बड़ा आनन्द रहेगा ।

राय०—(पं० गंगाधर जी की ओर इशारा करके) मैं पंडितजी को पहचानता हूँ पर कहाँ देखा है याद नहीं आती ।

मुं०—आपने ज़रूर देखा होगा । यह बहुत दिनों तक गोरखपुर में डिप्टी इन्स्पेक्टर मदारिस रह चुके हैं । बड़े ही विद्वान और सज्जन हैं । आज कल आप सब छोड़ छाड़कर चंपारन में खेती का सुख भोग रहे हैं । (हँसकर) जरा देखिए तो सही कैसी खासी गँवार की सूरत बना रखी है । अच्छा अब तो आप समझ गये होंगे । जरा सोचकर नाम तो बतलाइये ?

राय०—आहा ! पंडित गंगाधर जी हैं । अब रूप बना रखा है (उठकर मिलते हैं) कहिये अच्छे तो रहे ?

गंगा—ईश्वर की कृपा से अभी तक तो अच्छी हूँ ।

राय०—अच्छा अब तो आशा दीजिए । (मुंशीजी से) सायंकाल को कचहरी से पलटते हुए दर्शन दीजिएगा ।

रायसाहब और गरीबदासजी अपनी गाड़ी में बैठकर सुर्खल गये । मुंशीजी ने कचहरी पहुँचते ही साहब को छुट्टी की दरखास्त दी । साहब ने छुट्टी मंजूर कर ली । दिन भर इजलास का काम कर मुंशीजी कचहरी में उठे तो गाड़ी पर बैठते ही कोचवान से कहा, जरा रायसाहब के यहाँ से होते चलो, नहीं तो घर पहुँचकर कौन आवेगा ? गाड़ी कचहरी से चली और आकर रायसाहब की कोठी के सामने खड़ी हुई । मुंशीजी गाड़ी से उतरे और रायसाहब की कोठी में पहुँचे । कोठी में गरीबदास बैठे थे । उन्होंने उठकर मुंशीजी को लाकर कोठी में बैठाया । थोड़ी देर में रायसाहब भी आये और आते ही मुंशीजी से पूछा—

राय०—कहिए साहब छुट्टी मंजूर हो गई न ?

मु०—हाँ छुट्टी तो मंजूर हो गई । अब जब से चलिए चलने को तैयार हूँ ।

राय०—तो अच्छा हो कि हम लोग यहाँ से छट्ठ को चलें । आज मैं स्टेशन मास्टर को एक डब्बा रिजर्व करने के लिए लिखे देता हूँ ।

मु०—पर डब्बा पेसा हो जिसमें आधा जनाना और आधा मरदाना रहे जिसमें स्त्रियाँ भी हम लोगों के साथ ही साथ अलग रह सकें ?

गय०—(गरीबदास से) तो लीजिए यह कलम कागज है एक चिट्ठी लिख डालिए (पुकार कर) कोई नौकर है ! जाकर मुनीम जी को तो बुला लाओ और देखो पहरे पर कौन कौन सिपाही हैं ।

वह आदमी गया और थोड़ी देर में आकर बोला—मुनीमजी आते हैं और पहरे पर रामदत्त, देवीसिंह और मैं शिवदत्त हैं ।

राय०—अच्छा तुम वर्दी पहनकर तैयार हो आओ । स्टेशन मास्टर के यहाँ जाना है । (इसी बीच में मुनीम भा आ गये) मुनीमजी ५०) लाकर दे जाइए और जब आदमी स्टेशन से लोट आवे खर्चा पूँछकर लिख लीजिएगा ।

मुनीमजी उधर से रुपया लाये इधर शिवदत्त वर्दी पहनकर आ पहुँचा । गरीबदास चिट्ठा पहले से ही लिख चुके थे । रायसाहब ने चिट्ठा पढ़कर दस्तखत किया और शिवदत्त को चिट्ठा और ५०) देकर कहा—यह लेकर स्टेशन मास्टर के पास जाओ और जो रुपया वह माँगें देकर रसीद और चिट्ठा का जवाब लेकर सांघे आओ । शिवदत्त तो चिट्ठा और रुपये लेकर चला गया । मुंशी जी रायसाहब से यह कहकर घर सिधारे कि जब जवाब आवे तो खबर कर दोजिएगा ।

गाड़ी का प्रबंध हो गया और मुंशी दुर्गाप्रसाद पं० गंगाधर जी, रायसाहब और गरीबदास तथा मुंशी दुर्गाप्रसाद और रायसाहब के घर की स्त्रियाँ और पं० गंगाधरजी की पंडितानी जी तथा कमला देवी सब गोरखपुर से रिजर्व गाड़ी में रवाना

हुप। दो-चार नौकर भी थे। उनको टिकट लेकर तीसरे दर्जे की गाड़ी में बैठा दिया। भीड़ इतनी थी कि एक एक कमरे में ८ की जगह अठारह आदमी भर दिये गये और मुसाफिर-गाड़ी के अतिरिक्त माल गाड़ियाँ लगा दी गईं जो यात्रियों से खचाखच भरी थीं। स्टेशनों पर आदमी बाज का भाँति टूटते थे पर गाड़ी में जगह न मिलने के कारण कितने ही रह जाते थे और रेलवे कर्मचारी उनको यह कहकर रोक लेते थे कि ठहरो अभी गाड़ी आती है।

गाड़ी लकड़ मंडी स्टेशन पर पहुँची। वहाँ धूप की वह गरमी थी कि पुल पर की रेत नरक के बालु के कुंड की भाँति तपती थी, पैर झुलसी जाता था। इस पर वायु इतनी तीक्ष्ण चलती थी कि सीधी आँख करके चलना कठिन था। सवारी कोई मिलती न थी और मिलता भले पर मेले के मारे पुल पर से निकलना दुष्कर था। बड़ी कठिनाई से दो ठेले मिले। उसी पर असबाब और स्त्रियों को लाद किसी न किसी प्रकार से ठाकुर द्वारे में पहुँचे। वहाँ कमरों की सफाई पहले ही से हो चुकी थी। सब लोग सुख से ठहरे। फिर कमरों को बंद कर सूर्य के स्नान के लिए चले। उस वर्ष सूर्य सर्गद्वार को छोड़कर मील डेढ़मील पूर्व हट गई थी और स्नान करनेवालों को रेत से होकर स्नान करने जाना पड़ता था। इसी रेत में आर्य्यसमाजियों, ईसाइयों और पुलिस के डेरे खड़े थे। जगह जगह साधु मंडलियाँ पड़ी थीं। कहीं भगवद भजन होता था, कहीं रामायण हो रही थी, कहीं कहीं पंडितजी चौकियाँ बिछाये कथा कह रहे थे। घाट के किनारे

पंडों के झंडे और चौकियाँ गड़ी थीं। यात्रियों को देख चारों ओर से यही शब्द कान में आते थे इधर—आओ यजमान ! धेला पैसा जो खुसी से दान कीजिए वही हमारा है इत्यादि।

बड़ी कठिनाई से भीड़ चीरते हुए सब लोग घाट पर पहुँचे, पहले स्त्रियों को नहलाकर फिर आप स्नान किया। अभी लोग घाट ही पर थे कि एक ओर कुछ शोर मचा, चाइयाँ किसी यात्री की गठरी लेकर भागा था। लोगों ने पीछा किया पर भीड़ में उसका पकड़ना सहज नहीं था, वह नव दो ग्यारह हो गया। यात्री हाथ मलता रह गया। अयोध्या के मेले में चाइयों की भर-मार रहती है, कारण यह है कि गोंडे के जिले में वरुआरों की बस्ती है। वही यहाँ आते हैं। यह लोग सोते के माल को हाथ नहीं लगाते। वह लेते हैं जागते के माल को। आँख झपकी या ध्यान बटा कि गठरी गायब। किसी तरह सब लोग स्नान करके अपने डेरे पर आये।

रात के समय सब लोगों ने विचार किया कि चलो आज मंदिरों में उत्सव देखा जाय। सब लोग ८ ही बजे खा पी कर तैयार हो गये और निकल पड़े। मार्ग में अनेक मंदिरों में दर्शन करते और उत्सव देखते सब लोग टीकम गढ़ के कनक भवन में पहुँचे। वहाँ उस समय भगवान के आगे कीर्तन हो रहा था, बड़ी भीड़ थी, तिल रखने की जगह नहीं। आँगन और दालान सब खचाखच भरे थे। यह लग भी एक किनारे खड़े हो गये। आधा घंटा बीता था कि एक स्त्री अचानक

व्याकुल होकर चिल्ला उठी—हाय कहाँ जाऊँ ! स्त्री व्याकुल मृगी की भाँति इधर-उधर फिर रही थी । जान पड़ता था कि अपने साथिया को खोज रही है । उसकी अवस्था देखकर उन लोगों को बड़ी कष्ट आई और कमला देवी को उसका पता लेने के लिए भेजा । वह उस स्त्री के पास गई और उसे धीरज देकर पूछने लगी—

कमला—बहिन क्यों इतनी घबराई हुई हो ?

स्त्री—मरे साथी यहीं बैठे थे पर न जाने कहाँ चले गये । (रोकर) अब मैं कहाँ जाऊँ ?

कमला—घबराओ नहीं, अपने साथियों के ठिकाने बताओ । जहाँ वे होंगे हम तुम्हें पहुँचा देंगे ?

स्त्री०—मैं यहाँ कभी नहीं आई हूँ । न मुझे यही मालूम है कि वे किस मंदिर में ठहरे हैं । मुझे तो राह तक मालूम नहीं । हाय मैं कहाँ जाऊँ !

कमला—घबराओ नहीं ! अपने गाँव का नाम बताओ, अपने मयहर का पता बताओ, हम तुमको वहाँ पहुँचा देंगे । धैर्य धरो ।

स्त्री—(पैर पर गिरकरकर) मैं आपका बड़ा जस मानूँगी ।

कमला—अच्छा हम लोगों के साथ हमारे डेरे पर चलो । स्वस्थ हो । हम तुमको बिना किसी कष्ट के जहाँ तुम कहोगी पहुँचा देंगे ।

वह स्त्री इन लोगों के साथ होली और सबके सब अपने डेरे

पर आये । रात अधिक बीत गई थी । सब अपने अपने बिस्तर पर सोने लगे । राह में पूछने से जान पड़ा कि वह ब्राह्मणी थी, इस लिए पंडितानी जी के पास कर दी गई और वहीं उसके लिए एक कमल बिछवा दिया गया । रात को पंडितानीजी से और उससे इस प्रकार बातें हुई ।

पंडितानी—तुम्हारा घर किस गाँव में है ?

स्त्री०—रमवापुर में ।

पं०—जिला ?

स्त्री०—बस्ती

पं०—थाना ?

स्त्री०—अमोढ़ा ।

पं०—घर क्या होता है ?

स्त्री०—खेती । जिर्मीदारी भी है ।

पं०—तुम्हारा मयहर कहाँ है ?

स्त्री०—देवतही, थाना कपतानगंज में ।

पं०—जिला ?

स्त्री०—बस्ती । बहुत दूर नहीं है ।

पं०—पिता का नाम ?

स्त्री०—रामसुचित पाँडे ।

पं०—क्या काम करते हैं ?

स्त्री०—खेता करते हैं और माँगते हैं ?

पं०—श्वसुर का नाम ।

स्त्री०—गंगादीन मिश्र । पर अब वह नहीं हैं । मेरे विवाह के दूसरे वर्ष भर गये ।

पं०—पति का नाम ।

स्त्री०—(संकोचकर) नाम कैसे लूँ । अच्छा जहाँ माघ का मेला होता है ।

पं०—प्रयागदत्त ?

स्त्री—हां ।

पं०—तुम्हारे घर कौन कौन है ?

स्त्री०—मेरे दो जेठ हैं । दोनों साथ आये थे और एक देवर, वह घर है ।

पं०—नाम ?

स्त्री०—देवर का नाम तो त्रिवेणी है और जेठों के नाम वहाँ की दोनों नदियों पर है ।

पं०—गंगादत्त और यमुनादत्त ?

स्त्री०—हाँ ।

पं०—अपने घर से स्त्रियों में तुम्हीं आई थीं वा कोई और भी थी ?

स्त्री०—मैं ही आई ।

पं०—यह क्यों ? और क्यों नहीं आई ?

स्त्री०—कारण यह था कि मेरे पति का देहान्त इसी अगहन में हो गया । इस लिए मुझे यहाँ कपड़ा बदलवाने लाये थे ।

इस प्रकार बातें करते जब थोड़ी रात रह गई तब दोनों सो

गई। सबेरा होते सब सूर्य स्नान करने गये। रायसाहब ने अपने दो आदमी उस स्त्री के साथियों को खोजने के लिए भेजे और कई दिन तक उनको ढूँढाया पर किसी का कुछ पता न लगा। निदान जब स्नान कर सब लोग गोरखपुर आये तो उस स्त्री को अपने साथ ले आये और गोरखपुर के विधवाश्रम में रख दिया। गोरखपुर से रायसाहब ने अपना आदमी स्त्री के मयहर और पीहर में भेजा। पर मयहर में जाने से मालूम हुआ कि उसका पिता मर चुका था, भाई लोग उसे अपने यहाँ रखने से इनकार करने लगे और कहने लगे कि हम आप दाने दाने को तरस रहे हैं, उसका पालन-पोषण कैसे कर सकते हैं। पीहर-वालों ने कहा हम ऐसी स्त्री को अपने घर में घुसने नहीं दे सकते जो अयोध्या में कपड़े छोड़ने गई और हमारा साथ छोड़-कर न जाने कहाँ कहाँ रही। लाचार उसे सदा के लिए विधवाश्रम में स्थान दिया गया।

छब्बीसवां परिच्छेद



शाख का महीना आरंभ हुआ कि भिनकूलाल ने विश्वामित्र की भाँति हरिश्चन्द्र को घेरा और मुंशा दुर्गाप्रसादजी के यहाँ आ धमके। आते ही आदाब-अर्ज करके बैठ गये, फिर विवाह की बात छोड़ी।

मु०—मैं इस विषय में कुछ नहीं जानता । जब आप मुनासिब सम्पत्ति तिलक भेज दें ।

झि०—आप तो महात्मा हैं । मुझे तो दोनों ओर का काम न है ।

मु०—यह तो बनाने की बात है । आप अपना काम कीजिए । इधर के काम करनेवाले बहुत हैं । कौन सा बड़ा काम है । आपके इर्शाद की तामील है, रस्म अदा करना है ।

झि०—मुंशीजी ! मुझे तो भाइयों ने मझधार में छोड़ दिया । लखनऊ की सारी सम्पत्ति दोनों भाई दबा बैठे । मैं जब माँगने गया तो इनकार कर दिया । अब मैं क्या करूँ, बड़ी कठिनाई से घर के जेवरात गिरो रखने पर एक महाजन ने (५००) दिखा है उतने ही में निर्वाह करना है । (टोपी उतारकर मुंशीजी के पाँव पर रखता है) वस अब इज्जत आप ही के हाथ है ।

मु०—जाओ अपना काम करो । मैं तो हार चुका हूँ कि तुम से एक पैसा न माँगूँगा ।

झि०—(आँखों में आँसू भरकर) मुंशीजी भाइयों के धोखा देने पर जी मसोसकर रह जाता है । ऐसे समय पर काट गये कि आशा न थी । हौसला मन ही में रह गया । पर मुंशीजी एक बात का ध्यान रहै कि तिलक लानेवालों को पाँचों कपड़े जरूर दिये जायं । बेचारे नाम करेंगे ।

मु०—यह आप नाहक कह रहे हैं, जो मुनासिब होगा किया जावेगा । इसमें आपका बोलना बेजा है ।

झि०—मुंशीजी ! नाच का क्या इंतजाम होगा ?

मु०—नाच नहीं जायगा । आप चाहें तो अपनी तरफ कराइये । हमारी ओर से नाच में एक पैसा नहीं लगाया जायगा ।

झि०—और आतश बाजी ?

मु०—वह भी नहीं रहेगी

झि०—बाजे कितने रहेंगे ?

मु०—केवल एक ! शहनाई ।

झि०—और अंग्रेजी बाजा ?

मु०—बिलकुल नहीं ?

झि०—नहीं मुंशीजी दस पंद्रह रुपये का मामला है आबरू मिट जायगी ।

मु०—मैं तो एक नहीं ले जाऊँगा । आप अपनी ओर से अपने खर्चे से हजार करें । झिनकूलालजी, लोग चिल्लाते हैं कि कौम जहेज से तबाह हुई जाती है पर जब कोई इस बुरी रस्म को दर गुजर करना चाहता है तो उसे लोग फुजूल खर्ची के शिकंजे में कसना चाहते हैं । उस वक्त उनको यह कहते शरम नहीं आती कि 'यह जरूर हो ।' भाई जहेज और फुजूल खर्ची दोनों लाजिम व मलजूम हैं बिला दोनों के दूर हुए कौम की भलाई नहीं । जहेज दूर करने से लड़के बाले को फुजूल खर्ची पर मजबूर करना उसे बरबाद करना है, इस लिये मेरी गुजारिश यही है कि आप इस मामले में मुझसे बात न करें । आप अपना काम करें, इधर के लोग अपना काम करेंगे । न आपका

यह लोग छिद्रान्वेषण करें और न आप इनका नुकस निकालें।

फि०—पर एक बात मुझे खास तौर से कहनी है ?

मु०—उसे भी फरमा डालिये ?

झि०—मेरी बहन की शादी संडीले के राजा वजीर चन्दजी के घराने में हुई थी। वह विधवा हैं। उनके लिए कोई बंशकीमती साड़ी अवश्य रहे। नहीं तो बड़ी शिकायत होगी ?

मु०—आप फजूल कह रहे हैं, हम वही करेंगे जो हमें समाई होगी। शिकायत हो तो हुआ करे। जब हम आपकी शिकायत नहीं करते तो आप लोगों का जुबान खोलना क्या है आपही समझें।

मुंशी झिनकूलाल अपने घर गये। तिलक के दिन एक छोटी सी थाली में एक थान नकली कमखाव, एक थान सझी और तीन थान सादे कपड़े, कुछ रंगे हुए चावल, नारियल, सुपारी और १६६) सात आदमियों के हाथ भेज दिये और आप यह कहला कर मुँह छिपा कर घर में बैठ रहे कि सिर में बड़ा दर्द है। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने रात को सबको भोजन कराया और दो-दो रुपया आदमियों को देकर खसत किया। जब आदमी लौट कर झिनकूलाल के यहाँ गये तो झिनकूलाल की तूती उड़ गई। उन्होंने समझा था कि अच्छा उल्टू फंसा है, आप एक पैसा न खरचेंगे और मुंशीजी के रुपये बरबाद कर बाहवाही लेंगे।

विवाह का दिन आया । बरात निकली । द्वारपूजा हुआ । वहाँ भी झिनकूलाल ने नाम ही नाम को दिया पर पण्डित की दक्षिणा इतनी बतलाई जो उस रकम की पचगुनी थी जो झिनकूलाल ने द्वारपूजा में दी थी । पर मुंशी दुर्गाप्रसाद के भाई वहाँ थे । द्वारपूजा की रकम पण्डितजी को दे दी और यह कहकर चले आये कि जो कुछ मिला है वह आपकी नजर है हमें कुछ न चाहिए । पर रात को जब यह लोग बरातके खिलाने में जी चुगाने लगे तो मुंशीजी ने झिनकूलाल को बुलाया और कहा—एक यही रह गया है । याद रहे कि खिलाने में धोखाबाजी करोगे तो बनेगी नहीं । न खिला सकते हो तो साफ साफ कह दो, हम इन्तजाम कर लें, अभी सबेरा है ।

बरात को रात के समय तो किसी न किसी प्रकार खाना मिल यगारप सबेरे ही पण्डितजी अच्छत लेकर आये और बोले—यह अच्छत देने का मुहूर्त है । फिर भद्रा लग जायगी । मुंशीजी ने बड़े हर्ष से अच्छत लिया और अपने आदमियों से कहा—जाकर खबर कर दो कि हम लोग आ रहे हैं । सहसा मुंशी झिनकूलाल आप आ गये । मुंशीजी ने उनको देखते ही कहा—

मु०—अच्छत तो आ गया, अब सब लोग जाते हैं । यदि आपके यहाँ माड़व हिलाने की रीति हो तो हम उसे करने के लिए प्रस्तुत हैं, न हो तो कोई बात नहीं ।

झि०—भात और माड़व सब होगा पर अच्छत बाद, क्योंकि साइत न रहेगी ।

मु०—फिर क्या माड़व का काम बिना साइत होगा। मुझे क्या, जैसा आप के यहाँ होता हो।

झि०—मैं घर जा कर पूछे आता हूँ।

झिनकूलाल घर में गये और थोड़ी देर में आकर कहा—
चलिये भात खा लीजिए और माड़व भी हिला दीजिए।

मु०—पर आज्ञा के लिए तो भेजिये ? हमें तो आपके यहाँ की सारी बातें निराली देख पड़ती हैं।

झि०—मैं स्वयं आज्ञा मांगने आया हूँ ?

मु०—पर यहाँ की तो यह रीति नहीं, आपके लखनऊ में होगी। यह तब तो यही होता है कि एक कटोरा, गडुआ, धोती और रुपया लेकर आज्ञा मांगने आते हैं।

झि०—मुझे मालूम नहीं था। अभी तामोल करता हूँ।

मु०—जो बात है वह कह दी आप करें वा न करें।

झिनकूलाल बरात से उठकर घर गये और पण्डित को धोती, गडुआ और एक रुपया लेकर बरात में भेज दिया। घण्टा भर बीता था कि भात के लिए बुलाने गये। वहाँ तो लोग पहले ही तैयार बैठे थे। सब लोगों ने उठकर भात खाया और माड़व हिलाकर बरात में आये। झिनकूलाल ने बर को रोक लिया और एक घण्टा भी न गुज़रा था कि लड़की का डोला बरात में पहुँच गया।

बरात के लोग चलने को तैयार थे ही, मुंशीजी उठ खड़े हुए और सब लोग चल पड़े। राह में मुंशी झिनकूलाल नंगे

पैर दौड़े हुए आये और मुंशीजी का गाड़ी रोक हाथ जोड़कर कहा—मिहरवानगा करके लड़की को दो-चार दिन बाद खसत कर दोजियेगा । मुंशीजी ने कहा आप खुद मुख्तार हैं, जो चाहें करें, पर क्या अब यह आखिरी दर्शन है । यह कह गाड़ी बढ़ाने को कहा और बात की बात में अपने घर आये ।

वहाँ दूल्हा दुलहिन उतारे गये । कई दिन तक मित्रों को भोज दिया गया पर मु० भिनकूलाल न देख पड़े न देख पड़े ।

सत्ताईसवाँ परिच्छेद



वाह हो गया । वह भी आई और दो चार दिन रह कर अपने मँके चली गई । एक दिन सायंकाल के समय रायसाहब अकंले मुंशी दुर्गाप्रसादजी के यहाँ आये । मुंशीजी पूजा कर रहे थे । नौकर ने बैठक खोल दी और रायसाहब को बैठा कर पान इलाइची ला कर दी । थोड़ी देर में मुंशीजी भी पूजा कर बैठक में आये और रायसाहब से कुशल प्रश्न के अनन्तर कहा—कहिये रायसाहब क्या आज्ञा है ? कैसे कृपा की ?

राय०—आपसे एक बात में सलाह लेनी है । आज्ञा हो तो निवेदन करूँ ।

मु०—हाँ अवश्य आज्ञा कीजिए । मैं हाजिर हूँ ।

राय०—गरीब दास को आप जानते हैं और मिस कमला से भी आप परिचित हैं। दोनों हम लोगों के साथ अयोध्या रामनौमी के स्नान में गये थे। वह हेल्थ अफसर हैं और यह लेडी डाक्टर है।

मु०—हाँ जानता क्यों नहीं। दोनों बड़े ही योग्य और सज्जन हैं। सच पूछिए तो ऐसों ही की शुद्धि से हिन्दू जाति का कल्याण हो सकता है। बड़े ही नम्र हैं।

राय०—और आप यह भी जानते हैं कि दोनों का अभी विवाह नहीं हुआ है।

मु०—हाँ यह भी जानता हूँ।

राय०—अब यदि दोनों का परस्पर संबंध हो जाय तो कैसा ?

मु०—बहुत उत्तम है। इससे बढ़कर क्या हो सकता है। अच्छी जोड़ी है।

राय०—अच्छा तो आप इसमें क्या सहायता कर सकते हैं।

मु०—जो आप आज्ञा दें मैं करने को तैयार हूँ। तनमन से आपकी आज्ञा पालन करूँगा।

राय०—अच्छा यह सब बातें ठीक ही समझिए। मैं वरपक्ष का काम अपने सिर लेता हूँ। आप कन्या पक्ष का भार उठावें।

मु०—आपकी आज्ञा सिर आँखों पर।

राय०—सो विवाह की तिथि ज्येष्ठ वदी एकादशी नियत है। इसी बीच में सब करना है।

मु०—मेरे यहाँ सब सामान तैयार है, आप जब कहें टीका

भेज दूँ, आप बरात लेकर आइए। मैं बड़े हर्ष से कन्यादान करूँगा और यथा साध्य सेवा सत्कार कर दूँगा।

सब बातें निश्चित कर रायसाहब तो अपने घर गये। मुंशी जी ने दूसरे दिन अपनी गाड़ी भेजकर कमला देवी को अपने यहाँ बुला लिया।

दूसरे दिन मुंशीजी ने एक चांदी की तश्तरी में १००) रुपये और अच्छत फूल, फल, नारियल, सुपारी, कपड़े एक ब्राह्मण के हाथ रायसाहब के यहाँ टीका भेजा, रायसाहब ने टीका ग्रहण कर सत्कार पूर्वक ब्राह्मण देवता को विदा किया। नगर भर में इष्टमित्रों को रायसाहब और मुंशीजी ने अपनी अपनी ओर से निमंत्रित किया। नियत समय पर बरात आई। नगर के बड़े बड़े रईस, अमले, सब इधर से या उधर से सम्मिलित हुए। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने सबका स्वागत किया, और सबको जलपान कर विदा किया। रात को गरीबदास और देवी का विवाह पं० गंगाधर जी ने कराया। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने कन्या का दान किया। दो दिन तक बरात रही। दूसरे दिन मुंशी ने सब रईसों को भोज दिया और बरात विदा की।

यह सब कुछ हुआ पर मुंशी झिनकूलाल न देख पड़े न देख पड़े। मुंशी ने दो तीन बार आदमी बुलाने के लिए भेजा पर घर में से यही आवाज आई कि भीतर नहीं हैं। आदमी यह कह कर चला आया कि मुंशी दुर्गाप्रसाद ने बुलाया है, आवें तो तुरत भेज देना। पर मुंशी झिनकूलाल न गये न गये।

गरीबदास और कमला देवा ने जो देश सेवा अपने ऊपर ली थी उसको तन-मन-धन से निवाहते रहे। गरीबदास अपना आधा बेतन अछूतों की पाठशाला में दे देता था। इस सहायता से वह पाठशाला दिनो दिन उन्नति करने लगे और दो ही वर्ष के भीतर वह हाईस्कूल हो गया। इसी अवसर में रायसाहब का इलाका भी कर्ज अदा हो जाने के कारण कोर्ट आफ वार्ड्स से छूट गया। अब रायसाहब का व्यय भी नियमित हो गया। आप यदि कहीं उदारता दिखाते थे तो देश-हित के कामों में। राजनैतिक कामों में वह सम्मिलित होते थे और इसकी कभी पगवा तक न करते थे कि हुक्काम नाराज होकर और नहीं तो रायबहादुरी को ही छीनने के लिए प्रयत्न करेंगे।

अट्टाईसवाँ परिच्छेद



लकता का विशेष कांग्रेस हुआ। महात्मा गांधी ने अपना असहयोग का शंख फूँका। उसका सिंहनाद सारे भारतवर्ष क्या भूमंडल में छा गया। चारों ओर राजा प्रजा में खलबली मच गई। सहस्रों विद्यार्थियों ने स्कूल कालिजों को तिलांजली दी, सैकड़ों वकीलों मुखतारों ने अपने व्यवसाय का परित्याग किया, पचासों सरकारी कर्मचारियों ने अपने पद से इस्तीफा दिया—जिधर गांधी जी

जाते थे उधर स्कूल और कालिज विद्यार्थियों से अधिक नहीं तो महीनों के लिए खाली हो जाते थे। यूनिवर्सिटियाँ दहल गई थी, मालवीय जी भय के मारे अपने नवारोपित हिन्दु विश्वविद्यालय को दोनों हाथों से छापे बैठे रहते थे कि कहीं असहयोग की लू उनके नये पौधे को न लग जावे। वायसराय तक के पेट में पानी नहीं पचता था। इस असहयोग के प्रवाह ने सहस्रों कोमल हृदय, संस्कार संपन्न वालकों को शिक्षा श्रोत से खींचकर तृण की भाँति किनारे कर दिया। इसी असहयोग के प्रवाह में पड़ मुंशी दुर्गाप्रसाद के दोनों लड़कों ने कालिज का परित्याग किया और छोटा लड़का यमुनाप्रसाद प्रयाग के गांधी आश्रम में रहकर देश सेवा करने लगा। बड़ा लड़का गंगाप्रसाद जिसका विवाह हो गया था गोरखपुर चला आया और असहयोग की धूम मचा दी। इसका प्रभाव यहाँ की जनता पर ऐसा पड़ा कि बड़े-बड़े लोगों के आसन हिल गये। स्वयं मुंशी दुर्गाप्रसाद यद्यपि असहयोग न कर सके फिर भी पेंशन की दरखास्त की। यद्यपि जजसाहब ने बहुत समझाया कि अभी आप साठ वर्ष के नहीं हुए, जिस प्रकार कई साल से आपके लिए यह रिपोर्ट कर दी जाती है कि अभी काम करने लायक है, पेंशन मुलतवी कीजाय, आप दरखास्त दीजिये, हम साल दो साल के लिए मुलतवी के लिए रिपोर्ट कर देंगे। पर मुंशीजी ने कहा राम राम करके तीस वर्ष मुलाज़िमत की और सब लोग प्रसन्न रहे। कभी किसी ने चाल-चलन पर एमाल नामा में कलम भी नहीं

चलाया, अब तक साफ़ रहा। अब मुझे मुलतबी के लिए रिपोर्ट की जरूरत नहीं और न मैं दरखास्त ही करूँगा। हुजूर अब मेरी पेंशन करदे, जमाना बदल गया है, नित्य पलटा खाता जाता है, न जाने क्या हो। नहीं माना और अन्त को पेंशन ले ही कर छोड़ा।

इसी बीच में महात्मागान्धी ने गोरखपुर में पदार्पण किया। सारा जिला उनके दर्शनों के लिए उमड़ पड़ा। बस्ती गोंडा तक के लोग उनके दर्शनों के लिए उठ धाये। बड़ी भीड़ थी। सारा नगर मनुष्यों के भार से गरु आ रहा था। स्टेशन से लेकर नगर तक सबेरे से ही दर्शकों के ठट्टे लगे थे। बाले के मैदान में महात्माजी का उपदेश सुनने के लिए लोग एकत्रित हुए। एक लाख से ऊपर मनुष्यों की भीड़ एकत्रित थी। चारों ओर सिर ही सिर देखाई पड़ते थे। कहीं तिल रखने की समाई न थी।

सायंकाल सूर्यास्त होने तक वहाँ श्रोताओं और दर्शकों की भीड़ लगी रही। गान्धीजी ने अपना व्याख्यान समाप्त कर वहाँ एक बड़े बङ्गले में गान्धी स्कूल स्थापित किया और रेल के स्टेशन पर पधारे। स्कूल के चलाने का भार लेने वालों में मुशी दुर्गाप्रसाद के चिरंजीव गंगाप्रसाद भी थे।

किंतु यह आवेश बहुत दिन न रहा। बड़ा लड़का तो समझाने से दूसरे साल फिर जाकर कालिज में दाखिल हुआ और उसी साल बी० ए० पास करके कालिज में एल० एल० बी० के लेक्चर सुनने लगा। सारी देश-हितैषिता भूल गई। पर

दूसरा लड़का आश्रम में दो वर्ष रह गया और वहाँ रहकर उसने आश्रम की ओर से खहर के प्रचार का काम उठाया और देहातों में मंडल स्थापित कर चरखे कातने और खहर बुनाने का काम आरम्भ कर दिया। थोड़े ही दिनों में इसका फल यह हुआ कि जिस जिले में प्रति वर्ष पचासों हजार के कपड़े विदेश से आकर खपते थे वह जिला अपने वदन को ढककर हजारों रुपये का कपड़ा काशी आदि में भेजने लगा। गँवारों में एक प्रकार की स्वावलम्बिता आगई और वे समझ गये कि अपने आलस्य ही के कारण देश की यह दशा हो रही है।

मुंशी दुर्गाप्रसाद ने पेनशन लेली पर वह ठाले बैठने वाले जीव न थे। उन्होंने रायसाहब अपने मित्र से परामर्श कर रामगढ़ के जङ्गल में एक हजार एकड़ भूमि लेकर वहाँ वानप्रस्थ-आश्रम बनाने का विचार किया और परिणत गङ्गाधर को भी बुला लिया। वहाँ एक अच्छे लम्बे चौड़े मैदान में गौशाला, कृषिशाला आदि के लिए मकान बनवाना आरम्भ किया। दूर दूर से अच्छे अच्छे सुस्वाद फलों के वृक्ष मङ्गवा कर लगवाये और उसे एक आदर्श ग्राम बनाने के उद्योग में लगे। थोड़े ही दिनों में जहाँ कभी जङ्गल था वहाँ अच्छा बाग, सरोवर, हरी-भरी खेताँ और स्थान स्थान पर पानी की नहरें देख पड़ने लगीं। यह स्थान बनाने का मुंशीजी ने विचार इस कारण किया कि उनका मन कई कारणों से उदासीन हो चला था। उन्होंने अपने मनमें ठान लिया था कि यदि घर की भंडाई इसी प्रकार बढ़ती गई तर

मैं एक न एक दिन अपनी जायदाद के लिए ट्रस्ट नियत कर, वानप्रस्थ ले, इसी आदर्श ग्राम में अपना जीवन व्यतीत करूँगा। इसी आशा से उन्होंने इस काम को अपने बड़े लड़के के विवाह हो जाने के दूसरे ही वर्ष से आरम्भ कर दिया।

मुंशी झिनकूलाल की विवाह हो जाने के बाद यह दशा हो गई कि भूलकर भी कभी मुंशी दुर्गाप्रसाद के घर के किनारे से न निकलते और दस दस बार आदमी भेजने पर कभी कोई बहाना, कभी कोई बहाना करके टाल देते। जान पड़ता था कि उनका वह सब आना जाना और गहरी बैठक सब बैठक-बाजी थी और केवल मुंशीजी को फाँसकर उनके लड़के के ब्याह करने के लिए था। कभी कभी वह अपने मित्रों की मंडली में बैठ कर अपने इस कृत्यपर बड़ी डींग मारा करते थे। एक बार आप को डिगूज्वर ने घेरा और बुरी गति कर दी। गंगाप्रसाद उन दिनों इलाहाबाद से दशहरे की छुट्टी में गोरखपुर आया था। कई बार उसे बुलाने के लिए अपनी महरी को भेजा। जब वह न आया तब मुंशीजी को लिखा कि मैं मर रहा हूँ, बड़ी कृपा होती यदि आप बाबू गंगाप्रसाद को देखने के लिए भेज देते, कौन जाने जिन्दगी रहे वा न रहे, एक बार देख तो लेता। मुंशीजी ने गंगाप्रसाद को बुलाकर कहा कि मुंशी झिनकूलाल को यह खत आया है। बेचारा बीमार है, जाकर देख तो आओ। मैं तो कहीं जाने से रहा, तुम्हीं देख आओ, रिश्तेदारी का मामला है, वैसे ही शिकायतें किया करते हैं, और भी शिका-

यत का मौका मिलेगा, अपनी ओर से मौका न देना चाहिए, वैसे कोई किसी के स्वभाव को थोड़ा ही बदल सकता है। अस्तु गंगाप्रसाद मुंशी झिनकूलाल के यहाँ गया। घर में पाँव रखना था कि शिकायतों की टोक़रियाँ पटकी जाने लगीं। ईश्वर ईश्वर करता वह मुंशी झिनकूलाल के पास पहुँचा। वह खाट पर पड़े थे। बीबी ने मुँह से लिहाफ़ हटाया और चिल्लाकर कहा—बच्चा आये हैं ?

झिनकू०—कहाँ? झूठ कहती है, वह मेरे यहाँ काहे को आयेंगे।

गंगाप्रसाद—आदाब अर्ज।

झिनकूलाल—खुश रहो, किधर भूल पड़े ?

गंगाप्रसाद—आप की बीमारी का हाल सुनकर वालिद ने भेजा है।

झिनकूलाल—शुक्र है। किसी तरह आये तो। (पास बैठाकर आँखों में आँसू भरे हुए) भैया अब तुम लड़के नहीं हो कि तुम्हें समझाने की जरूरत हो। मेरी हालत देखते ही हो (रोकर) मैं न बचूँगा। मैं अपनी जिन्दगी से नाउम्मेद हो गया हूँ। मैंने समझा था कि तुम्हारा दीदार नसीब न होगा। ईश्वर की दया कि मरते दम तुमको देख तो लिया। अब चाहे जान रहे वा जाये। लड़कों का ध्यान रखिएगा।

गंगाप्रसाद—आप घबरायें नहीं, अच्छे हों जायेंगे। इतना घबराना ठीक नहीं है। जब आप घबराते हैं तब तो औरतें ख्वाहमख्वाह घबरायेंगी।

झिनकूलाल—मैं घबराता नहीं सच कहता हूँ मेरी कोई उम्मीद नहीं है ।

गंगाप्रसाद—आप नाहक घबराते हैं । दस पाँच दिन हकीमजी की दवा कीजिए अच्छे हो जाइयगा ।

झिनकूलाल—दवा तो करता हूँ पर कुछ फायदा नहीं है ।

झिनकूलाल की स्त्री—बच्चा कोई दवा भी तो लानेवाला नहीं है ? महरी से बहुत मिन्नत करती हूँ तो निहोरा करके ला देती है ।

गंगाप्रसाद—नुसखा कहाँ है मुझे दे दोजिए मैं भेजवा दूँगा ।

झिनकूलाल की स्त्री—(नुसखादेकर) लो, पर जब याद रहे तब न । अब तो आप बहुत पढ़ चुके कुछ रोजी रोजगार की फिक्र करो । बाप माँ का कब तक मुँह ताकोगे ।

गंगाप्रसाद—(बात टालकर) अच्छा मैं जाता हूँ, दवा भेजवा दिया करूँगा ।

झिनकूलाल—हो सकें तो आप ही दहलते हुए लाकर देते जाइयेगा ।

गंगाप्रसाद—आपकी दवा पहुँच जायगी; खातिर जमा रखें ।

झिनकूलाल—और आप न आ सकेंगे ?

गंगाप्रसाद—मैं इसके लिए ठीक वादा नहीं कर सकता ।

सलाम

उन्तीसवाँ परिच्छेद


 वू अमानसिंह और गुमानसिंह को पाठक भूल न होंगे। पटवारी के उभाड़ने से उनके सब कृषक विरुद्ध हो गये थे और भांति भांति के उपद्रव करते थे। पर यह सब होने पर उन्होंने अपने कृषकों पर किसी प्रकार की कड़ाई न की। वह उनसे यही कहते रहे कि भाई हमें तुम्हारे खेत निकालने से कोई काम नहीं है, अपना लगान दिया करो और खुशी से अपने खेत को जोतो। कांग्रेस का काम आरंभ होते ही बाबू अमानसिंह और गुमानसिंह ने अपने जवार में कांग्रेस के सिद्धांत का प्रचार करना आरंभ किया, अपने यहाँ कारीगर नौकर रखकर चरखे तैयार कराके सैकड़ों चरखे अपने कृषकों तथा अन्य गाँव के कृषकों को बटवाये। अपने आसपास के गाँवों में घोषण करादी कि जिसको आवश्यकता हो वह हमारे यहाँ से चरखा मूल्य देकर ले जाय। जो मूल्य नहीं दे सकता यदि गाँव के दस विश्वास योग्य कृषक इस बात को स्वीकार कर लें कि वह दरिद्र है और पूरा दाम नहीं दे सकता तो उसे उनके कहने वा लिख देने के अनुसार आधे दाम पर वा बिना दाम के चरखा मिल सकता है। अपने किसानों के लिए रुई या कपास के अच्छे बीज मँगवाये और बिना दाम के हल पीछे आध आध सेर बीज बँटवाये और स्वयं अपनी सीर में कपास की खेती करा के सब लोगों को यह

बतलाया कि कपास की खेती कैसे होती है । आप लोगों ने अपने गाँव पर एक भंडार खोल रखा था जिसमें कातनेवाले अपने सूत लाकर बेच सकते थे वा उसे बदल कर रुई वा कपड़ा यथेच्छ ले सकते थे । जुलाहों और कोरियों और दूसरे लोगों के जो कपड़े बुनना चाहते थे, करघे, कङ्गी, बय, ढरकी आदि सामान जो वहाँ तैयार हो सकते थे तैयार कराना तथा जो बाहर मिलते थे उसे बाहर से मँगाना और उसे सस्ते दामों देना आरंभ किया और सूत का अच्छा भंडार खोल दिया । उसमें बुननेवालों को दाम देकर वा कपड़े के बदले में सूत मिलता था । आसपास के गाँवों के जुलाहे जिस समय चाहते अपने कपड़े को भंडार में देकर नक़द दाम वा सूत ले जाते थे । इस प्रकार दो ढाई हजार चरखे और तीन चार सौ करघे आसपास के गाँवों में आपके उद्योग से चलते थे । अब आपके जो कृषक विरुद्ध हो गये थे सब अनुकूल हो गये । जिनके ऊपर आपको नालिश करना पड़ता था वह स्वयं अपने विवाद के निर्णय के लिए आपसे प्रार्थना करने आते । और उन्हीं के कृषक क्या, आसपास के अन्य जमींदारों के कृषकों और प्रजा का विवाद उन्हीं के दरबार में चुकता था । इनके कारण पुलिस को प्रजा के कामों में हस्तक्षेप करने का मौका ही नहीं मिलता था । मारपीट, चोरी चाकरी कहीं न होती थी । पुलिस की आमदनी इतनी कम हो गई कि बेचारों को अपने चेतन से खाना पड़ता था । दो-चार बनिये सुनारों के अतिरिक्त

जिनके घर पुलिस की कृपा से चोरो का माल गलता था कोई भी उनका अशुभ-चिंतक न था ।

कांग्रेस का काम करने और अपने जवार का नया हाने के कारण जिले के मजिस्ट्रेट और सुपरिंटेंडेंट पुलिस की इन पर तीखी दृष्टि थी और वे इसी तारक में थे कि कोई मौका मिले तो दोनों भाइयों को पकड़ के जेल में ठूँस दिया जावे; पर मौका न मिला । जिस समय कांग्रेस की ओर से राष्ट्रीय स्वयंसेवक भरती करने की आज्ञा जारी हुई तो आप अपने तहसील के स्वयंसेवक दल के प्रधान नायक बने और दो-ढाई सौ स्वयंसेवकों का एक अच्छा दल बनाया । पर जिस समय और और स्थानों में स्वयंसेवक दल बाँधकर गाँधी जी की जय ! भारत माता की जय-घोषणा करते निकलते थे और पुलिस उनको जाल की चिड़ियों की भाँति पकड़ कर चलान कर देती थी और मजिस्ट्रेट उन्हें जेल में ठूँस देते थे, आपने कभी अपने दल के स्वयंसेवकों को जय-घोषणा करते हुए निकलने न दिया बल्कि उनकी आज्ञा थी—लोगों को समझाकर स्वदेशी कपड़ा पहनने और अपने घर चरखा कातने के लिए तैयार करो और प्रति दिन कमसे कम एक को तो कहीं स्वदेशी बना ही लो । इस तरह उन्होंने अपने को पुलिस के पंजे से बचाया । जिस समय जिले में चारों ओर स्वयंसेवकों का दल निकलना आरंभ हुआ तो जिले के नेताओं ने आपको लिखा कि क्या कारण है आप और आप का दल इस समय देश के काम से उदासीन है

आपने उस समय अपने छोटे भाई को जो सहायक नायक थे भेजकर यह कहला दिया कि हम व्यर्थ हुल्लड़ मचाना अपने सिद्धांत के विरुद्ध समझते हैं। देश के लिए हम और हमारे स्वयंसेवक प्राण तक परित्याग करने को तैयार हैं पर व्यर्थ को जलूस निकाल कर जेल में जाना हम उचित नहीं समझते।

इसी बीच में चौरीचौरा की दुर्घटना हुई। वहाँ की प्रजा पुलिस के अत्याचारों से ऊब गई थी। जब थानेदार ने वालंटियरों पर जिनका जलूस थाने के पास से होकर निकला बंदूक दागने की आज्ञा दी तो सहस्रों जन समुदाय जो जलूस के साथ दर्शक रूप से था उत्तेजित हो उठा और जो कुछ उस समय बना किया—थाने को फूँक दिया और एक भी पुलिस का आदमी बच न सका! इसका परिणाम यह हुआ कि महीनों तक चौरीचौरा क्या सारा गोरखपुर और बस्ती का खलीलाबाद पुलिस के अत्याचार के लिए लीलास्थल बना रहा। उस समय प्रजा पर जो अत्याचार हुआ उसको स्मरण कर अब तक रोमांच हो आता है। इसी बीच में महात्मा गांधी के चिरंजीव पुत्र देवदास गांधी वहाँ गये पर सरकारी कर्मचारियों ने उनको घटना स्थल पर जाने और वास्तविक बात क्या थी इसका तत्त्वानुसंधान करने न दिया। कांग्रेस दो एक बने हुए नेताओं ने उनको उलटे सीधे समझा दिया जिसका परिणाम यह हुआ कि देवदास गांधी ने महात्माजी को तार दे दिया और महात्मा

गांधी ने उसी पर बारदौली के सत्याग्रह को रोक दिया । इसका परिणाम असहयोग पर जो हुआ उसे असहयोगियों की आत्मा ही जानती होगी ।

चौरीचौरा और खलीलाबाद के उस अत्याचार के समय जो उस घटना के बाद सरकार की पुलिस द्वारा हुआ बाबू अमानसिंह और गुमानसिंह ने बड़ा काम किया । आप लोगों ने अपने दल के स्वयंसेवकों को गाँव गाँव वेष बदलकर लोगों को समझाने और उनकी उत्तेजना को रोकने के लिए भेजा और प्रजा उनके उपदेशों को मानकर चुपचाप सारे अत्याचारों को सहती रही । उन स्वयंसेवकों में कितने ही जनसाधारण के साथ जिनको पुलिस ने निरपराध फाँस चलान किया था पकड़े गये और हवालात में रहे पर अन्त को माननीय मालवीयजी के अनुग्रह से हाईकोर्ट से एक एक कर के छूट गये ।

सत्याग्रह का विचार तो चौरीचौरी की दुर्घटना के साथ उड़ गया । पर बाबू गुमानसिंह और अमानसिंह को बारदौली के सत्याग्रह को रोक देने से अत्यन्त दुख हुआ । आप लोगों ने देवदास गांधी से स्पष्ट शब्दों में कहा था कि भारतवर्ष छोटा सा देश नहीं है, इतने बड़े देश में जिसे भूखंड कह सकते हैं चौरीचौरा क्या है एक बिंदु के बराबर भी नहीं । यदि आप समस्त भारतवर्ष को मानव शरीर कल्पना करें तो चौरीचौरा एक रोम के बराबर भी न ठहरेगा । इतने बड़े जनपद में चौरीचौरा की घटना का होना

न होने के बराबर है। इस घटना के कारण वारदौली के सत्याग्रह का रोकना अच्छा नहीं हुआ। महात्माजी का यह आशा करना कि इतने बड़े देश में सब लोग अहिंसक, सदाचारी, सत्यधर्मपरायण हो जायँ केवल आकाश-कुसुम मात्र है। न भूतो न भविष्यति। अनादि काल से लोग अहिंसा की शिक्षा देते आते हैं, महात्मा गौतमबुद्ध आजन्म इसी की शिक्षा देते फिरे, महावीर स्वामी सारी आयु अहिंसा का ही उपदेश देते रहे, रामानुज, रामानंद, कबीर आदि महात्मा यही सिखाते गये पर क्या संसार से अधिक नहीं तो भारतवर्ष से हिंसा उठ गई? छल-छद्म दूर हो गये? फिर जब वे लोग इसे दूर करने में असमर्थ हुए तो अकेले महात्मा गाँधी और उनके दस-पाँच अनुयायी क्या इसे दूर कर सकेंगे? इसमें उन्हें भले विश्वास हो पर मुझे तो वह बात तीनों कालों में असंभव देख पड़ती है। संसार में भले बुरे, साधु असाधु, देव असुर, सच्चे झूठे सदा रहे हैं और रहेंगे। देवदास को भी उस समय अपनी भूल माननी पड़ी पर इससे होता क्या था, जो हाना था हो गया।

गुमानसिंह और अमानसिंह को अहिंसा के इस सिद्धांत से कि जब सारा भारतवर्ष अहिंसक हो जायगा तब अहिंसात्मक असहयोग आरंभ किया जायगा एक प्रकार से अश्रद्धा हो गई! आपको दृढ़ विश्वास हो गया कि देश के उद्धार के लिये न केवल हिन्दू मुसलमानों की एकता ही की आवश्यकता है बल्कि जमींदार काश्तकारों की एकता अन्ततः

आवश्यक है। बिना इसके शास्त्रधर्म की उन्नति और विकास नहीं हो सकती जिसकी आवश्यकता देश की रक्षा के लिए नितांत प्रयोजनीय है। जब तक देशवासियों में आत्मरक्षा की शक्ति उत्पन्न न हो तब तक इनको किसी न किसी की अधीनता में रहना ही पड़ेगा। इस प्रकार आपके विचार में परिवर्तन हो गया। चित्त तो पहले से ही उदासीन हो गया था दोनों भाइयों ने अपने पुत्रों के नाम जमींदारी पर चढ़वाकर अपने सारे कारोबार उन्हें समझा कर जमींदारी के काम छुट्टी ली और काशी जाकर वहाँ एक मकान मोल ले काशीवास करने लगे। केवल एक गाँव की सीर का प्रबंध अपने एक विश्वासपात्र नौकर पर छोड़ दिया था। वह वहाँ जो अन्न उत्पन्न होता था उसे समय समय पर काशीजी भेजा करता था। इसी से काशी का खर्च चलता था।

तीसवाँ परिच्छेद

 नकू लाल अच्छे हो गये। मुंशी दुर्गा प्रसाद के घर नई बधू आई। स्त्री-शिक्षा भी क्या ही अद्भुत वस्तु है, विशेष कर वर्तमान ढंग की जिसमें पाश्चात्य विष का सम्मिश्रण है।

यूरोप की स्त्रियों की भीतरी अवस्था का ज्ञान हमारे देशवासियों को नहीं है, नहीं तो वे इस प्रकार स्त्री-शिक्षा

की दुहाई न देते। जो कुछ उड़ता पड़ता समाचार हम तक पहुँच जाता है उसी से कुछ पता चलता है। विलायत में सफरे जस्ट स्त्रियों ने वहाँ के पुरुषों का कैसा नाक में दम कर रखा है। फ्रांस में स्त्रियों ने जो विवाह के विरुद्ध नाद उठाया था उसे कौन नहीं जानता। भारतवर्ष में तो यह प्राचीन काल से कहा-वत चली आती है कि स्त्रियाँ स्वतंत्र होने के योग्य नहीं। मनु भगवान् ने कहा है—

पिता रक्षति कौमारे भर्ता रक्षति यौवने ।

पुत्रश्चास्थविरे रक्षेत्र स्त्री स्यात् त्र्यमर्हति ॥

अर्थात् पिता कौमार अवस्था, पति यौवन अवस्था और पुत्र वृद्धावस्था में रक्षा करे। स्त्रियाँ कभी स्वतंत्रता के योग्य नहीं हैं। प्राचीन काल में लिखने-पढ़ने की शिक्षा चाहे बालक बालिकाओं को नहीं दी जाती रही, अथवा दी भी जाती थी तो अति-स्वल्प, पर उनके शिष्टाचार, सदाचार, शील, संतोष, सहिष्णुता धैर्य आदि सद्गुणों की शिक्षा देने में लोग कभी नहीं करते थे पर आजकल लोगों को अपने पेट के धंधे से अवकाश ही नहीं मिलता कि वे अपने बालकों और बालिकाओं को आचार आदि की शिक्षा दे सकें। दिनभर कचहरी में काम करने के कारण सायंकाल को जब वे लौटते हैं तो यों ही उनके मस्तिष्क ठिकाने नहीं रह जाते और सवेरे उठते फिर कचहरी का ध्यान वेधता है। यदि किसी ने बहुत किया तो अपने बच्चों को पाठशालों में भेज दिया। वहाँ क्या धरा है, पुस्तकें लेकर बिल्ली

कुत्तों की कहानियाँ पढ़ा करो, वा अवरंगजेव ने शाहजहाँ का कैसे पकड़ कर जेलखाने में रखा याद करो, पर इससे शील और सदाचार की क्या शिक्षा मिलती है। बालकों को फिर भी अवसर मिलता है कि अन्य पोथियों को पढ़कर अपने चरित्र को सुधारें पर कन्याओं का तो इस प्रकार की शिक्षा से जन्म नष्ट हो जाता है। वे धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का हो जाती हैं।

झिनकूलाल दिखावे के बड़े पक्षपाती थे। उन्होंने और चाहे कुछ न हो अपने लड़की के लिखने-पढ़ने के सब सामान दिये। एक सुन्दर बक्स में कलम-दवात कागज, दो चार गड्डी नोट-पेपर, दस बीस हिन्दी के उपन्यास साथ कर दिये। लड़की ससुराल में आई तो दिन रात बैठी उपन्यास का पाठ किया करती, मानों वह धर्म अर्थ काम मोक्षदायक कोई स्तोत्र थे। जब कोई किसी काम के लिये कहता तो कह देती मुझे अवकाश नहीं है। हिंदू घरों के सारे काम काज स्त्रियाँ ही करती हैं, मजदूरिन और नौकर यदि हुये भी तो उनसे केवल चौका पानी का काम लिया जाता अथवा घर आंगन में झाड़ू लगा देते हैं, शेष गृहकार्य स्त्रियाँ अपने हाथ करती है, चावल बीनना, दाल देखना, तरकारी काटना, भोजन बनाना, और अवकाश मिलने पर सीना पिरोना, आदि सभी काम ऐसे हैं जिनको स्त्रियाँ स्वयं अपने हाथों से करती हैं। पर नई वधू को इन सब कामों के करने से चिढ़ थी। कारण यह था कि न तो

उसके माना पिता ने उसे उनकी शिक्षा दी थी और न वह उन्हें करना ही जानती थी। वह अपनी अज्ञता को बातों से छिपाती थी। जब कोई किसी काम के लिये कहता तो वह यह कह प्रायः टाल दिया करता थी कि मैं काम में हूँ, मुझे अवकाश नहीं है।

एक दिन की बात है कि सास ने कहा—दुलहिन, थाली में चावल रखा है इसे विचार डालो। बधू ने कहा—अच्छा रख दीजिये, खाली हूँ तो देख दूँगी। वह उसके पास रख कर चली आई और लगे आर घर के काम करने। जब पकाने का समय आया तो नौकरानी बधू के पास चावल के लिये गई। बधू ने चावल को बिना तो था ही नहीं खाट पर बैठी उपन्यास पढ़ रही थी। नौकरानी के पूछने पर सिर हिला कर कह दिया कि हाँ चावल बिना हुआ है। वह लेकर चली आई और धोकर रसोइय में दे दिया। मुंशियाइन ने उसे बटलोई में छोड़ दिया। जब मुंशोजी खाने उठे तो भात में कीड़ा निकला, बिना खाये ही चौंके पर से उठ गये और औरसारा अन्न कुत्तों के आगे फेंका गया।

इस पर मुंशियाइन ने बधू से कहा कि कैसा चावल देखा था कि कीड़ा निकला, किसी ने नहीं खाया। बधू ने कड़ककर कहा—मुझसे जैसा बना देखा, मुझे वही काम अकेला थोड़ा ही है, नौकर रख लीजिये, यह सब नौकर के काम हैं मेरे थोड़े ही हैं। मुंशियाइन बेचारी चुप होकर चली आई।

इसी प्रकार जब उसे कोई गृहकार्य करने के लिये कहा

जाता तब टका सा जवाब दे देती । स्त्रियों का स्वभाव है जब दो चार बैठती हैं तब कुछ न कुछ गृह चर्चा किया करती हैं । एक बार मुंशी दुर्गा प्रसाद के घर दस पाँच रिश्ते की स्त्रियाँ आ गईं और सब मिल कर नई बहू को देखने गईं । उसके घर में आकर देखा तो वह खाट पर बैठी चन्द्रकांता हाथ में लिये पढ़ रही थी । उसको इस तरह बैठे देखकर सब स्त्रियाँ द्वार पर उसे सावधान करने के लिये ठिठक रहीं पर उसे क्या ! वह जैसी की तैसी बैठी रही । न उसने घूँघट किया न सिमट कर न उतर कर खाट से नीचे बैठी । स्त्रियों में सब प्रकार की छोटी बड़ी थीं । उन्होंने इसके इस प्रकार के चर्चाको व अपना अगमान समझा और दबे पांव लौट आईं । दो चार लड़कियों ने नहीं माना वे बहू के पास चली ही गईं और जाकर उससे छेड़ छाड़ करना आरंभ किया ।

एक ने पूछा—बहू जी ! यह कौन पोथी है ?

बहू—लो देखो कौन सी है ?

लड़की—मैं तो पढ़ना नहीं जानती आप ही बताइये ।

बहू—जब पढ़ना नहीं जानती तो पूछ कर क्या करोगी ।

दूसरी लड़की—बहू जी यह तो बताओ कि तुम यहाँ ससुराल में हो वा मैके में ?

बहू—इससे क्या मैं कहीं हूँ ।

दूसरी लड़की—नहीं मैं बात पूछती हूँ कि यह तुम्हारा ससुराल है या मैका ?

बहू—ससुराल ।

लड़की—ता किर यहाँ तुम्हें ससुराल की तरह रहना चाहिये ।

बहू—तुम्हारा इसमें क्या लगता है, मैं जैसे चाहूँगी रहूँगी मेरा घर है ।

लड़की—नहीं बहूजी ससुराल में बहू को बड़ी लज्जा से रहना चाहिये । तुम इस तरह मुँह खोलकर बैठी हो, यह ठीक नहीं । बहू जब ससुराल में जाती है तब घरों की कोई उसकी बोल नहीं सुन पाता । त्रियाँ उसके मुँह देखने को तरसती हैं ।

बहू—यह सूखों की बात है । पढ़ी लिखी ऐसी नहीं कर सकती । कम से कम मुझसे तो धोमे नहीं बोला जायगा और न घूँघट कलूँगी चाहे कोई भला माने वा बुरा ।

उसमें एक लड़की पढ़ी लिखी थी उसने कहा आप के पास रामायण हो तो जरा मुझे देना मैं एक जगह आप से अर्थ पूछूँगी । घर पर पढ़ रही थी समझ में नहीं आया । आप से बढ़ कर कौन मिलेगा । भगवान की कृपा से भेंट हाँ गई तो कृपा कर बतला तो दीजिये । अब तो बहू बड़ी सकपकाई, क्यों कि आज तक उसने रामायण का दशन भी न किये थे अर्थ की बात तो दूर रही । फिनकू लाल उपन्यास पढ़ने के बड़े शौकान थे । वे हर महीने दो चार उपन्यास ही खरीद कर लाते थे । यही सब उसने पढ़ा था और उन्हीं को बरस में भर कर लाई थी । उसने कहा कि रामायण तो नहीं है पर आप को याद हो त

पूछिये आवेगी तो बताऊँगी। बहू ने समझा था कि रामायण कोई उपन्यास होगा जिसमें रामलीला में जो बातें होती हैं वह होंगी। यह नहीं समझा था कि रामायण धर्मनीति की पिटार है। लड़की ने कहा अच्छा रामायण नहीं है तो एक गीत का तो अर्थ कहिये। यह कह कर वह तुलसीदास के इस पद को गाने लगी—

माई ! मन के मोहन जोहन जोग जाही ।

पद की कौन कहे देख सुनते ही वह चकरा उठी। अब वह अपनी अज्ञानता को छिपाने लगी। बोली—यह तो पंडितों का काम है। तुलसीदास की रामायण का अर्थ बड़े बड़े पंडित लोग नहीं कह सकते भला मैं क्या करूँगी। वहन हमें पंडित थोड़ा हँ बनना है। इसे हम समझ कर क्या करेंगी।

लड़की ने कहा तो फिर इसी पर दिन रात पोथी हाथ से नहीं धरतो, सारे महल्ले में लोग यह कहते हैं कि बहू बड़ा पढ़ लिखी है दिन रात पढ़ने लिखने में लगी रहती है और आप से एक तनिक से पद का अर्थ नहीं आता। बस हो गया ?

इसा बीच में एक और लड़की बोल उठी—अच्छा बहू जी मैं अपने कसंदे की गठरी लाऊँगी आप मुझे चिकन बनाना बता दीजियेगा। सादा चिकन तो मैं बना लेती हूँ पर रीं मुका काम मुझे नहीं बनाना आता। आप तो लखनऊ की हैं, लखनऊ में सुनता हूँ कि मजदूरिनें चिकन बनाती हैं फिर भले आदमियों की तो पूछना ही क्या ? उसकी बात सुनकर बेचारी और

घबराई। आज तरु सूई को हाथ से लुआ न था। माँ जब सीने पिरने को कहती तो लड खड़ी होती थी, वहाँ तो चल गया पर अब काठ की हंडी कै दिन चले, बात काट कर बोली अच्छा मैं तुम्हें एक किताब दूँगी उसे देख कर मुरी का काम बना लेना, कठिन क्या है जग ध्यान से पढ़ जाओ। लड़की ने हँसकर कहा कि बहूजी यह रियाज का काम है पोथियों से काम नहीं चल सकता इन्हे तो हाथ पकड़कर बताना होगा। मेरी माँ ने बीसों बार मुझे हाथ से सूई पकड़ कर बताया तब कहीं मुझे थोड़ा घना आया है आप कहती है कि किताब में सब कुछ है।

इसके बाद बहू ने पान का डब्बा खोल कर पान लगाये और सब लड़कियों को पान देकर बिदा किया। लड़कियाँ अपने मन में हँसती और आपस में यह कहती हुई कि 'वतिया है करतूतिया नाही' चली गईं।

जब वे स्त्रियों में पहुँची तो सबों ने पूछना आरंभ किया कि क्या गलचौर मचा रही थी। एक ने कहा कि था क्या, मैंने कहा मुझे मुरी का काम सिखा देना, इसपर बहू ने कहा अच्छा मैं तुम्हें एक किताब दूँगी उसमें सब लिखा है देखकर बना लेना—यह सुन सब स्त्रियाँ हँस पड़ीं। एक ने कहा फिर तो खाना बनाने के लिये किताब देखने की आवश्यकता पड़ेगी। फिर एक और लड़की बोल उठी। एढ़ाई लिखाई की भाँ कलई खुल गई। बहन ने भी गीतावली के एक पद का अर्थ पूछा, ट बोल गई कुछ न आया। चन्द्रकांता की पढ़नेवाली हैं भला उन्हें

अर्थ से क्या काम, उन्हें तो पेशाब के उपन्यास चाहिये । इस पर खूब हँसी हुई । बेचारी बहू घर में बैठा बैठी कुढ़ती थी ! वश चलता तो एक एक के सिर तोड़ देती ।

इकतीसवाँ परिच्छेद



ज मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ बड़ी तैयारी हो रहा है । जान पड़ता है कि कोई उत्सव है और इष्ट मित्रों के भोज का प्रबन्ध है । सब न कर चाकर अपने अपने काम में लगे हैं । कोई आटा गूँध रही है, कोई धोई पोसर ही है, कोई चूल्हा जला रही है, सब काम में फँसी हैं ! घर में अने स्त्रियाँ रिश्तेदारी की आई हैं वह भी कुछ न कुछ काम में लगी हैं । रसोई का सामान हो रहा है । अलग अलग कच्ची पकौ का प्रबंध है । हलवाई बाहर मिठाइयाँ बना रहा है । जब कच्ची रसोई का सामान ठीक हो गया तो नौकरानी ने बहू के घर में जाकर कहा—दुलहिन उठिये रसोई घर चलिये सब आपको बैठी अगोर रही हैं ।

बहू उस समय खाट पर बैठी उपन्यास पढ़ रही थी, बिगड़कर बोली—रसोई में मेरा क्या काम है ? क्या और कोई नहीं है ।

नौकरानी—बहूजी आज आपके पकाने की मुहूरत है । सब वहाँ बैठी आपको बुला रही हैं ।

बहू—अच्छा चलो आता हूँ ।

यह कहकर बहू ने कपड़ा बदला और रसोई घर में पहुँची । वहाँ देखा तो चूल्हे पर बड़े बड़े हंडे चढ़े हैं और परातों में चावल धाये हुए रखे हैं । बहू के तो देखते ही हवास जाते रहे । उसने कभी इतने बड़े बर्तनों में इतना खाना पकते न देखा था । बिगड़कर कहा कि मुझसे तो इतने बड़े बर्तनों में बनाया न जायगा । भला इतना चावल कोई कैसे उठाकर डालेगा । बहू की यह बात सुनकर सब स्त्रियाँ हँसने लगीं । एक स्त्री ने बहू के पास आकर कहा कि परात उठाने का कोई काम नहीं कटोरे में चावल भर भर के हंडों में डाल दो । बहू ने उसके कहने पर दस पाँच कटोरे चावल उस हंडे में डाले फिर शेष उस स्त्री ने हण्डों में छोड़ दिये । फिर वहाँ स बड़ को लेकर स्त्रियाँ दूसरे घर में गईं जहाँ तरकारी आदि के पकाने का प्रबंध था । वहाँ बहू ने देखा कि कड़ाह में तेल उबल रहा है और सामने पीठी पोसी रखी है । बहू बेचारी घबड़ा गई उसने अपने मन में कहा कि अब यहाँ कौन सा विपत्ति का सामना करना पड़ेगा । इतना बड़ा कौन पकायेगा । बेचारी ने कभी बड़े बनाये नहीं थे । वहाँ तो कुल तीन साढ़े तीन आदमियों का खाना पकता था । उसे भी पकाने में घण्टों माँ से लड़ता और सदा अपनी जान छिपाती फिती थी । बड़ी-बड़े की तो बात ही क्या, सीधे दाल चावल न पकाती । यहाँ जो उसने देखा कि बीस सेर पीठी पकाने को धरी है तो क्रोध के मारे लाल हो गई,

पर मारे संकोच के बोली नहीं, आकर कड़ाह के पास बैठ गई। स्त्रियों ने पीठी को उसके आगे कर दिया और कहने लगीं कि अच्छा वह अपने हाथ से पाँच बड़े बनाकर कड़ाह में छोड़ दो। उसने आज तक बड़े बनाये न थे। पीठी को हाथ में लेकर टिकिया बनाना चाहा पर पीठी ढीली थी वह भी न बना सकी। स्त्रियाँ यह देख मुर्हाँमुर्हाँ करने लगीं कि किस घर की लड़की है जहाँ बड़ा भी बनाना नहीं सिखलाया गया। इसमें कौनसा गुण है। फिर यह देख कि वह बड़े बनाना नहीं जानती एक स्त्री ने अपने हाथ से बड़े बनाकर वह के हाथ में देकर कहा इसे कड़ाह में डाल दीजिये। वह ने बड़े को कड़ाह में डाल दिया पर डालने में कुछ ऐसी असावधानी की कि तेल के छींटे इधर-उधर पड़े। पाँच बड़े डालते डालते कई जगह हाथों पर छींटे पड़े। वह चीखकर वहाँ से भागी और अलग खड़ी हुई। स्त्रियों ने उससे कहा कि कोई तरकारी जो आप बनाना जानती हों बनाइये उसके लिए सामग्री मँगा दी जाये। आज आपको अपने हाथों से कोई नई चीज़ बनानी चाहिये। पर वह ने एक न मानी और यह कहकर चलती बनी कि यह काम रसुइयों का है मुझसे न बनेगा। दो एक के लिए होता तो मैं कुछ बना भी देती। इतने लोगों के लिए कौन बनायेगा। मैं जब अपने पिता के यहाँ थी तो गिता के बहुत अनुरोध करने पर उनके लिए चावल-दाल पका देती थी। तरकारी अम्माँ पका लेती थीं। पिता के खाने पर मैं उनकी थाली में खाकर पाठशाला चली जाती

थी। अगमाँ फिर अपने लिये और नन्हे के लिए पकाती थी। गों तो मैं यहाँ बैठती भी पर हाथ पर तेल के छींट पड़ने से फफोले निकल आये हैं, अब मैं बैठ नहीं सकती। यह कह कर वह वहाँ से उठी और अपने घर में आकर खाट पर पड़ी।

थोड़ी देर में गंगासहाय घर में आये। वह ने उनके पैर की आहट पाते ही कराहना आरंभ किया। गंगासहाय ने खाट के पास जाकर पूछा क्या बात है? कहाँ ज्वर तो नहीं आ गया और लगे नाड़ी देखने।

वह—बलो बहुत हँसी अच्छी नहीं लगती, हाथ झटककर) तुम भी सबकी तरह कुढ़ाने लगे। आखिर हो तो उन्हीं के वंश के! क्यों न हो, जान बूझकर आये हैं घाव पर नमक छिड़ाने।

गंगासहाय—नहीं सच बतलाओ आखिर बात क्या है जो इतनी कराह रही हो?

वह—खाना पकाने की दक्षिणा मिली है। सबों ने मुझ ले जाकर कड़ाह के पास बैठा दिया और चाकी से बड़े तेल भरे कड़ाह में डालने को दे दिया। मैंने उन्हें उसमें डाला तो तेल उछलकर हाथों पर पड़ गया। यह देखो फफोले पड़ गये।

गंगासहाय—जान पड़ता है कि तुमने डालने में असावधानी की। नहीं तो काम काज में स्त्रियाँ बनाती ही हैं किसी के हाथ तो नहीं जलते।

वह—(नाक चढ़ाकर) महाराजिनों के हाथ न जलते होंगे। भला बनाओ तो जाकर, देखूँ कैसे हाथ नहीं जलते।

पहले तो तुमसे बनाते ही न बनेगा और बना भी तो कड़ाह में डालने पर तेल उछलेहीगा।

गंगासहाय—जान पड़ता है कि तुम्हारे घर कभी लोगों का भोज नहीं होता, होता तो जानतीं कि कैसे बनाया जाता है।

बहू भिगड़कर बोली—चला मैं तो कुली के घर की हूँ आप के यहाँ क्या आई स्वर्ग में पहुँच गई। भला कहीं कच्चा भोज भी होता है। यह तो मैंने यहीं आकर देखी कि चावल, दाल, कढ़ी बड़ी, भोज में खिन्गये जाते हैं। हमारे यहाँ पक्का भोज होता है। हलवाई आता है, पूरी कचौरी मिठाइयाँ पकवान सब बनाता है। घर को स्त्रियाँ चूल्हे के पास नहीं आती। यह तो आपही के यहाँ की रीति है कि स्त्रियों से कुली का काम लिया जाता है और जो काम चार रुपये का मजदूर कर सके वह उनसे लिया जाता है। सच्चा बात तो यह है कि आपके यहाँ की स्त्रियों में आत्मगौरव और आत्मसम्मान का भाव नहीं है, नहीं तो दिखला देता कि हम भी तुम्हारे समान मनुष्य हैं। कुछ श्री होने में पशु नहीं हो गई कि हम से घृणिन काम कराएँ।

गंगासहाय—लो तुम जीती हम हारे, तुम्हीं कुलीन सही। अच्छा बतलाओ अब किया क्या जाय ?

बहू ने बिलख कर कहा—मैं क्या बताऊँ, मेरा यहाँ कौन बैठा है अपना बाप-माँ थोड़ा ही है जो मेरी पीड़ा को समझेगा। अपने घर होती तो बाबूजी डाक्टर हकीम का घर एक कर देने और अब तक पचासों दवाइयाँ लाकर रखते-देखते।

घण्टों हाथ जले हो गया, पड़ी तड़प रही हूँ कोई पूछनेवाला तक नहीं है—तुम भी किसी काम से भूल कर आये नहीं तो भला कब झाँकनेवाले थे। मेरे भाग्य का दाव है। अब तो तुम्हारे वश मैं हूँ जो चाहो करो।

गंगासहाय ने उसके आँसू पोंछकर कहा—कोई चिन्ता की बात नहीं। दो-तीन छोटे-छोटे फफोले आये हैं, मैं अभी जाता हूँ और बाजार से दवा लाये देता हूँ, दो-एक दिन में चंगी हो जाओगी। यह कह वह घर से बाहर आये, अपनी बैठक में आकर साइकिल उठाई और बाजार गये। घोष की दूकान पर पहुँच सारा समाचार कह नुसखा लिखा कम्पाउण्डर के हवाले किया और कहा कि इसे चट-पट तैयार कर दो। कम्पाउण्डर ने एक मलहम कागज की एक डिब्बी में बन्दकर बिल के साथ लाकर गंगासहाय को दिया। गंगासहाय ने बिल देखकर जेब से दाम निकाल कर उसके हवाले किया और बाइसकिल पर सवार होकर घर आया। साइकिल कोठरी के द्वार पर रख घर में गया और बहू के हाथ में मलहम लगाने को दिया। फफोले थे छोटे-छोटे सो भी फूटे न थे दवा थी फूटे फफोलों की अस्तु ऊपर से फुरहरी बना कर लगा दिया। जब बधू ने देखा कि मेरा जादू चल गया लगे जोर-जोर से कराहने। बेचारा गंगाप्रसाद था सोधा-सादा लड़का, वह धबराया और चिन्ताग्रस्त हो सिरहाने बैठ गया।

लगभग षबजे रात को चौका तैयार हुआ निमन्त्रित सज्जन आने

लगे । मुंशीजी ने कहा—भाई सबको खिलाना है, एक साथ सबके उठने में जगह की कमा पड़ेगी । अच्छा होता यदि पहले कच्ची खानेवाले विरादरी के लोग उठा दिये जाते । फिर वाद को पढ़ने खानेवालों को पंडित गंगाधरजी खिलाते रहते । मुंशीजी की वान सबका पसन्द आई और दो-चार नौकर उन महाशयों को जिन्के नाम कच्ची की फिहरिस्त में थे बुलाने के लिए भेजे गये । ९ बजते-बजते सब लोग आ गये । इसी बीच में तार का डाकिया आया और मुंशीजी को तार का एक बन्द लिफाफा देकर रसीद का कागज और पिन्सल सामने रख दिया । तार का लिफाफा देख सब चकित हो गये । मुंशीजी ने रसीद पर हस्ताक्षर करके डाकिये के हवाले किया और लिफाफा खोलकर देखने लगे । तार पढ़ कर देखा तो वह इलाहाबाद के एक मित्र का था उन्होंने मुंशीजी को उनके कनिष्ठपुत्र यमुना-प्रसाद के एल० एल० बी० पास होने पर मुबारकबादी दी थी एल० एल० बी० का नतीजा अभी गजट में छपा नहीं था अपितु उसी दिन यूनिवर्सिटी में घोषित कर लटकाया गया था जिसको मुंशीजी के मित्र सूचना पा कर देखने गये थे और यमुनाप्रसाद का नाम देखकर मुंशीजी को तार दे दिया था । मुंशीजी ने यमुनाप्रसाद को बुलवाया, तार उसके हाथ में दे दिया और कहा—ठाकुर जी को जाकर माथ नवाओ । जमुनाप्रसाद मारे हर्ष के दौड़ता हुआ ठाकुरजी के मन्दिर में गया । मुंशीजी ने सब लोगों से कहा कि लीजिये एक चिन्ता तो मिटी । यमुना

एल० एल० बी० पास हो गया। गंगा की चिन्ता रह गई है। उसने असहयोग करके कई वर्ष का समय नष्ट किया। इस वर्ष बड़े कहने-सुनने पर गोरखपुर कालिज में नाम लिखवाया है। पर-मात्मा उसे भी बी० ए० पास कर देता तो मेरी चिन्ता जाती - असहयोग का भूत उसपर न चढ़ा होता तो अब तक न जाने कब का वह एल० एल० बी० हो गया होता।

यह बात हो हो रही थी कि यमुना ठाकुरद्वारे से लौटकर आया और पिता के चरणों पर पहले सिर झुकाया फिर पं० गंगाधर आदि वयोवृद्धों को प्रणाम किया और सब की आसीस ले अपने बड़े भाई गङ्गाप्रसाद को प्रणाम करने उनको बैठक में गया। वहाँ देखा तो दरवाजा खुला था पर गङ्गाप्रसाद न था। वहाँ से वह घर में गया और माता को जो रसोई में थी जाकर यह आनन्द-समाचार सुनाया। सब स्त्रियाँ आशीर्वाद देने लगीं और मुंशियाइन मारे खुशी के फूँछीं नहीं समाती थीं। बोलों—बेटा जाकर अपनी भावज को तो सलाम कर आओ, नहीं तो वह कहेगी घमण्ड हो गया है। यमुनाप्रसाद ने कहा कि क्या भावज साहेब यहाँ नहीं है?

मुंशियाइन हँसकर कहने लगी आई थी। पाँच कटोरा चावल हण्डे में छोड़ कर गई बड़े की कड़ाह पर। वहाँ दूसरी ने बड़े बना दिये उसे छोड़ने लगी—बड़े-छोड़े जाते हैं पाससे दूरसे फकने लगी—तेल के कहीं एकआध छींटे हाथ पर पड़ गये। फिर क्या था भाम कर चली गई। अपने घर में होगी।

यमुना—आज तो उन्हें यहीं रहना चाहिये था ।

मु०—था तो सब कुछ, पर क्या कोई बाँकधर रख सकता है ? (हँसकर) अच्छा जाओ वहाँ सलाम कर आओ ।

यमुनाप्रसाद अच्छा कह कर चला ही था कि इसी बीच में सुंशियाइन ने पुकारकर कहा—बेटा यमुना, बहू से कह देना कि परसना है आज। यमुना अच्छा कह कर रसोई घर के सामने से निकला और आँगन से हाता हुआ उस कोठरी के द्वार पर पहुँचा जिसमें उसकी भाग्य रहती था । कोठरी का द्वार आधा खुला था । भीतर एक दीपक धीमा लवे से जल रहा था । यमुना दरवाजा खोल कर भीतर गया तो वहाँ का दृश्य देखकर चक-पका गया । देखा तो बहूजी खाट पर पड़ी कराह रही है और गंगाप्रसाद न जाने किस ध्यान में मग्न सिरहाने मौन बैठा है—ऐसा निस्तब्ध कि उसे यमुना के भीतर आने तक की सुधि नहीं । यमुनाप्रसाद ने जाकर पहले गंगाप्रसाद के चरण को छूकर प्रणाम किया फिर कहा—भैया अभी इलाहाबाद से तार आया है कि मैं एल० एल० वी० में पास हो गया । अब जाकर गंगाप्रसाद की समाधि छूँगे । चौंकर पूछा—यमुना कितनी रात गई ? कितने बजे होंगे ? यमुना ने कहा—भैया चेत करो ९ बज गये सब लाग बाहर बैठे हैं निमंत्रित सज्जन भोजनार्थ आ गये हैं । फिर उसने बहू को सलाम कर उन्हें समाचार सुनाया । बहू ने कराहते शब्द में दबी जीभ से आसोस दो । यमुना ने कहा कि रसोई घर में सबने आपका बुलाया है और कहा है कि भोजन परसते समय

आपका रहना बहुत ज़रूरी है। बहू ने कराहते शब्द में उत्तर दिया कि मैं तो नहीं जा सकती। आप कहते जाइयेगा।

गंगा भी उठे और दोनों भाई साथ-साथ द्वार से निकले। गंगा तो बाहर बैठक की ओर गये और यमुना रसोई घर में यह कहना हुआ कि जान पड़ता है वह अधिक जल गई है, वह न आयेगी। पड़ी स्टाप कर रही है बाहर बैठक में पहुँचा। गंगाप्रसाद को देखते ही मुंशा दुर्गाप्रसाद ने कहा—बेटा गंगा ! यमुना तो एल० एल० बी० हो गया। जरा परिश्रम करो तुम भी बी० ए० हो जाते तो मेरी बिन्ता मिट जाती। भला सोचो तो सही असहयोग न किया होता तो अब तक कभी न तुम एल० एल० बी० हो गये होते। जब तुम फोर्थ इयर में थे तब यमुना सिकण्ड इयर में था।

इसी बीच में नौकरों ने आकर कहा—सरकार विजय है। सब कच्ची खानेवाले बिगदरी के लोग उठे और हाथ-पैर धोकर चौंके पर जीमने गये। उधर पण्डित गंगाधरजी ने पक्की खाने वालों को जिमाने के लिए सब प्रबन्ध ठीक कराया। चौंके में खानेवालों के लिए चौका और फर्श पर खानेवालों के लिए फर्श बिछवा कर सब ठीक किया। आधी रात तक सब लोग खाते पीते रहे। जीमकर उठनेवालों का पान-इलायची बाँटने के लिए चार-चार मनुष्य नियत थे और हाथ धोते ही लोगों के सामने पान इलायची आदि से भरा थाल कर देते थे। सब लोग आनन्द में मग्न थे। उत्सव में उत्सव था पर वेवांग गंगाप्रसाद शोकसागर में पड़ा डूब रहा था।

बत्तीस गँ परिच्छेद



मुनाप्रसाद को एल० एल० बी० की सर्टिफिकेट मिल गई। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने ५००) हाईकोर्ट में भेजकर उसके लिए वकालत का सनद मँगवा दी और वह गोरखपुर की जजी में वकालत

करने लगा। दो हा तीन महीने में यमुनाप्रसाद की वकालत ऐसी चली कि उनकी आमदनी ५००) माहवार की हो गई। दिन-रात मक्किलों की भीड़ लगी रहने लगी। गंगासहाय ने बी० ए० की परीक्षा तो दी पर वह पास न हुआ। दिन-रात स्त्री की शूद्रूषा के कारण उसे पढ़ने का अवकाश ही नहीं मिलता था। कभी उसकी ओर से मा से लड़ता, कभी उसकी फर्मायशों के लिए वाइसकिल लिये उर्दू बाज़ार की ओर दौड़ता-फिरता, कभी घोष की दूकान पर वा किसी लंडी डाक्टर के यहाँ हाजिरी देता-फिरता था। उसी बहू का यह हाल था कि बात-बात में सास से उलझना, खड़ा जवाब देना, दिन-रात साँपों की भाँति कान खोले यह सुनते रहना कि कोई क्या कह रहा है, बात का बतंगड़ करना, एक वा सौ करके गंगासहाय से लगाना और दिन-रात उसे नौकरी करने के लिए अनुरोध करना। मुंशियाइन का चित्त तो बहू से इतना फट गया था कि वह उसको देखना नहीं चाहती थीं। गंगाप्रसाद भी जिसे वह प्राण से अधिक चाहती थी उनके मन से उतर गया था। और ऊपरी मुँह उससे बोलती थी।

एक दिन सायंकाल के समय मुंशी दुर्गा प्रसाद संध्या पूजा कर ठाकुरद्वारा से आनी बैठक में आये तो देखा कि मुंशी किनकूलाल पहले ही से विराजमान हैं। मुंशीजी के बैठक में पैर धोते ही झिनकूलाल उठ खड़े हुए और फर्शों सलाम करके मुंशी जी का स्वागत किया। मुंशी जी बैठ गये और किनकूलाल से हंस कर बोले—कहिये बहुत दिनों पर आज आपने कैसे दर्शन देने का कष्ट उठाया ?

झिनकू० महीनों से जी आपके दर्शनों के लिये चाहता था। बागहा आने का इरादा किया पर घर की झंझड़ों से फुर्सत न मिल सकी। आज मैंने कहा कुछ भी हो पर आपके दर्शन अवश्य ही करूंगा, इसी लिये दफ्तर से उठने ही आपके दरे दौलत पर हाजिर हुआ।

मुंशी दुर्गाप्रसाद तो देखते ही ताड़ गये थे कि यह काइयां किसी मतलब पर आज देख पड़ा है, नहीं तो जब से विवाह हुआ कभी बुलाने पर भी मुंह नहीं देखाया पर अब इसका जादू चलने का नहीं है। वह बोले—मेरा अभिप्राय यह है कि आप बिना प्रयोजन तो कहीं आते जाते नहीं, काम से आपको दम मारने की फुर्सत नहीं मिलती, फिर आज कैसे यहाँ तक दर्शन देने का कष्ट किया ?

झिनकू०—अर्ज करूंगा।

मुंशी०—फरमाइये।

झिनकू—मैं आपसे एक प्रार्थना करने आया हूँ पर यदि

आप यह वचन दें कि आप उसे स्वीकार करेंगे तो करूँ

मुंशी०—बिना सुने मैं यह कैसे कह सकता हूँ कि स्वीकार ही करूँगा। हाँ इतना अवश्य कह सकता हूँ कि यदि मेरी आत्मा के अनुकूल हुआ तो स्वीकार करूँगा अन्यथा नहीं।

झिनकू०—कहते हुये संकोच लगता है पर कहे बिना भं नहीं रहा जाता।

मुंशी०—फिर जब आपको स्वयं कहते संकोच लगता है तो अवश्य मेरे मानने योग्य बात न होगी। यह मुझे लक्षण से जान पड़ता है।

झिनकू०—नहीं ऐसी कोई बात नहीं है। कहिये छोटें बबुआ की चकालत कैसी है ?

मुंशी०—अभी उसे करते ही कै दिन हुये पर परमात्म के धन्यवाद है कि ५०० महीना तक की आमदनी हो जात है। पर मुझे खेद है गंगा न लिये कि वह इस वर्ष भी पास न हुआ। और यह आपके अनुग्रह का प्रसाद है।

झिनकू०—(भेषकर) भाग्य की बात ! शुद्धनी ! पर यह तें बतलाइये उसके लिये आपने सोच क्या रक्खा है ?

मुंशी०—मैं उसके विषय में कोई सम्मति नहीं दे सकता जब कोई अपने मन का हो तो उसे कोई सम्मति देना अपन हेठाई करनी है। इस नवयुग में नवयुवकों से वृद्धों को अपने नाम की आप रक्षा करनी चाहिये। वह समय गया जब लोग

बड़े के सामने आँख उठाकर सीधे देखने का साहस नहीं कर सकते थे । अतः उसकी तो बात ही आप न कीजिये ।

झिनकू०—मैंने उसे बारहा समझाया कि अपने मन का काम मत करो । माता पिता की आज्ञा मानो पर कुछ बोलता ही नहीं । मैं ने लड़की को भी बहुत डाटा । ईश्वर जानता है मेरा इसमें कोई दोष नहीं ।

मुंशी०—आप का दोष कौन देना है । मैं ने तो कभी किसी से जीभ तक न हिलाई होगी ।

झिनकू०—राम राम भला आपको मैं यह दोष लगाऊँ ! मैं तो आपको देवता समझता हूँ और सदा आपकी प्रशंसा करता रहता हूँ कि आप जैसा तपस्वी साधु संसार में मिलना कठिन है । होंगे कहीं तो हिमालय की गुफाओं में पर उनसे हम संसारी जनों को क्या लाभ ?

मुंशी०—अच्छा यह सब भाटों के गीत तो गाइये न, अपने मतलब की बात कहिये जिसके लिये आप आये हैं ।

झिनकू०—कहा तो कि कहते डरता हूँ कि कहीं आप इनकार न कर दें ।

मुंशी०—खैर कहिये तो सही ।

झिन०—आप जानते हैं कि मैं आज कल मुंशी कुँवर बहादुर साहिब डिप्टी कलेक्टर के इजलास में पेशकारी के ओहदे पर तैनात हूँ । आप को शायद यह मालूम नहीं । कि मुंशी कुँवर बहादुर साहिब हमारे ही शहर के रहने वाले हैं और मुझ पर बड़ी कृपा रखते हैं ।

मुंशी—मु० कुँवर बहादुर जा से एक बार मुझसे मुलाकात हुई थी। देखने में और बात चीत से बड़े ही सज्जन जान पड़ते हैं, नगर के लोग भी उनका बड़ी प्रंसा करते हैं।

झिन०—जी हाँ। उनके एक ही लड़की है, लड़की बड़ी पढ़ी लिखी सुशील है। मैं ने उसे कई बार अपनी आँखों देखा है। वह उसका विवाह करना चाहते हैं, एक दिन छोटे बबुआ की बात चली तो उन्होंने बहुत पसंद किया और मुझसे कुँडली के लिये कहा, पर मैं छुट्टी न मिलने के कारण आप तक न आ ही सका और न आप से प्रार्थना ही कर सका। आज फिर इजलास पर तकाजा किया और ताकीद की कि कल लेते ही आइयेगा। इसी लिये हाजिर हुआ हूँ। मुझे उम्मीद है कि आप मेरी बात जैसे आज तक रखते आये हैं खाली न करेंगे।

मुंशी०—मैं ने तो प्रतिज्ञा कर ली है कि अब शहर में विवाह न करूँगा। विशेष कर नौकरी पेशों के यहाँ। इसकी सीख मुझे आप ही से मिली है, आप ही मेरे उस्ताद हैं, आप लोगों की लड़कियाँ हम गृहस्थों के घर के योग्य नहीं हैं। हम लोगों की परिस्थिति भिन्न है, आप की भिन्न। आप लोगों की गृहचर्या पर पाश्चात्य सभ्यता का अधिक रंग चढ़ गया है हम लोग पुरानी परिपाटा को माननेवाले हैं। हमारा आप लोगों का मेल शोभा नहीं देता और परिणाम दुख होता है। अतएव आप मुझे इस अनुग्रह से क्षमा ही रखिये।

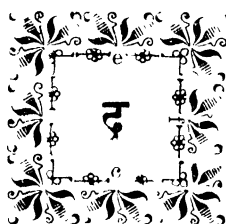
भिन०—आखिर शहर वाले भी तो अपनी बिरादरी ही के

हैं, उनसे खाना पीना हुका पानी है हो फिर उनके यहाँ संबंध करने में दोष हो क्या है जो आप इतने नाराज हैं कि उनके यहाँ संबंध न करने की प्रतिज्ञा कर ली है ?

मु०—भाई मैं तो शहरवालों के साथ क्या बारहों भाइयों के साथ खाने पीने का पक्षपाती हूँ और खाता ही पीता हूँ पर नगरवालों और विशेषतः नौकरी पेशों के यहाँ केवल संबंध करने का विरोधी हूँ। इसका कारण सिवा इसके और कुछ नहीं है कि हमारा उन ही सभ्यता और आचार में भेद है। हम लोगों में प्राचीन सम्मिलित परिवार की प्रथा है। उनमें वह प्रथा नष्ट हो गई है और वयसक परिवार की प्रथा परस्थित के अनुसार चल पड़ी है। अतः उनके साथ संबंध करने से हमारी सम्मिलित परिवार का प्रथा नष्ट हो जाने की संभावना है जिसकी रक्षा करना हमारा धर्म है। देखिये संसार में न जाने कितनी जातियाँ का उत्थान और पतन हुआ, इतिहास साक्षी है। रोम, यूनान, मिश्र कालदह आदि का नाम केवल इतिहासों के पन्नों में मिलते हैं। उनके वंशधर अब भी हैं, नष्ट नहीं हुए। पर सभ्यता को नष्ट कर देने से आज उनका पता नहीं चलता। किंतु हम भारतवासी अपनी प्राचीन सभ्यता को सुरक्षित रखने के कारण आज भी इन गिरी अवस्था में जीवित हैं और सिर उठा कर कहने को उद्यत हैं कि हम उन्हें ऋषियों के वंशज हैं जो वेद मंत्रों के द्रष्टा थे राम कृष्णादि का जन्म हमारे ही वंश में हुआ था। वही हमारे पूर्व पुरुष हैं।

मुंशी झिनकूलाल ने जब देखा कि उनकी बात न चलेगी तो लाचार हो सलाम कर मुंशी दुर्गाप्रसाद के यहाँ से उठे कि इसी बीच में भीतर से नौकरानी ने आकर कहा कि बहूजी ने भेट करने को बुलाया है पर मुंशी झिनकूलाल यह कहकर वहाँ से चम्पत हुए कि आज जल्दी है फिर कल या परसों आऊँगा तब मिलूँगा ।

तैंतीमवाँ पगिच्छेद



सारे वर्ष यमुनाप्रसाद का विवाह चंपारन के एक जमींदार के यहाँ हुआ । मुंशी दुर्गाप्रसाद बड़ी धूम-धाम से बरात ले गये । उनके सारे कुटुम्बी, सम्बन्धी और इष्ट-मित्र बरात में गये । वहाँ उनका स्वागत बहुत अच्छा हुआ । विवाह बड़े उत्साह के साथ हुआ । उहेज में बर्तन भाड़े गाय-भैंस घाड़े बैलगाड़ी आदि के आतिरेक्त दो हज़ार से अपर नकद मिला । मुंशी झिनकूलाल भी बरातियों में थे और देख देख कर अपने मन ही मन भेंपते रहे ।

यमुना की बहू पढ़ा-लिखी तो न थी पर इतनी सहनशील और सलज्जा थी कि यदि कोई उसे दस बात भी कहना तो सिर नीचे कर लेती । बोल को कौन कहे उसके पाँव की आइट भी किसी की कान तक न पहुँचती । आशाकारी इतनी कि घर का

सारा काम करती और सूस का उठने तक न देती । रसोइयाँ अपने हाथ पकाती और सारे कुटुम्ब की सेवा करती । गंगा की बहू उसे नित्य कोसती थी ! जितने ही लोग यमुना की बहू का मान करते उतना ही उसे जलन होता था और उसे बुरा भला कहती थी पर वह एक चुप हजाय चुप । दम नहीं मारता थी । इसी बीच में गंगा की बहू को लड़का होने को हुआ । मुंशी झिनकूलाल ने इस बात पर जोर दिया कि प्रसन्न जनाने अस्पताल में हो । मुंशीदुर्गाप्रसाद ने कहा कि मिस दास जिनको मैं अपनी लड़का के समान मानता हूँ और जो स्वयं डाक्टर हैं आ जायेंगी पर गंगा की बहू ने न माना । निदान मुंशाजी ने उसे प्रसन्न के लिए जनाना अस्पताल में भेज दिया । वहाँ लड़का जनाया गया बहू को वहाँ प्रसन्न ऊपर आने लगा, बालक भी दो दिन जीकर मर गया । वहाँ लेडी डाक्टर ने उसकी चिकित्सा करनी आरम्भ की पर बहू के चटोरपन से कुछ लाभ न हुआ । एक दिन लेडी डाक्टर उसको कोठरी में उसे देखने आँग दवा देने आई । वहाँ देखा तो दो एक दोने और एक पत्ते पर अचार लगा पड़े हैं । उसने उन्हें देखकर पूछा कि यह बाजार की चीजें कौन लाता है ? बहू चुप हो रही । लेडी डाक्टर बहुत बिगड़ी और कहने लगी कि हम तो रोग को दूर करने के लिए दवा करती हैं और तुम रोग को बढ़ाने की तरफ़ करती हो । ऐसे बदपरहेज मर्गज को कान चङ्गा कर सकता है उस दिन से उसने वहाँ से उस मजदूरनी को

जो बहू के साथ रहती थी निकाल दिया और कहा कि बाहर के आदमी को यहाँ कोई जरूरत नहीं। पेना ही है तो दिन में एक बार कोई आकर आज्ञा लेकर देख जा सकता है।

दूसरे दिन गंगाप्रसाद स्वयं देखने गये और जब लेडी डाक्टर के पास आज्ञा लेने गये तो उसने कहा कि तुम्हारी बीबी बड़ी बदपरहेज है यहाँ कारण है कि कोई दवा उसने नफा नहीं करती वह मजदूर से बाजार की चीजें मंगवा कर खाती है। कल मैं ने वहाँ दोने पड़े हुये अपनी आँख से देखा और मजदूरिन को निकाल दिया है। गंगाप्रसाद ने कहा वह बड़ी हरामजादी है। मैं उसे डाटूँगा और मैं बहू से भी कह देता हूँ कि आपकी आज्ञा का उल्लंघन न करे और जैसा पथ्य आप बतावें उसी पथ्य से रहे। यह कह कर वह आज्ञा ले बहू की कोठरी में गया। वहाँ उसने बहू से कहा देखो लेडी साहिबा जो बात कहें उसका ध्यान रखो, वह तुम्हारे मल के लिये कहती हैं। बहू ने तनक कर कहा कि लेडी साहिब कहती हैं कि दूध पियो वा बहुत हो तो साबूदाना दूध खाओ, भला इससे मैं के दिन जीऊँगी? कल मरना है तो आज ही मर जाऊँगी। बुरा हो मेरे पिता का, उन्होंने मुझे यहाँ किस कैदखाने में मरने के लिये भेजा, मैं तो समझती थी कि बाप हैं मेरी भलाई की सलाह देते हैं, तब मैं ने यहाँ आने के लिये हठ किया नहीं तो सब की यही राय थी मिस दास बुलाई जायें, वह घर की तरह दवा करतीं और कृपा से ध्यान कर के चिकित्सा करतीं। संसार में

सबके लड़के-वाले होते हैं, स्त्रियाँ सब बाँझ थोड़े ही होती हैं। ऊँचे घरों में उन्हें अच्छे से अच्छा खाना खाने को दिया जाता है, स्वादिक पुष्टियाँ दी जाती हैं, पकवान खिलाते हैं। पत्थर पड़े अंग्रेजी अस्पतालों पर और वहाँ के डाक्टरों पर जिनके यहाँ दूध के सिवा दूसरा पथ्य ही नहीं। मैं अब यहाँ एक मिनट रहना नहीं चाहती, यदि तुम मेरी जिन्दगी चाहते हो तो शीघ्र मुझे यहाँ से ले चला, नहीं मारना ही है तो जैसा तुम्हें सूझे करो। तुम्हीं से मेरा वश है दूसरे किससे कहूँ। हाथ जोड़ती हूँ कोई ऐसा ढंग निकालो कि मैं इस कैदखाने से निकलूँ नहीं बिना मारे यहाँ मर जाऊँगी। यह कह कर आँखों में आँसू डबडबा लाई और सिसक सिसक कर रोने लगी।

गंगाप्रसाद मोम की भाँति पिघल गया और जेब से कुछ मिठाइयाँ और नमकीन जो उसके वास्ते ले गया था निकाल कर कहा लो, इसे चुपके से खाओ। कोई जानने न पाय। मैं जाता हूँ तुम्हारे लें चलने की कोई तदबीर निकालूँगा। तब तक किसी न किसी भाँति यहाँ रहो। मैं कल जब आऊँगा तो तुम्हारे लिये बाजार से नमकीन और मिठाई लेना आऊँगा। इतना कह कर वह उसकी कोठरी से निकलकर लेडा डाक्टर के पास गया और बोला कि मैं ने डाट दिया है अब वह जैसा आप कहेंगी रहेगी कृपा कर ऐसी युक्ति काडिये कि शीघ्र चढ़ी हो जाये। इतना कहकर वाइसिकिल उठाई और वहाँ से चला आया।

इस प्रकार वह चार पाँच दिन तक वहाँ नित्य जाता और जेब में मिठाइयाँ भर कर ले जाता और वह को दे आता। वह वहाँ चुपचाप से उसे खा लेता और जब दूध पीने के लिये आता तब उसे दगचे में बाहर गिरा देती।

एक दिन गंगाप्रसाद जब अस्पताल से लौट कर आया तो उसकी माँ ने उसमें पूछा—भैया वह की दशा कैसा है? कुछ फुर्सत है?

गंगाप्रसाद ने आँखों में आँसू भर कर कहा कि अच्छी तो नहीं हो रही है। दिनोदिन हालत खराब होती जा रहा है। मेरा तो ख्याल है कि वह लड़ी डाक्टर को दवा से अच्छी न होगी।

मुंशिया०—बेटा वह बड़ी बदपरहेज है, बदपरहेजी करती होगी, नहीं तो लड़ी डाक्टर की चिकित्सा की तो नगर भर में बखान है। मिस दास के बाद लोग उन्हीं की प्रशंसा करते हैं। दवा उनकी बहुत अच्छी होती है और रोग की पहचान अच्छी करती हैं। दूर-दूर से लोग दवा के लिए आते हैं।

गंगा०—पर मिस दास से अधिक उनकी कोई प्रशंसा नहीं करता?

मुंशि०—इसका कारण है। वह एक तो अंगरेज, दूसरे सरकारी नौकर हैं, तनखाह पाती हैं कमतबज्जुह करती हैं और मिस दास एक तो देशी है दूसरे बड़े ध्यान से रोगी को देखती, उनकी बातें सुनती और दवा देती हैं।

गंगा०—तो अच्छा होता यदि उसे अस्पताल से घर लाया

जाता और मिस दास की दवा की जाती। वह अपने घर की-सी दवा केंगी और यहां सेवा शुश्रूषा भी अच्छी होगी, वहां अकेली कोठरी में पड़ी रहती है। सिवा अस्पताल के नौकर स्त्रियों के कोई आता जाता भी नहीं सो भी जैसे औरों को दवा दी जाती है और पथ्य मिलता है वंसी ही उसको भी दी जाती है। कुछ विशेष ध्यान नहीं दिया जाता है। यही तो कारण है कि अच्छी नहीं हो रही है।

मुंशि०—पर बेटा जब एक का इलाज हो रहा है तो दूसरे का इलाज करना ठीक नहीं। इस प्रकार अनेक चिकित्सकों से चिकित्सा कराने का फल अच्छा नहीं होता। कुछ दिन एक की दवा हो लेने दो यदि कुछ लाभ न देख पड़े तब दूसरे का इलाज करना।

गंगा०—पन्द्रह दिन तो हो गये मुझे तो कोई लाभ नहीं दिखाई पड़ता। उलटे तबीयत दिनोदिन खराब होनी जा रही है।

मुंशि०—जा कर मिस साहब से कह दो कि जरा अधिक ध्यान रखें। यह लो ५०) खर्च के लिए। कल जाना जा जमा कर देना और वही से कह देना कि फहेज से दवा करा।

गंगा०—(रुपये लेकर) बहुत अच्छा, पर मेरी समझ में नहीं आती कि अब वहाँ वह बदपरहेजी कैसे करेगी लौंडा को तो लेडी डाक्टर ने वहाँ से निकाल ही दिया जो बाजार में चीजें उसके कहने से ला देती थी, अब वहाँ है कौन जिससे कल

मँगाना होगी। मजबूर होकर वही खाना पड़ता होगा जो वहाँ की रसुइयाँ की ब्राह्मणी लाकर देती होगी।

मु शि०—अच्छा जरा अपनी ओर से और ताकीद कर देना। एक सप्ताह और देखलो फिर घर ही ले आना और मिस दास की दवा करना।

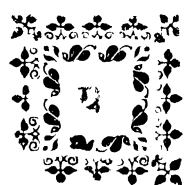
दूसरे दिन गंगाप्रसाद जनाना अस्पताल में गया और ५०) लेडी डाक्टर के पास जमा करके कहा कि यह आगामी सप्ताह के लिए उसकी खुराक आदिका व्यय है। लेडी डाक्टर ने उसे ले लिया और कहा कि मरीज की हालत सुधरी नहीं है, वह अवश्य बदपरहेजी करता है। गंगाप्रसाद ने कहा कि आप जरा और खयाल रखें और नौकरों को ताकीद कर दें कि ठीक समय पर उसकी शुश्रूषा हुआ करे। यह कह कर वह अपनी बीबी की कोठरी में गया और वहाँ दस-पाँच मिनट रह कर जो कुछ ले गया था उसे देकर चला आया।

इस प्रकार एक सप्ताह और बीत गया परबहू को हालत बिगड़ती ही गई। इसका कारण उसकी चटोरापन और गंगाप्रसाद का उसे जो चीजें मांगता चुपके से दे आना था। निदान सत्तह दिन गंगाप्रसाद ने लेडी डाक्टर से कहा कि यह सप्ताह भी बीत गया और रोगी की दशा कुछ नहीं सुधरी, अब आपकी क्या सलाह है? लेडी डाक्टर ने साफ कह दिया मुझे जान पड़ता है कि वह अब भी बदपरहेजी करती है। उसे मैंने बहुत रोका पर जहाँ तक मैं जानती हूँ कोई और आदमी है जो उसे मिठाइयाँ लाकर

देता है। गंगाप्रसाद ने आवेश में आकर कहा कि चिकित्सा तो ठीक आप करती ही नहीं, भूठ मूठ भरी गंगा बदपरहेजी को दोष लगाती हैं। इसपर लेडीडाक्टर बहुत विगड़ी और कहा कि मैं कह सकती हूँ तब फिर तुम्हीं ला मार उसे बाजार की चाजै दे जाते होगे। इस पर गंगाप्रसाद जामे से बाहर हो गया। और अपनी बहू को अपने साथ गाड़ी पर बैठाकर घर ले आया।

घर लाने पर मिस दास बुलाई गईं। उन्होंने कहा कि मरीजा का प्रसूत विगड़ गया है, बड़ी चिंतनीय अवस्था हो गई है, दवा तो मैं करती हूँ आप परहेज से इसे रखिये, ईश्वर के हाथ में है। उन्होंने यह भी कहा कि इस अवस्था में सिवा दूध वा साबूदाना के अन्न की गंध भी हानिकारक है। पर मि० दास का कहना और दवा करना ही काम था, परहेज ठीक नहीं सका। देखने में तो साबूदाना और दूध दिया जाता रहा पर वह चुपके से हाथ पैर जोड़कर गंगाप्रसाद से बाजार की पकौड़ियाँ, सेव और मिठाई मँगाकर खाती रही, अंत को मिसदास ने कहा कि रोग असाध्य हो गया। ज्वर जर्ण हो गया और अंतको यक्ष्मा का रूप धारण करने लगा। सिविलसर्जन ने कहा कि सिवा भवाली या नैनीताल लेजाने के लिये कोई उपाय नहीं है। मुंशी दुर्गा प्रसाद ने उसे गंगाप्रसाद के साथ नैनीताल भेज दिया और वहाँ रहने के लिए एक बंगला केराये पर लिया गया। पर वहाँ भी कुछ लाभ न हुआ और चार महीना बीमार रहकर वह परलोक सिधार गई।

चौंतीम माँ परिच्छेद



मुना प्रसाद को वकालत दिनो दिन अच्छी होती गई। उनकी आमदनी आठ नौ सौ रुपये माह-वर की हो गई। गंगाप्रसाद बीबी के मर जाने पर कुछ दिन तो शोकातुर रहा पर अंत को परिश्रम करना आरंभ किया और उसी साल बी०ए० पास हो गया। यमुनाप्रसाद ने गंगाप्रसाद को ७९) मासिक देकर इलाहाबाद लाहोस्टल में एल०एल० बी० पढ़ने के लिए भेज दिया। वहाँ रहकर दो वर्ष बाद गंगाप्रसाद भी एल० एल० बी० पास हो गया और बस्ती में आकर वकालत करने लगा। मुंशी दुर्गाप्रसाद का जी घर से पहले ही से उदासीन हो चला था और रायसाहब के बँगले में अपने लिए आश्रम बनवा रखा था। यमुनाप्रसाद ने सारा गृहकार्य अपने मध्ये पर लेकर अपने पिता को बोझ से हलका कर दिया। उसी वर्ष गंगाप्रसाद का दूसरा विवाह गोरखपुर जिले के एक जमींदार के यहाँ हुआ और बहू बड़ी ही सुशीला और सहनशील मिली। मुंशी दुर्गाप्रसाद ने एक दिन पं० गंगाधर जी से कहा— पण्डित जी अब तो मेरा चित्त गृहस्थी से हट गया है। बहुत दिन तक संसार के जाल में फँसा रहा। लड़के योग्य हो गए और घर का भार संभाल सकते हैं। मेरी कामना है कि अब मैं वानप्रस्थ ग्रहण करूँ।

गंगाधर—मुंशीजी इससे बढ़कर और क्या हो सकता है । राय नारायणदास भी मुझसे कहते थे कि यदि मुंशाजी वान-प्रस्थ ग्रहण करेंगे तो मैं भी वानप्रस्थाश्रम ग्रहण कर रामगढ़ के बङ्गले में ही रहूँगा ।

मुंशा—तो अच्छा है चलिए रायसाहब से भी इस विषय में सलाह ली जाय ।

थोड़ी देर में कोचवान गाड़ी तैयार कर ले आया और मुंशी दुर्गाप्रसाद पंडित गंगाधरजी को साथ लेकर रायसाहब के यहाँ गये । वहाँ गाड़ी से उतर कर उनकी कोठी में गए तो देखा रायसाहब बैठे बृहदारण्यक उपनिषद् का पाठ कर रहे हैं । रायसाहब ने दोनों सज्जनों का देख उठकर उनका स्वागत किया और आसन देकर कहा, भाई अब तो मेरी तबीयत उदासीन हो गई है, जी में आता है या तो संन्यास या वान-प्रस्थ ग्रहण करूँ । मैंने पण्डितजी से एक बार और कहा था ।

गंगाप्रसाद—मुंशी जी भी यही चाहते हैं । उनका भी चित्त उदासीन हो चला है और मुझे तो आप जानते ही हैं कि बहुत दिनों से मन में वानप्रस्थ की ठान चुका हूँ ।

मुंशी—फिर तो देर न होना चाहिए । समय आ गया है ।

रायसाहब—सुनते हैं कि स्वामी श्रद्धानंदजी शीघ्र ही गोरखपुर आनेवाले हैं अच्छा होगा कि उनके आने पर हम लोग वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करें ।

गंगाप्रसाद—इससे बढ़कर शुभ अवसर दूसरा न मिलेगा ।
बस उनके आने ही पर यह शुभ काम आरंभ हो ।

मुंशीजी आर पण्डित गंगाधरजी रायसाहब के यहाँ से उठे और गाड़ी पर सवार हो मुंशीजी के यहाँ आये । मुंशांजी ने अपने पुत्र गंगाप्रसाद को बस्ती से बुलवा भेजा और गंगाप्रसाद और यमुना प्रसाद दोनों को अपने पास बैठाकर कहा कि मैंने अब तक गृहस्थी का भार सँभाला, अब तुम लोग बड़े हुए और गृहकार्य्य सँभालने योग्य हो गए। मेरा आकांक्षा है कि तुम लोग मिलकर गृहस्थी के बोझ को उठाओ और मुझे इससे छुटकारा दो । मैं अब तुम लोगों से पृथक् रामगढ़ के जंगल में वानप्रस्था-श्रम ग्रहण कर बास करूँगा । तुम लोगों को मेरा केवल एक यही उपदेश है कि मिलकर रहना और परस्पर वैर विरोध मत करना । हिंदू सम्मिलित परिवार की प्रथा के अनुसार रहना । आजकल वर्तमान शिक्षा के प्रचार के साथ साथ हिंदू सम्मिलित परिवार की प्रथा को घोर धक्का पहुँच रहा है । विशेष कर जब से अंग्रेजी राज्य का आरंभ हुआ और जमींदारों में पट्टीदारी प्रथा का प्रचार हुआ । इसके पूर्व गाँव का एक जमींदार होता था । यदि दो-चार भाई होते थे तो उनमें जो बड़ा होता था वा अधिक योग्य होता था वह घर का मुखिया होता था उसी के नाम जमींदारी होती थी, दूसरे लोग उसके अधीनस्थ रहकर काम काज करते थे । जमींदारी का बटवारा बहुत ही कम होता था । जमींदारी एक स्वत्व समझी जाती थी और उसका क्रम

विक्रय नहीं होता था। जब से अंग्रेजों का राज्य हुआ उन लोगों ने राजकीय कर की वृद्धि करना आरंभ किया। लगान नकदी कर दिया जिससे जमींदारों और काश्तकारों में परस्पर विरोध आरंभ हुआ। देखो जहाँ जहाँ लगान बढ़ाई है वहाँ काश्तकार और जमींदार में विरोध नहीं है और विरोध हो कैसे सकता है? चाहे अन्न का भाव जो रहे जमींदार को उपज का अंश मिलता है। वहाँ काश्तकार और जमींदार में सदा मेल रहता है। न जमींदार को इजाफा की नालिश करनी पड़ती है और न सरसरी। जमींदारों को जब से रेहन और बेची करने का स्वत्व मिला देश दरिद्र होता गया। जमींदार कर्ज लेना सीख गए। नहीं तो इस देश में विरला ही कोई जमींदार कभी कर्ज लेता था। जितनी उसकी आमदनी थी उसीके अनुसार व्यय करता था। सब के घर अन्न से परिपूर्ण थे। अंग्रेजी राज्य के समय में पहले जिन लोगों ने सरकारी नौकरियाँ कीं वह बड़ी अच्छी दशा में थे। कारण यह था कि अन्न देश से बाहर को नहीं जाता था। उनको जितना वेतन मिलता था उतने में वे बड़े आनंद से अपना और अपने कुटुम्ब का पालन पोषण करते थे और कुछ अंश बच भी रहता था। पर ज्यों ज्यों अन्न विदेश को जाने लगा महुँगी पड़ती गई अब यह दशा हो गई है कि एक मनुष्य की आय बड़ी कठिनाई से दो मनुष्यों के लिए पर्याप्त हो सकती है। यही कारण है कि सम्मिलित परिवार की प्रथा दिनोदिन नष्ट होती जा रही है। इस प्रथा की रक्षा तभी हो

सकती है जब मनुष्य की आमदनी इतनी हो कि वह अपने अन्य कुटुम्बियों का पालन कर सके। केवल नौकरी करके आजकल कोई सम्मिलित परिवार क्या, अपने पुत्रों का भी पालन नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त अब जमींदारी में न पूर्वसी आमदनी है और न काश्तकार उतने आशानुतीती। आजकल जमींदारी से वही लाभ उठा सकता है जो स्वयं काश्तकारों की भाँति खेती करे। यदि ज़िमीदारी में अब कुछ निकासी रह गई है तो सीर है। इसलिए सीर का उचित प्रबंध रखना, और यदि तुमको स्वयं अवकाश न मिले तो अपने किसी कुटुम्बी को सीर के निरीक्षण का काम सौंपना ! वह भी न मिले तो किसी योग्य मनुष्य को सीर का सिरवार नियत करना और यथा समय स्वयं या कि अपने कुटुम्बी को भेजकर वहाँ की देख-रेख रखना। स्मरण रहे कि खेती के काम के लिये मासिक वेतन पर मजदूर न रखना, सदा ज्योंरा पर हलवाहे नियत करना। ज्योंरा पानेवाले हलवाहों को इस बात का ध्यान रहता है कि यदि सीर में अन्न पैदा होगा तो हमें भी मिलेगा इस विचार से वे जी लगाकर परिश्रम से काम करते हैं। एक बात का और ध्यान रखना कि पहले परती भूमि को जोतने का साहस न करना। जब से परती जोती जाने लगी पशुओं के चरने की भूमि न रह गई। यही कारण है कि पशुओं का मूल्य दिनोदिन चढ़ता जा रहा है। गडों का पालन करना और सीरों पर दो चार गायें सदा रखना। इसका कभी ध्यान न

करना कि सिरवार उनका दूध खा लेगा। यदि साल में प्रति सिर दो बछड़े जोतने योग्य निकला करेंगे तो बहुत होगा। भाइयों के साथ उदारता रखना। सम्मिलित परिवार की यही शोभा है। कुटुम्ब-पोषण से बढ़कर संसार में कोई पुण्य नहीं है। ऐसे ही गृहस्थ की प्रशंसा शास्त्रों में की गई है। ऐसा ही गृहस्थ सब आश्रमवालों से श्रेष्ठ और सबका आश्रयदाता कहा गया है। आतिथ्य सत्कार और अतिथि सेवा से मुँह न मोड़ना। गृहस्थ की शोभा अतिथि-सेवा है। अब मैं तुम लोगों को विशेष शिक्षा देना उचित नहीं समझता। दोनों शिक्षित हो, धर्माधर्म, कर्तव्याकर्तव्य को समझते हो। आज से पन्द्रहवें दिन स्वामी श्रद्धानन्द जी गोरखपुर आनेवाले हैं। उन्हीं के सामने मैं, पण्डित गंगाधरजी और रामनारायणदासजी वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करेंगे।

पंद्रहवें दिन स्वामी श्रद्धानन्दजी गोरखपुर पधारे और आर्यसमाज की ओर से उनका बड़ा स्वागत हुआ। मुंशी दुर्गाप्रसाद जी पण्डित गंगाधर और रामनारायणप्रसाद उनसे रेलवे स्टेशन पर मिले और उनको अपने साथ ले आकर रामनारायण दास की कोठी पर ठहराया। वहाँ उनसे अपना अभिप्राय वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करने का प्रकट किया। स्वामी श्रद्धानन्दजी ने तीसरे दिन उन तीनों को शुभमुहूर्त में शास्त्र का विधि के अनुसार वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करा दिया। पं० गंगाधर ने तो सपत्नीक वानप्रस्थाश्रम ग्रहण किया पर रामनारायण

प्रसाद और मंशी दुर्गाप्रसाद ने अकेले वानप्रस्थ लिया। तीनों रामगढ़ के जंगल में जहाँ पर आश्रम बनाया गया था रहने लगे। वहाँ वन्य फलाहार करते और भगवान का भजन करके अपना जीवन व्यतीत करने लगे। यमुनाप्रसाद समय समय पर उनके दर्शन के लिये जाता है और फल मूल ले जाता है और थोड़ी देर तक वहाँ रह कर पिता के दर्शन कर आता है। वहाँ तीनों साथ रह कर उपनिषद्, गीता, आरण्यक आदि ग्रन्थों का अध्ययन करते हैं। रामनारायणदास के पुत्रों की ओर से यह नित्य का प्रबन्ध है कि गोशाला से दस सेर दूध सायं प्रातः उनके लिये जाता है और बाग से जो फल निकलता है नित्य पहुँचता है। प्रायः साधु संन्यासी आश्रम पर पहुँचते रहते हैं। उनकी सेवा सुश्रूषा फल मूल से की जाती है, कभी कभी कोई संन्यासी वहाँ उपनिषद् की कथा कहता है। नगर के भगवद्भक्त लोग वहाँ श्रवण करने पहुँचते रहते हैं। नित्य सत्संग रहता है। बड़े आमंद से तीनों मित्र अपना जी भगद्भजन करते हुए व्यतीत करते हैं और नित्य यह भजन गाते हैं:—

भगवन उपजै भारत देस ।

ब्रह्मवर्चसी तपसी ब्राह्मण करें धर्म उपदेस ॥

महारथी क्षत्रिय धनुधारी शूर वीर रणधीर ।

सनमुख लड़े पाँव नहिं टाँ विंधे न शस्त्र शरीर ॥

कृषि वाणिज्य निरत विट् उपजै बाढ़े जो सन्तान ।

धेनु स्रवहि दूध की धारा बैल सुदढ़ बलवान ॥

शूद्र द्विजन के सेवक होकर शिल्प निरत नीरोग ।
 सुख संपत्ति बढ़े भारत को करे प्रजा सुख भोग ॥
 पुत्र मातु पितु आज्ञाकारी सती साध्वी नारि ।
 शस्यशालिनी पृथ्वी होवे अवसर बरसे वारि ॥
 धन जन अन्नपशू घर घर हों इति पड़े नहिं कोय ।
 सुखी स्वतंत्र प्रजा सब बिलसे धर्म राज्य जग होय ॥

Hindi Seminar Library

OSMANIA UNIVERSITY

686
 No.....



